ISSN 0972 - 1746

सी.एस.आई.आर-आई.आई.टी.आर. राजभाषा पत्रिका

विषविज्ञान संदेश

2011

अंक 18 एवं 19 वर्ष 2011

सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

संविधान में हिन्दी भाषा के विकास के लिए निर्देश

351, संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करें ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें।

आई.आई.टी.आर. राजभाषा पत्रिका

विषविज्ञान संदेश

2011

भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्)

विषविज्ञान संदेश

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

डॉ. के. सी. गुप्ता	अध्यक्ष एंव निदेशक
श्री मुकुन्द सहाय	सदस्य
श्री बी.के. मिश्रा	सदस्य
श्री विनय कुमार	सदस्य
डॉ. देवेन्द्र कुमार	सदस्य
डॉ. आर. सी, मूर्ति	सदस्य
डॉ. (श्रीमती) पूनम कक्कड़	सदस्य
श्री बी.डी. भट्टाचार्यजी	सदस्य
डॉ. अभय राज	सदस्य
श्री जगन्नाथ	सदस्य
श्री प्रदीप कुमार	सदस्य सचिव

सम्पादक मण्डल

डॉ. के.सी. गुप्ता	संरक्षक
डॉ. कृष्ण गोपाल	सम्पादक
डॉ. आर.सी. मूर्ति	सह-सम्पादक
डॉ. आर.के. उप्रेती	सदस्य
डॉ. कृष्ण गोपाल	सदस्य
डॉ. वीरेन्द्र मिश्रा	सदस्य
डॉ. डी.कार. चौधरी	सदस्य
डॉ. (श्रीमती) अन्विता शाव	सदस्य
डॉ. चन्द्र मोहन तिवारी	सदस्य
श्री गिरीश चन्द्र	सदस्य

प्रकाशक

भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

महात्मा गाँधी मार्ग, पोस्ट बाक्स - 80, लखनऊ - 226 001

पत्र व्यवहार का पता :-

निदेशक

भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

महात्मा गाँधी मार्ग, पोस्ट बाक्स-80 लखनऊ - 226 001

दूरभाष : (0522) 262822, 2621856, 2620106

फैक्स : +91-522-2628227

ई-मेल : itrc@itrcindia.org

(पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने विचार हैं)

पत्रिका के संदर्भ में समस्त जानकारी के लिए कृपया संपर्क करें :-

डॉ. कृष्ण गोपाल

संपादक

राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' एवं

प्रमुख, जलीय विषविज्ञान प्रयोगशाला

भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

महात्मा गाँधी मार्ग, पोस्ट बाक्स-80, लखनऊ - 226 001

दूरभाष : 2620107, 2620106, 2627586, 2614118, 2627389

फैक्स : +91-522-2628227

विषय सूची

संरक्षक की ओर से iii

संपादकीय iv

वैज्ञानिक लेख

ध्वनि-प्रदूषण : एक पर्यावरणीय समस्या 01
अम्बरीश कुमार वर्मा, पूनम पाण्डेय, अमित मिश्रा, ई. अल्ताफ हुसैन खान

आधुनिक परिवेश में आरोग्य हेतुः योग एक वैज्ञानिक पद्धति 07
रितेश मिश्रा एवं डॉ. आर. के. उप्रेती

जलीय जीवाणुओं में बढ़ता प्रतिजैविक प्रतिरोधः एक स्वास्थ्य एवं पर्यावरणीय संकट 17
डॉ. सत्य प्रकाश पाठक

जल का पुनः चक्रण (रिसाइक्लिंग) एवं उपयोग 23
डा. वीरेन्द्र मिश्र

भूमण्डलीय तापन एवं वायु मण्डल में गैसों का प्रभाव 27
रोमा साजवानी एवं डा. कृष्ण गोपाल

प्रदूषण से ताजमहल की सुरक्षा 37
पूनम पाण्डेय, अम्बरीश कुमार वर्मा, ए.एच. खान

वर्षा जल संग्रहण द्वारा भूगर्भ जल का संरक्षण 45
अल्ताफ हुसैन खान, अम्बरीश कुमार वर्मा

फास्ट फूड में प्रयोग होने वाले टोमैटो और चिली सॉस में पाये जाने वाले बेंजोएट संरक्षक, और 52
सुमिता दीक्षित एवं डॉ. मुकुल दास

उत्तर प्रदेश की चयनित नदियों में संकटग्रस्त मत्स्य प्रजातियों का परिस्थितिकी तन्त्र स्केलिंग एवं संरक्षण 59
विनीत दुबे 1, शैलेश कुमार मिश्र 1, ब्रज किशोर गुप्ता 1, अरविन्द द्विवेदी 1,

कागज उद्योग में लुगदी विरंजीकरण से उत्पन्न प्रदूषकों को कम करने की जैविक विधियों का आंकलन 63
डॉ. अभयराज और डॉ. रामचन्द्रा

कागज कारखानों से उत्सर्जित विषैले अपशिष्टों के सुरक्षात्मक निस्तारण हेतु शोध एवं विकास की 78
डा. राम चन्द्रा, रचना सिंह एवं अजीत कुमार चौधरी

माइक्रोवेव डाइजेशन : धात्विक प्रदूषकों के विश्लेषण हेतु एक उत्कृष्ट तकनीक 91
डा. प्रेम नारायण सक्सेना एवं डा. रमेश चन्द्र मूर्ति

कॉस्मेटिक एवं टेल्काम पाउडर : जितना सुन्दर, उतना ही हानिकारक 95
डॉ. इकबाल अहमह

क्लोरीनीकृत पेयजल : वरदान या अभिशाप 103
अमरेन्द्र धर द्विवेदी एवं कृष्ण गोपाल

संरक्षक की ओर से

डॉ. के.सी. गुप्ता

संरक्षक : राजभाषा पत्रिका एवं

निदेशक, भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

लखनऊ

इस संस्थान से प्रकाशित राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यन्त हर्ष हो रही है। हिन्दी को राष्ट्रभाषा होने का गौरव तो अवश्य प्राप्त है किन्तु सही अर्थों में इसे दैनिक कार्य और व्यवहार में लाना हम सभी का परम कर्तव्य है। इसी दिशा में विषविज्ञान सम्बंधी जानकारी एवं संस्थान के अन्य प्रयासों को प्रचार-प्रसार के लिए जनता तक पहुंचाने के लिए राजभाषा ही उत्तम माध्यम है।

जैव प्रौद्योगिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में पर्यावरण स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याओं के निदान एवं विषविज्ञान के क्षेत्र में सूचनातंत्र के समुचित उपयोग हेतु दीर्घकालीन योजनाओं का सूत्रपात हुआ है। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अंक में सम्मिलित किये गये वैज्ञानिक लेख राजभाषा हिन्दी के माध्यम से प्रकाशित करने से न केवल वैज्ञानिकों को अपने विचार, शोध क्षेत्रों एवं जानकारियों को अभिव्यक्त करने का माध्यम मिलेगा अपितु युवा वर्ग के लिए भी प्रेरणास्त्रोत बनेंगे।

वैश्विक स्तर पर हो रहे औद्योगिकरण, पर्यावरण प्रदूषण, जैवविविधता, जलवायु परिवर्तन, भूमण्डलीय ऊष्मन एवं स्वास्थ विसंगतियों को राजभाषा हिन्दी के माध्यम से जन मानस तक पहुँचाना हमारी अभिलाषा रही है। विषविज्ञान संदेश राजभाषा पत्रिका जो गत चौदह वर्ष से इस संस्थान द्वारा निरन्तर प्रकाशित की जा रही है, हमारी इसी अभिलाषा का प्रस्तुतिकरण है।

इस पत्रिका 17वाँ अंक प्रस्तुत करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। हमारा सदैव प्रयास रहा है कि इस पत्रिका के माध्यम से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, विशेषकर विषविज्ञान सम्बन्धी नवीनतम वैज्ञानिक उपलब्धियों एवं सूचनाओं के साथ-साथ जन सामान्य में पर्यावरण तथा स्वास्थ्य के प्रति वैज्ञानिक चेतना उत्पन्न हो। इसी आशय से पत्रिका के इस अंक में वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकी विदों और शोध कर्ताओं द्वारा उत्कृष्ठ लेख सम्मिलित किये गये हैं जो पाठकों का ज्ञानवर्धन करेंगे और शोध छात्रों के लिए प्रेरणादायक व सूचना स्रोत सिद्ध होंगे। पत्रिका की उत्कृष्टता एवं वैज्ञानिक स्तर के आधार पर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा विगत वर्षों में कई बार पुरस्कृत किया जा चुका है।

हमें विश्वास है कि विषविज्ञान पत्रिका का नवीतम अंक आपको उपयोगी जानकारी, शोध सामग्री तथा संस्थान के वैज्ञानिक क्रिया कलापों से परिचित करायेगा। मुझे विश्वास है कि इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री मनोरंजक, साहित्य सृजन एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उपयोगी, ज्ञानवर्धक एवं उद्देश्यपूर्ण होगी। पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े वैज्ञनिक, कर्मचारी, अधिकारी एवं संपादक मण्डल के सदस्य बधाई के पात्र हैं जिन्होंने अपने अथक प्रयास से इस अंक को प्रकाशित करने में योगदान दिया।

भविष्य में भी इसी सतत प्रयास की कल्पना के साथ शुभ कामनाओं सहित।

सम्पादकीय

डॉ. कृष्ण गोपाल
संपादक : विषविज्ञान संदेश
वैज्ञानिक-एफ
भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान,
लखनऊ

राजभाषा हिन्दी के माध्यम से विष विज्ञान के क्षेत्र में चहुंमुखी विकास के साथ सूचना तकनीकी एवं शोध आयामों में क्रांतिकारी परिवर्तनों के बीच सामंजस्य स्थापित करना अपने में एक चुनौती है। अविरत प्रयासों से विषविज्ञान के क्षेत्र में हो रही खोज, नवीनतम जानकारी एवं जन सामान्य को इस क्षेत्र में जिज्ञासा की पूर्ति हेतु हमारे संस्थान में विगत कई वर्षों से हिन्दी के माध्यम से प्रयास जारी रहे हैं। राजभाषा में प्रकाशित ''वैज्ञानिक शब्दकोश तथा प्रायोगिक विधियों का तकनीकि ज्ञान'' इन्हीं प्रयासों का एक उदाहरण है जिसके फलस्वरूप इस विषय का सम्पूर्ण बोध संभव हो सका है। कोई भी शोध कार्य जब तक जनमानस तक न पहुंचे तब तक उस कार्य की सार्थकता एवं महत्व नहीं है। आज भी हमारे देश का दुर्भाग्य है कि इस देश की बहुत बड़ी जनसंख्या अभी भी अल्पशिक्षित है और अधिकतर वैज्ञानिक उपलब्धियां अपनी राजभाषा में न होकर अन्य भाषाओं में प्रकाशित होती हैं इसलिए जनमानस तक उपलब्धियों की सूचना नहीं पहुंच पाती है।

अनुसंधान एवं आविष्कार का प्रश्न स्वतंत्र चिन्तन से जुड़े विषय हैं और चिन्तन तथा भाषा दोनों में निकट सम्बंध है। स्वतंत्र वैज्ञानिक अपना अवलोकन या मूल्यांकन प्रवृत्ति का भी विकास कर लेते हैं तथा अपने ज्ञान-विज्ञान, शोध कार्य के लिए व्यापक प्रचार-प्रसार तथा देश के विकास हेतु जनता की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए जनभाषा का सहारा लेना बहुत आवश्यक है।

हम संस्थान के निदेशक के बहुत ही आभारी हैं जिनके संरक्षण, मार्गदर्शन एवं कुशल नेतृत्व में इस पत्रिका को प्रकाशन कराने में सफल हो पाये। उन सभी वैज्ञानिकों, कर्मचारियों तथा अधिकारियों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने बिना किसी व्यवधान के पत्रिका प्रकाशन में अपना सहयोग प्रदान किया।

अंत में मैं सम्पादक मंडल के सदस्यों एवं उन सभी सहयोगियों का आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने दिन-रात अथक परिश्रम से इस पत्रिका के प्रकाशन में अपना सहयोग प्रदान किया।

सद्भावनाओं सहित।

ध्वनि-प्रदूषण : एक पर्यावरणीय समस्या

अम्बरीश कुमार वर्मा, पूनम पाण्डेय, अमित मिश्रा, ई. अल्ताफ हुसैन खान

पर्यावरण अनुवीक्षण विभाग

भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

वैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हो चुका है कि 90 डेसीबल से अधिक ध्वनि प्रदूषण की श्रेणी में रखी जा सकती है। कारखानों के तीव्र विकास यातायात के बढ़ते साधनों और मनुष्य की बढ़ती गतिविधियों ने ध्वनि प्रदूषण को जन्म दिया है। यह ध्वनि सीधे मनुष्य के शरीर को प्रभावित करती है। आदिकाल से आज तक मानव ने जहां अनेको अविष्कार एवं निर्माण कार्य किये है। वहीं दूसरी और मनुष्य ने बुद्धि एवं क्रिया शक्ति के बल पर विभिन्न तकनीकों का विकास कर पर्यावरण को असन्तुलित भी किया है। ध्वनि-पदूषण औद्योगिक प्रगति एवं आधुनिक सभ्यता का ही परिणाम है। मोटर गाड़ियों एवं रेलगाड़ियों के हार्न, कारखानों की मशीनों की आवाज, लाउडस्पीकरों की गूंजती हुई आवाजे तथा अधिक ध्वनि स्तर पर बज रहे रेडियों एवं टेलीविजन इत्यादि ध्वनि प्रदूषण के प्रमुख कारण है।

''ध्वनि प्रदूषण से होने वाली परेशानियों के बारे में नोबल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक रॉबर्ट काच ने कहा था कि भविष्य मे एक दिन ऐसा आयेगा जब मनुष्य को स्वास्थ्य के सबसे बडे शत्रु के रूप में शोर से संघर्ष करना पड़ेगा।

ध्वनि प्रदूषण का अर्थ- प्रचलित परिभाषा के अनुसार ''शोर एक आवांछित ध्वनि है।'' हर व्यक्ति अपने चारों तरफ फैले प्रदूषकों के प्रति एक सीमा तक सहनशील होता है। मानव के कानों में भी ध्वनि को साधारण तौर पर ग्रहण करने की एक सीमा होती है। इस सीमा से अधिक ध्वनि जब होने लगती है तो वह कानों को अच्छी नही लगती उसका मनुष्य के स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसे ध्वनि प्रदूषण या शोर कहते है।

ध्वनि प्रदूषण के स्त्रोत- यह प्रदूषण दो स्त्रोतों से होता है-

(क) प्राकृतिक स्त्रोत- बिजली की कड़क, बदलों की गड़गड़ाहट, तीव्र हवाएं, आधी, तूफान, ज्वालामुखी विस्फोट इत्यादि।

(ख) मानवीय स्त्रोत - ध्वनि प्रदूषण के मानव जनित स्त्रोत जैसे -

(1) वायुयानों के इंजनों से होने वाला शोर

(2) मोटर वाहनों के हार्न

(3) रेलगाडियों की आवाजें तथा उनसे होने वाला शोर

(4) कारखानों की मशीनों से होने वाला शोर

(5) लाउड स्पीकरों की आवाजें

(6) ऊँची वाल्यूम पर बज रहे रेडियों, टेलीविजनों की आवाजें आदि।

ध्वनि स्तर का मापन-

ध्वनि की मापन इकाई को डेसीबल कहते है। यह मापक शून्य से आरम्भ होता है जो की सबसे धीमी ध्वनि होती है। मानव अपने दैनिक जीवन में विभिन्न प्रकार की ध्वनि सुनता है, विभिन्न स्त्रोतो से होने वाली ध्वनि की शक्ति डेसीबल में नीचे दी गई तालिका में अंकित

है-

तालिका -1

श्रोत	ध्वनि शक्ति (डेसीबल में)
सुनने की शुरूआत	0
दिल की धड़कन	13
सामान्य फुसफुसाहट	20
एक मीटर की दूरी पर दीवाल घड़ी	30
रात के समय शान्त बस्ती व शान्त कार्यालय	50
सामान्य बातचीत	60
गलियों में शोरगुल	40-60
शान्त बस्ती मे हल्का वाहन	65
अस्पताल परिसर	74
उपनगरीय बाजार	75
व्यस्त व्यापारिक बस्तियाँ	80
कारखानों मे ध्वनि	80-102
कार हार्न	85-95
पटाखे व आतिशबाजी	95-115
हवाई अड्डे के निकट की बस्ती	95
बस टैक्सी का शोर	104
कपड़ा, तेल, स्टील, मिल इत्यादि	95-102
उतरने पर हवाई जहाल की ध्वनि	100-110
बिना साइलेन्सर की मोटर साइकिल	130
संवेदना आरम्भ	130
पीड़ा आरम्भ	140

शोर का मानव जीवन पर दुष्प्रभाव-

अधिकतर देशों में ध्वनि की अधिकतम स्वीकार्य सीमा 75 से 85 डेसीबल निर्धारित की गई है। हारवर्ड विश्वविद्यालय के नाभिकीय औषधि विज्ञान के चिकित्सालय के प्रोफेसर गाल का कहना है कि 150 डेसीबल वाली ध्वनि एक ही बार में मनुष्य को बहरा कर सकती है। 155 डेसीबल की ध्वनि त्वचा को जला सकती है। और 185 डेसीबल की ध्वनि से मृत्यु तक हो सकती है। शोर के बारे में यह कहना अधिक उचित होगा कि ''शोर मनुष्य को समय के पूर्व बुढ़ा कर देता है'' शोरग्रस्त स्थानों में लगातार अधिक समय तक रहने से श्रवण शक्ति प्रभावित होती है। 80 डेसीबल से अधिक की ध्वनि श्रवण शक्ति को स्थाई रूप से हानि पहुँचा सकती है। अर्थात मनुष्य को बहरा कर सकती है शोर से हृदय, तान्त्रिका तन्त्र एवं पाचन तन्त्र भी प्रभावित होता है। आकस्मिक तीव्र ध्वनि से शरीर यन्त्र लगभग अनियन्त्रित सा हो जाता है। शोर से त्वचा पीली पड़ सकती है आँख की पुतलियाँ फैल सकती है आहार नली में गड़बड़िया पैदा हो जाती है रक्त चाप परिवर्तित हो जाता है, हृदय गति बढ़ जाती है, माँस पेशियों मे तनाव बढ़ जाता है और शरीर की कार्यक्षमता प्रभावित होती है।

दीवाली मे पटाखों का शोर खतरनाक रोगों को पैदा करता है। अधिक तेज धमाकों से आँख, नाक और कान की बीमारियाँ हो सकती है कान की नस फट सकती है। पटाखों की चिंगारियों में अंधापन, घबराहट, मानसिक तनाव और खून का दबाव बढ़ सकता है।

आमतौर पर शोर का प्रभाव तुरन्त न होकर बाद मे किसी बीमारी के रूप में सामने आता है। छोटे बच्चे एलर्जिक दमा का शिकार हो सकते है। शोर प्रदूषण से आदमी मे चिड़चिड़ापन और झुंझलाहट पैदा हो जाती है।

ध्वनि स्तर मीटर-

ध्वनि स्तर मीटर ध्वनि दबाव को मापने के लिए तथा अधिक शोर कर रहे किसी भी स्रोत में ध्वनि प्रदूषण अध्ययन के लिए इस्तेमाल किया जाता है। यह यंत्र खासकर औद्योगिक पर्यावरण तथा विमान शोर के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

वर्तमान समय में ध्वनि स्तर मीटर के प्रदर्शन के लिए IEC-61672: 2003; इस्तेमाल हो रहा है।

ध्वनि स्तर मीटर के वर्ग -

ध्वनि स्तर मीटर की दो वर्गो मे विभाजित किया गया है।

पहले वर्ग के उपकरण को अनुसंधान तथा कानून प्रवर्तन के लिए सर्वोच्च माना गया है। इसका मानवक IEC-61672 तथा न्यूनतम आवृत्ति सीमा 60db रखी गई है। पुराने ध्वनि स्तर मीटर- 60651 तथा 60804 कि कमियों की पूरा करने के लिए IEC-61672 को डिजाईन किया गया है।

लखनऊ में ध्वनि प्रदूषण -

किसी जमाने मे राजधानी लखनऊ के सड़कों पर आसानी से सुनायी देने वाली घोड़ों की टाप आज वाहनों के प्रेशर हार्न और हूटर की आवाज मे दबकर सिसकियाँ ले रही है। बागों की नगरी अब पूरी तरह से शोर की नगरी मे बदल चुकी है। चौतरफा शोर से राज धानी वायी कराह उठे है। वाहनो मे लगे प्रेशर हार्न और हूटर की आवाज लोगों को बहरा करने मे कोई कसर नही छोड़ रही है। रही सही कसर वाहनो के इंजन पूरी कर रहे है। वाहनो की बढ़ती संख्या ने राजधानी को शोर के नगरी मे परिवर्तित कर दिया है। इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है। कि राजधानी के सभी प्रमुख श्रेत्रों मे ध्वनि प्रदूषण की तीव्रता निर्धारित मानक के स्तर को भी पार कर गयी है।

मई माह में राजधानी मे विगत चार वर्ष मे किये गये ध्वनि अन्वेक्षण कुछ इस प्रकार है।

तालिका-2

राजधानी लखनऊ के आवासीय, व्यावसायिक, और औद्योगिक क्षेत्रों मे दिन के समय का ध्वनि का स्तर (डेसीबल) में।

आवासीय क्षेत्र ध्वनि प्रदूषण का स्तर डेसीबल में

वर्ष	2007	2008	2009	2010
अलीगंज	73.5	63.4	65.2	56.1
विकास नगर	71.9	67.8	68.5	55.1
इन्दिरा नगर	74.6	75.3	76.2	68.8
गोमती नगर	68.7	64.9	65.4	63.6
मानक	55.0	-	-	-
व्यावसायिक क्षेत्र				
वर्ष	**2007**	**2008**	**2009**	**2010**
हुसैनगंज	77.7	73.5	72.1	85.7
चारबाग	78.9	75.3	71.8	66.6
आलमबाग	79.5	72.6	70.5	76.9
अमीनाबाद	76.9	73.7	70.8	67.1
चौक	73.5	74.2	69.5	68.1
मानक	65.0	-	-	-

औद्योगिक क्षेत्र				
वर्ष	2007	2008	2009	2010
आमौसी	72.1	70.4	68.2	75.3
तालकटोरा	77.8	78.5	72.5	73.0
मानक	75.0	-	-	-

तालिका-

लखनऊ के आवासीय, व्यावसायिक, और औद्योगिक क्षेत्रों मे रात के समय का ध्वनि का स्तर (डेसीबल) में।

आवासीय क्षेत्र	ध्वनि प्रदूषण का स्तर डेसीबल में			
वर्ष	2007	2008	2009	2010
अलीगंज	64.1	54.1	53.1	54.6
विकास नगर	65.8	55.8	52.8	57.9
इंन्द्रिरा नगर	71.0	61.0	61.0	61.2
गोमती नगर	61.3	59.3	68.1	67.9
मानक	45.0	-	-	-
व्यावसायिक क्षेत्र				
वर्ष	2007	2008	2009	2010
हुसैनगंज	68.4	69.8	65.6	68.9
चारबाग	74.5	70.5	69.5	64.3
आलमबाग	75.2	71.2	66.8	66.0
अमीनाबाद	60.8	59.8	55.6	66.1
चौक	69.5	59.5	60.2	53.9
मानक	55.0	-	-	-

औद्योगिक क्षेत्र				
वर्ष	2007	2008	2009	2010
आमौसी	68.5	62.8	61.8	57.1
तालकटोरा	70.9	68.9	65.8	54.4
मानक	70.0	-	-	-

अनुवेक्षण का सारांश -

अनुवेक्षण से यह स्पष्ट है कि ध्वनि प्रदूषण का स्तर हर क्षेत्र, अर्थात् आवासीय, व्यावसयिक, औद्योगिक क्षेत्रों में बढ़ गय है तथा यह ध्वनि स्तर दिन के समय ध्वनि का स्तर के मानक से ऊपर है।

विगत चार वर्षो में अनुवेक्षण में आवासीय क्षेत्र में दिन के समय न्यूनतम स्तर 55.1 डेसीबल सन् 2010 में विकास नगर क्षेत्र में रिकार्ड किया गया जो कि दिन के समय आवासीय क्षेत्र के मानक (55 डेसीबल) से 0.1 डेसीबल अधिक था और अधिकतम स्तर जो कि सन् 2007 में इन्दिरा नगर क्षेत्र में 76.2 डेसीबल रिकार्ड किया गया यह स्तर मानक से 21.2 डेसीबल अधिक था।

व्यावसायिक क्षेत्र में न्यूनतम स्तर सन् 2010 में अमीनाबाद क्षेत्र में 67.1 डेसीबल रिकार्ड किया गया जो की मानक (65) डेसीबल (व्यावसायिक क्षेत्र में दिन में समय का) से 2.1 डेसीबल अधिक था और अधिकतम स्तर सन् 2010 में हुसैनगंज क्षेत्र में 85.7 डेसीबल रिकार्ड किया गया जो कि मानक से 20.7 डेसीबल अधिक था।

औद्योगिक क्षेत्र में दिन के समय न्यूनतम स्तर सन् 2009 में आमौसी क्षेत्र में 68.2 डेसीबल रिकार्ड किया गया जो कि मानक (75 डेसीबल) (डेसीबल क्षेत्र

में दिन के समय का) से 7.2 डेसीबल कम था और अधिकतम स्तर 78.5 डेसीबल सन् 2008 में तालकटोरा क्षेत्र में रिकार्ड किया गया।

दिल्ली के कुछ आवासीयें श्रेत्रों में किये गये ध्वनि अनुवेक्षण कुछ इस प्रकार है-

दिन के समय का ध्वनि स्तर

आवासीय क्षेत्र	ध्वनि प्रदूषण का स्तर डेसीबल में	
वर्ष	2007	2008
गोकुलपुरी	68.5	69.0
तारंग आपटमेट	65.6	66.5
एफ. ब्लाक, नौरोजी नगर	66.4	68.0
सी. एस. आई. आर अपार्टमेन्ट, आक्षम चौक	70.1	70.1
सुन्दर अपार्टमेंट	67.3	67.0
मानक	55.0	-

रात के समय का ध्वनि स्तर

आवासीय क्षेत्र	ध्वनि प्रदूषण का स्तर डेसीबल में	
वर्ष	2007	2008
गोकुलपुरी	66.5	67.1
तारंग अपार्टमेंट	65.5	63.6
एफ ब्लाक नौरोनी नगर	66.7	66.7
सी.एस. आई. आर अपार्टमेंट , आश्रम चौक	69.3	70.5
सुन्दर आपर्टमेंट	63.4	62.2
मानक	75.0	-

तालिकाओं में दिये गये आकडों से स्पष्ट होता है कि ध्वनि प्रदूषण का स्तर हर क्षेत्र में जैसे कि आवासीय, व्यवसायिक तथा औद्योगिक क्षेत्रों में मानकों से अधिक है। विभिन्न सर्वेक्षणों के अनुसार यह स्पष्ट है कि कोई भी शहर इस प्रदूषण से अछूता नही है चाहे यह बडा शहर हो या छोटा। आवश्यकता इस बात की है कि ध्वनि प्रदूषण के इस राक्षस को यथाशीघ्र नियंत्रण में लिया जाये इससे पहले कि यह राक्षस अपने विकराल रूप में आकर सारी जनसंख्या के ऊपर अपनी विनाशकारी लीला द्वारा विभिन्न प्रकार की बीमारियों को जन्म दे सके।

ध्वनि के संबंध मे परिवेशी गुणवत्ता मानक

एरिया कोड	क्षेत्र की श्रेणी	(BCA) में सीमाएं	
		दिन के समय	रात के समय
(क)	औद्योगिक क्षेत्र	75	70
(ख)	व्यावसायिक क्षेत्र	65	55
(ग)	आवासीय क्षेत्र	55	45
(घ)	मौन क्षेत्र	50	40

नोट :

1) दिन के समय का मतलब प्रातः 600 से 10:00 बजे रात तक
2) रात के समय का मतलब रात 10:00 बजे से प्रातः 6:00 बजे तक

ध्वनि प्रदूषण रोकने के उपाय -

ध्वनि प्रदूषण को नियन्त्रण करना कोई सरल कार्य नही है इसके लिये हमे अपनी जीवन शैली को बदलना होगा, यद्यपि ध्वनि प्रदूषण को समूल समाप्त नही किया जा सकता है, परन्तु इसे कुछ सीमा तक

नियन्त्रित अवश्य किया जा सकता है। यह नियन्त्रण निम्नलिखित उपाय अपनाकर सम्भव है।

1. निर्धारित सीमा से अधिक शोर उत्पन्न करने वाली पुरानी मोटरों, द्रश्कों, एवं अन्य वाहनों को शहर के प्रमुख मार्गो एवं आवासीय क्षेत्रों मे प्रवेश पर प्रतिबंध लगाकर।
2. मोटरों के इंजनों एवं अन्य ध्वनि उत्पन्न करने वाले भागों की संरचना में आवश्यक सुधार कर उसे इस प्रकार बनाया जाय जिससे शोर कम हो।
3. मोटरों मे ऐसे हॉर्न लगाये जाये जिनसे कम से कम शोर हो।
4. कल-कारखानों को शहरों एवं आवासीय क्षेत्रों के बाहर स्थापित किया जाये।
5. कल- कारखानों एवं उद्योगों मे मशीनों का रख-रखाव बिल्कुल ठीक रखा जाए, इससे शोर को कम किया जा सकता है।
6. कल- कारखानों एवं उद्योगों में शोर को कम करने के लिए ऐसी तकनीक का प्रयोग किया जाये जिससे शोर कम हो सके।
7. ऐसे उद्योग जिन मे शोर को कम नही किया जा सकता है उनमें श्रमिकों को निःशुल्क कर्ण-प्लग तथा कर्णबन्दक प्रदान किया जाए।
8. बैण्ड - बाजो, लाउड-स्पीकरों इत्यादि को प्रतिबन्धित किया जाये।
9. सड़कों के किनारे हरे पेड़-पोधों की चौडी पट्टी लगाई जाये जिससे कि तीव्रगति से निकलने वाली ध्वनि का शोषण होता रहे।
10. जन साधारण को ध्वनि प्रदूषण से होने वाले कुप्रभावों तथा उनसे बचने के बारे में उपाये की जानकारी दी जाए। इसके लिए सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थानों की सहायता ली जा सकती है।
11. ध्वनि प्रदूषण से होने वाले कुप्रभाव को प्रारम्भिक पाठ्यक्रमों मे शामिल किया जाये।
12. जल प्रदूषण अधिनियम, वायु प्रदूषण अधिनियम की तरह ध्वनि प्रदूषण अधिनियम बनाया जाये।

उपरोक्त सुधारों को अमल मे लाकर ध्वनि प्रदूषण को कुछ सीमा तक कम किया जा सकता है जिससे मनुष्य जीवन सुखमय हो सके। औद्योगिकी करण तथा जनसंख्या का विस्तार सुनियोजित करके इस त्रासदी से कुछ हद तक राहत मिल सकती है।

आधुनिक परिवेश में आरोग्य हेतुः योग एक वैज्ञानिक पद्धति

रितेश मिश्रा एवं डॉ. आर. के. उप्रेती
बायोमेम्ब्रेन टाक्सिकालोजी, आई.आई.टी.आर, लखनऊ

योगेन चित्तस्य पदेन वाचा मलं शारीरस्य च वैद्यकेन।
योऽपाकरोत्त प्रवंर मुनीनां पतंजलिंप्राजलिरानतोऽस्मि।।

आ बहु पु—षाकार शंख चक्रासि धारिणम।
सहस्र शिरसं भवेत प्रणमामि पतंजलिम्।।

अर्थात् चित्त शुद्धि के लिए योग, वाणी-शुद्धि के लिए व्याकरण और शरीर शुद्धि के लिए वैद्यकशास्त्र देने वाले मुनि श्रेष्ठ पंतजलि को प्रणाम। जिनकी ऊर्ध्व देह मनुष्याकार है, जिन्होंने हाथ में शंख और चक्र धारण की है, उन सहस्रशीर्ष आदिशेषवतार पंतजलि को प्रणाम।

योग प्रारंभिक, पारंपरिक, शारीरिक और मानसिक शास्त्रों को सूचित करता है। संस्कृत में योग शब्द के कई अर्थ है जैसे-'संचालित करना', 'असंबन्ध करना' या 'सम्मिलित करना'। पंतजलि व्यापक रूप से औपचारिक योग दर्शन के संस्थापक माने जाते है। योग का मूल प्रयोजन मनुष्य को अंतवर्ती बनाना है। विशाल जगत और नितांत एकान्त के अन्तर्गत यदि अपना अंतः करण स्वयं को सम्पूर्ण स्वरूप स्वीकार कर ले, यही योग साधना का चरम है। लघुतम में विराट के दर्शन का सिद्धान्त विज्ञान ने शरीर संरचना की इकाई कोशिका के विस्तृत अध्ययन से सिद्ध कर दिया है, कि प्रत्येक कोशिका स्वयं में सम्पूर्ण है। योग के मुख्यतः 6 प्रकार माने गये है- राजयोग, हठयोग, लययोग, ज्ञान योग, कर्म योग और भक्ति योग। सामान्यतः राजयोग बुद्धि के नियंत्रण हेतु एक प्रणाली है जो कि आठ खंडों में विभक्त है-यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। इन्हें अष्टाँग योग भी कहते है। वस्तुतः इनमें से प्रत्याहार को इन सबका एक समूहवाची नाम कह सकते है। अष्टाँग योग की विभक्तियों के अन्तर्गत 'यम' के पाँच परिहार अहिंसा, झूठ न बोलना, गैर लोभ और गैर विषयाशक्ति एवं गैर स्वामिगत अपनाने से आनन्द अनुभव किया जा सकता है। इसी प्रकार 'नियम' की पाँच मुख्य क्रियाएँ-पवित्रता, संतुष्टि, तपस्या, अध्ययन और ईश्वर को आत्म समर्पण मानी गयी है। 'आसन' का मूलार्थक अर्थ है बैठने का आसन, 'प्राणायाम' अर्थात प्राण आयाम। प्राण का अर्थ है शरीर के अन्दर नाभि, हृदय और मस्तिष्क आदि में स्थित वायु जो सभी अंगों को चलायमान रखती है। आयाम के तीन अर्थ है प्रथम-दिशा, द्वितीय-योगानुसार नियंत्रण या रोकना, तृतीय-विस्तार होना। जो प्राणों को ठीक- ठीक गति और आयाम दे, यही प्राणायाम है। प्राणायाम करते समय तीन क्रियाएं करते है। 1. पूरक 2. कुम्भक 3. रेचक।

1. पूरक-अर्थात नियंत्रित गति में श्वांस अन्दर लेने की क्रिया।
2. कुम्भक-अन्दर ली हुई श्वाँस को क्षमतानुसार रोककर रखने की क्रिया।
3. रेचक-अन्दर ली हुई श्वाँस को नियंत्रित गति से छोड़ने की क्रिया। हमारे शरीर में 72 हजार नाड़ियां है, इनमें तीन विशेषतम है।

क) इणा या चन्द्रनाड़ी-शरीर के बाऐं भाग का नियंत्रण करती है। यह विचारों का भी नियंत्रण करती है।

ख) पिंगला या सूर्यनाड़ी- शरीर के दाएँ भाग का

नियंत्रण करती है। यह प्राण शक्ति का नियंत्रण करती है।

ग) सुषुम्ना या मध्य नाड़ी-मेरूदंड के मध्य से होकर मूलाधार तक जाती है। यह प्रकाश तथा ज्ञान देती है।

प्राणायाम का उद्देश्य इणा तथा पिंगला में ठीक सन्तुलन स्थापित करके सुषुम्ना के द्वारा प्रकाश तथा ज्ञान प्राप्त करने में सहायता देना है। शरीर की सभी कोशिकाएं इन तीन नाड़ियों में किसी न किसी रूप से संबंधित है।

'प्रत्याहार'-योग की क्रियाओं में जब व्यक्ति अपने को बाहय चिंतन और बाहय सुख से मुक्त करता है तब उसकी अंतश्चेष्टाएँ जागृत होती है। चेतना की उस जाग्रत अवस्था को 'प्रत्याहार' कहा जाता है। वैज्ञानिक मतानुसार प्रत्याहार की अवस्था में मस्तिष्क के सेरिब्रल कॉर्टेक्स, थेलेमस एवं सब-कार्टिकल रिदम जेनेरेटर के मध्य सामंजस्य स्थापित हो जाता है, तब मस्तिष्क अत्यन्त सक्रिय हो जाता है। निरंतर प्रयास से शनैः शनैः यह स्थिति शारीरिक, मानसिक विक्षोभों से मुक्त होने पर ही संभव होती है। प्रत्याहार के अभ्यास से उच्चतर चेतना का विकास हो जाता है। अंतवर्ती स्थिति में चेतन को सक्रिय बनाने और बोध प्राप्त करने का सरल अभ्यास शिथिलीकरण साधना या योग निद्रा के रूप में किया जाता है। शिथिलीकरण विश्रामावस्था है। विश्राम से व्यक्ति अपनी थकान मिटाता है। निद्रा विश्राम का एक स्वरूप है। योगाभ्यास की योग निद्रा द्वारा वही प्रयोजन कम समय में पूरा किया जा सकता है। योग निद्रा विधि से उच्च रक्तचाप मे कमी होती है। इसके अभ्यास से स्नायु प्रणाली एवं अंतः स्रावी ग्रंथियों पर पड़ने वाले प्रभावों को सन्तुलित एवं नियंत्रित करने की क्षमता बढ़ती है। शिथिलीकरण विधियों से कई शारीरिक एवं मानसिक रोगों का निदान संभव है। 'धारणा' के अन्तर्गत एकाग्रता अथवा एक ही लक्ष्य पर ध्यान लगाना आता है। इसी प्रकार 'ध्यान' का मूलसार है ध्यान की वस्तु की प्रकृति का गहन चिन्तन, और 'समाधि ' का तात्पर्य है विमुक्ति अर्थात ध्यान की वस्तु को चैतन्य के साथ विलीन करना।

योग करने की क्रियाओं व आसनों को योगासन कहते है। ऋग्वेद मे कई स्थानों पर यौगिक क्रियाओं के विषय मे उल्लेख मिलता है।

योगासनों के गुण और लाभ-

1) योगासनों का परम गुण है कि वे सहज, साध्य और सर्व सुलभ है। योगासन ऐसी व्यायाम पद्धति है जिसमे न तो कुछ विशेष व्यय होता है और न ही साधन-सामग्री की आवश्यकता होती है।

2) योगासन अमीर-गरीब, बूढ़े-जवान, सबल-निर्बल, स्त्री-पुरुष सभी कर सकते है।

3) आसनों में मांसपेशियों को तानने, सिकोड़ने और ऐंठने वाली क्रियाएँ करी जाती है जिनके साथ-साथ तनाव को दूर करने वाली प्रक्रियाएँ भी सम्मिलित होती है, जिससे शरीर की थकान मिट जाती है।

4) योगासनों से भीतरी ग्रंथियाँ अपना काम अच्छी तरह कर सकती है और युवावस्था बनाए रखने में सहायक होती है।

5) योगासन रीढ़ की हड्डी को लचीला बनाते है और व्यय हुई नाड़ी शक्ति की पूर्ति करते है।

(6) योगासन पेशियों को शक्ति प्रदान करते है। इससे मोटापा घटता है तथा दुबला-पतला

व्यक्ति भी तंदरूस्त रहता है।

7) योगासन स्त्रियों की शरीर रचना के लिए विशेष अनुकूल है। वे उनमें सुन्दरता, सम्यक विकास आदि गुण उत्पन्न करते है।

8) योगासनों से बुद्धि विकसित होती है और धारणा शक्ति को स्फूर्ति एवं ताजगी मिलती है। ऊपर उठने वाली प्रवृतियां जाग्रत होती है और आत्म सुधार के प्रयत्न बढ़ जाते है।

9) योगासन श्वास क्रिया का नियमन करते है। हृदय और फेफडों को बल देते है एवं रक्त को शुद्ध करते है।

10) आसनों से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। आसनों का निरन्तर अभ्यास करने वालो को चश्में की आवश्यकता नही पड़ती।

11) योगासनों द्वारा पेट की भीतरी सफाई के साथ पाचन अंग पुष्ट होते है और पाचन-प्रणाली में गड़बड़िया उत्पन्न नही होती है।

प्रारंभिक सावधानियाँ :-

योगासनों को सीखना प्रारंभ करने से पूर्व कुछ महत्वूपर्ण सावधानियों पर ध्यान देना आवश्यक है। योगासन प्रभावकारी तथा लाभदायक तभी हो सकते है जब उनको उचित ढंग से किया जाये।

(1) योगासन शौच क्रिया एवं स्नान क्रिया से निवृत्त होने के बाद ही किया जाना चाहिए तथा एक घंटे के पश्चात स्नान करना चाहिए।

(2) योगासन खुले एंव हवादार स्थान पर करना चाहिए, ताकि स्वांस के साथ आप स्वतन्त्र रूप से शुद्ध वायु ले सकें।

(3) योगासन समतल भूमि पर आसन बिछाकर करना चाहिए एवं मौसम के अनुसार ढीले वस्त्र पहनना चाहिए।

(4) गर्भावस्था, बुखार, गंभीर रोग आदि के दौरान आसन नही करना चाहिए।

(5) आसन के प्रारंभ और अंत मे विश्राम करना चाहिए।

(6) यदि आसन को करने के दौरान किसी अंग मे अत्यधिक पीड़ा या कठिनाई हो रही है तो किसी योग चिकित्सक से सलाह लेकर ही आसन करना चाहिए।

योग, अभ्यास की ऐसी श्रंखला है, जिसके द्वारा हम अपने स्वास्थ्य को बेहतर बना सकते है। किसी भी आयु के व्यक्ति योग का अभ्यास कर सकते है। यदि गतिशीलता की कोई समस्या है तो योगाभ्यास कुर्सी पर भी कर सकते है। कार्यालय जाने वाले लोग अपने तनाव को दूर करने के लिए बहुत से योग कर सकते है। खिलाड़ी अपनी गतिविधियों को योग से मजबूत कर सकते है।

योग आसनों के प्रमुख प्रकार निम्न है (चित्र.1)

1. पदमासनः- इस आसन से शरीर के निचले भाग तथा अमाशय में फैले हुए स्नायु-जाल को अतिरिक्त रक्त मिलता है। जठराग्नि तीव्र होती है और भूख बढ़ती है। महिलाओं एवं दुबले-पतले व्यक्तियों के लिए यह आसन उपयुक्त है। यह आसन कमल जैसा प्रतीत होता है इसलिए इस आसन को पदमासन या कमलासन कहते है। साइटिका अथवा रीढ़ के निचले भाग के आस-पास किसी भी प्रकार गड़बड़ी से पीड़ित व्यक्ति को योग्य प्रशिक्षक की अनुमति के बगैर इस आसन को नही करना चाहिए। इस आसन को करने में

टांगो को सामने की ओर फैलाकर बैठे, एक पैर को मोड़ें तथा उसके पंजे को दूसरी जाँघ के ऊपर इस प्रकार रखें कि एड़ी कूल्हें की हड्डी को स्पर्श करे, पैर का तलवा ऊपर की ओर रखना चाहिए। फिर दूसरा पैर मोडें और उसका पंजा दूसरी जांघ के ऊपर की ओर रखे। ध्यान मुद्रा का प्रयोग कर सकते है, अपनी आंखे बंद, गर्दन सीधी और सिर कुछ ऊपर की ओर रखना चाहिए। कंधे ढीले और शरीर को एक दम ढीला छोड़ देना चाहिए। इस आसन को करने से भूख बढ़ती है अंतस्रावी ग्रंथियों की कार्य क्षमता बढ़ती है दमा अनिंद्रा, हिस्टिरिया जैसे रोगों मे आराम मिलता है।

2. भुजंगासनः- इस आसन में शरीर की आकृति फन उठाए भुजंग अर्थात सर्प जैसी बनती है। इस आसन को करते समय अचानक पीछे की तरफ बहुत अधिक नही झुकना चाहिए। पेट मे कोई रोग या पीठ में दर्द हो तो इस आसन को योग गुरू के परामर्श से ही करना चाहिए। इस आसन को करने से रीढ़ की हड्डी सशक्त होती है और पीठ में लचीलापन आता है। यह आसन फेफड़ों की शुद्धि के लिए बहुत उपयोगी होता है। इस आसन मे पिताशय की क्रियाशीलता बढ़ती है और पाचन प्रणाली की कोमल पेशियां मजबूत बनती है। कब्ज दूर होता है।

3. हलासन :- इस आसन में शरीर का आकार हल जैसा बनता है। हलासन शरीर को लचीला बनाने के लिए महत्वपूर्ण है। इससे रीढ़ हमेशा सही रहती है। रीढ़ संबन्धी गंभीर रोग या गले में कोई गंभीर रोग होने की स्थिति में यह आसन नही करना चाहिए। आसन करते वक्त पैर तने हुए तथा घुटने सीधे रखने चाहिए। हलासन से मेरूदंड संबन्धी नाडियों के स्वास्थ्य की रक्षा होती है जिससे वृद्धावस्था के लक्षण जल्दी नही आते है। हलासन के नियमित अभ्यास से अजीर्ण कब्ज, थायरॉइड का अल्प विकास, अंगविकार, अत्यधिक दमा एवं रक्त विकार आदि दूर हो जाते है।

4. मयूरासनः- इस आसन मे शरीर की आकृति मोर की तरह दिखाई देती है। इस आसन को बैठकर सावधानी पूर्वक करना चाहिए। इस आसन से वक्षस्थल, फेफड़े, पसलियाँ और प्लीहा को शक्ति प्रदान होती है। इस आसन से क्लोम ग्रन्थि पर दबाव पड़ता है जिससे मधुमेह रोगियों को लाभ मिलता है। यह आसन गर्दन और मेरूदंड के लिए लाभदायक है।

5. सूर्य नमस्कारः- सभी आसनों का सार है सूर्य नमस्कार। इस आसन मे लगभग सभी आसनों का समावेश होता है। इसके अभ्यास से मनुष्य का शरीर रोग रहित और स्वस्थ होकर तेजस्वी हो जाता है। इस आसन मे बारह स्थितियां होती है, जो हमारे शरीर की विकृतियों को दूर रखते है। बारह स्थितियां क्रम से इस प्रकार है 1. प्रणामासनं 2. हस्त उत्तानासनं 3. पादहस्तासन 4. अश्वसचलनासनं 5. दण्डासनं 6. साष्ठांग नमस्कारासनं 7. भुजंगासनं 8. पर्वतासनं 9. अश्वसंचलनासनं 10. पादहस्तासनं 11. हस्तउत्तानासन 11. प्रणामासनं।

सूर्य नमस्कार के द्वारा त्वचा सम्बन्धी रोगों को समाप्त किया जा सकता है। यह पूरी प्रक्रिया अत्याधिक लाभप्रद होती है। इस आसन के द्वारा गर्दन, फेफड़े तथा पसलियों की मांसपेशियां सशक्त होती है। इस आसन के अभ्यास से न केवल उदर रोग साथ ही साथ कब्ज एवं गैस भी समाप्त हो जाती है। इस आसन के अभ्यास के द्वारा हमारे शरीर की छोटी-बड़ी सभी नस-नाड़ियां क्रियाशील हो जाती हैं।

6. त्रिकोणासनः- इस आसन को करते समय दोनों पैरों के बीच लगभग तीन फुट का अन्तर रखते हुए सीधे खड़े होना चाहिए। दोनों हाथ कंधों के समानान्तर पार्श्व भाग में खोल कर रखना चाहिए। श्वास अन्दर भरते हुए बायें हाथ को सामने लाते हुए बाये पंजे के पास भूमि पर टिकाना अथवा हाथ को एड़ी के पास लगाना चाहिए। तत्पश्चात हाथ को ऊपर की ओर उठाकर गर्दन को दांई ओर घुमाते हुए दांये हाथ की ओर देखना चाहिए। फिर श्वांस छोड़ते हुए पूर्व स्थिति मे आकर इसी आसन का अभ्यास दूसरी ओर से भी करना चाहिए। इस आसन को करने से पाश्रर्व भाग की चर्बी कम होती है। एवं मांसपेशियों मजबूत होने के साथ छाती का विकास भी होता है।

7. सुखासनः- सुखासन से पैरों का रक्त संचार कम होने लगता है और अतिरिक्त रक्त अन्य अंगों में संचालित होने लगता है जिससे अंगों में क्रियाशीलता बढ़ जाती है। पैरों मे किसी प्रकार का कष्ट होने पर इस आसन को योग गुरू के परामर्श से करना चाहिए।

8. पवन मुक्तासनः- इस आसन में शरीर की दूषित वायु मुक्त हो जाती है, इस कारण इसे पवन मुक्तासन कहा जाता है। यदि कमर या पेट मे अधिक दर्द हो तो यह आसन योग शिक्षक की अनुमति के बिना नही करना चाहिए। सामान्य दर्द हो तो सुविधानुसार सिर उठाकर घुटने से नासिका न लगाकर केवल पैरों को दबाकर छाती से स्पर्श कराना चाहिए। यह आसन उदरगत वायु विकार के लिए बहुत उत्तम है। स्त्री रोगों के लिए लाभ प्रद है। इस आसन के द्वारा साइटिका एवं कमर के दर्द मे पर्याप्त लाभ मिलता है।

9. वक्रासनः- वक्रासन बैठकर करने वाले आसनों के अन्तर्गत आता है। वक्र संस्कृत का शब्द है जिसका अर्थ होता है टेढ़ा, लेकिन इस आसन के करने से मेरूदंड सीधा होता है इस आसन के अभ्यास से लीवर, किडनी एवं पेनक्रियाज प्रभावित होते है, जिससे ये सभी अंग निरोगी रहते है।

10. शीर्षासनः- सिर के बल किए जाने की वजह से इसे शीर्षासन कहते है। इससे पाचनतंत्र को लाभ मिलता है। इससे मस्तिष्क का रक्त संचार बढ़ता है जिससे की स्मरण शक्ति पुष्ट होती है। हिस्टिरिया, हर्निया, कब्ज आदि रोग इस आसन से दूर हो जाते है। असमय बालों का झडना एवं सफेद होना दूर करता है।

11. मत्स्यासनः- मत्स्य का अर्थ है मछली। इस आसन मे शरीर का आकार मछली जैसा बनता है अतः यह मत्स्यासन कहलाता है। यह आसन छाती को चौड़ाकर उसे स्वस्थ बनाये रखने मे सक्षम है। इससे आंखों की रोशनी बढ़ती है एवं गला साफ रहता है।

12. नौकासनः- इस आसन की अंतिम अवस्था मे शरीर की आकृति नौका के समान दिखाई देती है, इसी कारण इसे नौकासन कहते है। यह आसन पीठ के बल लेटकर किया जाता है। इससे पाचन क्रिया एवं छोटी-बड़ी आंत मे लाभ मिलता है। अंगूठे से अंगुलियों तक खिचाव होने के कारण शुद्ध रक्त तीव्र गति से प्रवाहित होता है जिससे काया निरोगी बनी रहती है।

13. बज्रासनः- यह ध्यानात्मक आसन है। भोजन के बाद किया जाने वाला यह एक मात्र आसन है। इस आसन को करने से अपच, गैस, कब्ज की निवृत्ति होती है। भोजन के बाद 5 से 15 मिनट तक करने से भोजन का पाचन ठीक से होता है। घुटनों की पीड़ा भी दूर करता है।

प्राणायाम के प्रकारः

1. भस्त्रिका प्राणायामः- सुखासन या बज्रासन में बैठना चाहिए। नाक से लम्बी सांस फेफड़ों में भर कर,

फिर लंबी सांस छोड़ना चाहिए। सांस लेते और छोड़ते समय एक सा दबाव बना रहना चाहिए। इस प्राणायाम को करने से हृदय सशक्त रहता है। मस्तिष्क संबंधी बीमारियां दूर हो जाती है।

2. कपालभाती प्राणायामः- सुखासन या अन्य किसी सुविधाजनक आसन मे बैठना चाहिए। सांस को बाहर फेंकते समय पेट को अन्दर की ओर धकेलना चाहिए। इस क्रिया में सांस को छोड़ते रहना है। दो सांसों के बीच अपने आप सांस अन्दर चली जाती है। कपाल, मस्तिष्क को कहते हैं और इस प्राणायाम को लगातार करने से चेहरे का लावण्य बढ़ता है। इस प्राणायाम से बालों की, चेहरे की और थायराइड संबंधी शिकायते भी दूर हो जाती हैं। कब्ज और गैस जैसी पेट की समस्या दूर हो जाती है। जिन लोगों को अल्सर या डायबटीज की शिकायत हो तो इस प्राणायाम का अभ्यास योग शिक्षक की अनुमति के बगैर नहीं करना चाहिए।

3. बाहय प्राणायामः- सुखासन या वज्रासन में बैठकर इस आसन को करना चाहिए। सांस को पूरी तरह निकालने के बाद सांस बाहर की ओर रोकने के बाद 3- बन्ध लगाना चाहिए। 1. जालंधर बन्ध-गले को पूरा सिकोड़कर ठोड़ी को छाती से सटाकर रखना चाहिए। 2. उड्डायान बन्ध-पेट को पूरी तरह अन्दर पीठ की तरफ खींचना चाहिए। 3. मूलबन्ध-गुदा को पूरी तरह ऊपर की तरफ खींचना चाहिए। इस प्राणायाम के द्वारा कब्ज, गैस्ट्रिक जैसे पेट की सभी बीमारियां मिट जाती है।

4. अनुलोम विलोम प्राणायामः- सुखासन या किसी आरामदायक आसन में बैठकर यह प्राणायाम करना चाहिए। शुरूआत और अन्त हमेशा बाए नथुने (नोस्ट्रील) से करना चाहिए। नाक का दांया छिद्र बन्द करके बाएं से लम्बी सांस लेने के बाद, बाएं छिद्र को बन्द करके दांए से लंबी सांस छोड़नी चाहिए। तत्पश्चात दांए से लम्बी सांस लेकर बांए से छोड़नी चाहिए। इस क्रिया को 10-15 मिनट तक दोहराना चाहिए। इस प्राणायाम को करने से हृदय के ब्लॉकेज खुल जाते है। डायबटीस, आर्थराटीस आदि बीमारियां भी दूर हो जाती है। चर्म समस्याओं के लिए भी यह काफी कारगर होता है।

5. भ्रामरी प्राणायामः- सुखासन में बैठकर दोनों अंगूठो से कानों को पूरी तरह बन्द करके दो अंगुलियों को माथे पर एवं छः अंगुलियों से आंख बन्द करके रखना चाहिए और लंबी सांस लेकर गले से भँवरे जैसा स्वर निकालना चाहिए। इस प्राणायाम के द्वारा मायग्रेन, डीप्रेशन और मस्तिष्क सम्बन्धी बीमारियां दूर हो जाती है।

6. उज्जायी प्राणायामः- सुखासन या वज्रासन में बैठना चाहिए। इस प्राणायाम में गले को सिकोडकर सांस को अन्दर लेना चाहिए। इस प्राणायाम से थायराइड की समस्या कम हो जाती है। इन सभी प्राणायामों को करने से पहले किसी योग्य योगशिक्षक से परामर्श अवश्य कर लेना चाहिए।

प्रारम्भकर्ताओं (बिगनर्स) के लिए योगः- योग बिगनर्स के लिए बहुत सुगम एवं उपयोगी है। शरीर मे बहुत से जोड़ होते हैं, जिन्हें गतिशीलता की आवश्यकता होती है। योग एवं प्राणायाम के द्वारा इन जोड़ों को आवश्यक गति प्रदान की जा सकती है। हमारी दिनचर्या में कुछ जोड़ तो बहुत उपयोग होते है और कुछ बहुत कम। जिसके कारण आगे चलकर शरीर मे बहुत सी परेशानियां आ जाती है। जोड़ों को

स्वस्थ रखने के लिए उनकी गतिशीलता अतिआवश्यक होती है। ये (जोड़) शरीर को योग के लिए तैयार करने मे बहुत उपयोगी होते है। रोज कम से कम 30 से 45 मिनट तक योग का अभ्यास करना चाहिए योग के अभ्यास हेतु प्रातः काल सर्वोत्तम माना गया है। अभ्यास करते समय पेट खाली रखना चाहिए। योगाभ्यास करने के एक घंटे बाद ही कोई जूस या अन्य द्रव पदार्थ, स्नान तथा भोजन करना उपयुक्त है।

बिगनर्स के लिए योगासनः- योग व्यायाम से बिल्कुल अलग है इसमें कोई गतिशीलक्षण नही होता है। योग के आसन बहुत स्थिर और धीमी गति के होते है। योग आराम पहुंचाने के साथ ही तनाव को भी दूर करता है। योग करते समय ऊर्जा का उपयोग होने के साथ-साथ चयापचय (मेटाबालिक) दर भी कम होती है। ताड़ासन, त्रिकोणासन, वक्रासन आदि पैरों को जोड़कर सीधे खड़े होकर करने वाले योग आसन है। बहुत से आसन बैठकर करे जाते है, जिनमें पैर एक साथ ताने, पैरो की अंगुलियां सीधी और रीढ़ की हड़डी भी सीधी रहनी चाहिए। साथ ही साथ दोनों हाथ सीधे और हथेली समतल पर होनी चाहिए। बैठकर करने वाले आसन सुखासन, गोमुखासन आदि है। हलासन, भुंजगासन आदि आसन भी बिगनर्स के लिए उपयोगी हैं।

बच्चों के लिए योगः- योग करने से बच्चों को बहुत से लाभ है। उनकी सोचने की क्षमता और एकाग्रता मे वृद्धि होती है। बच्चों के लिए बहुत से प्राकृतिक आसन है, जिनके द्वारा वे अपने मस्तिष्क का विकास कर सकते है। शीर्षासन, सिंहासन, भुजंगासन, वक्रासन आदि बच्चों के लिए अत्यन्त उपयोगी आसन है।

पीठ दर्द के लिए आसनः- अधिकांशतः लोग पीठ दर्द से ग्रसित होते है। अधिक तनाव और दबाव के चलते भी पीठ के ऊपरी हिस्से में दर्द होने लगता है। अधिकतर पाया गया है कि पीठ दर्द से छुटकारा पाने के लिए योग एक बहुत उपयोगी एवं प्रभावकारी तरीका है। कुछ आसन पीठ दर्द की बढ़ा भी देते है। इसलिए योगसानों का अभ्यास योग गुरू की सलाह से करना चाहिए। पीठ दर्द से छुटकारा पाने के लिए बहुत से आसन और प्राणायाम होते हैं। प्रत्येक आसन को 2 से 5 मिनट तक करना चाहिए। कपालभाती एंव अनुलोम-विलोम पीठ दर्द के लिए लाभकारी है।

एलर्जी के लिए योगः- एलर्जी शरीर को न केवल परेशान करती है साथ-साथ एकाग्रता एवं निद्रा को भी प्रभावित करती है। एलर्जी वाले लोगों को कपालभाती, अनुलोम-विलोम आदि करना चाहिए। नासा छिद्रों के खोलने के लिए हलासन करना चाहिए। शीर्षासन करते समय अपने सिर को काफी समय तक नही झुकाना चाहिए क्योंकि इससे नासा मार्ग में अधिक दवाब पड़ता है। खड़े होकर करने वाले आसन ही प्रायः करने चाहिए।

खिलाड़ियों और एथलिट्स के लिए योगः- बहुत सी श्वास संबंधी क्रियाएं ताकत एवं लचीलेपन को बरकरार रखने में सहायक होती है। योग सुव्यवस्थित ढंग से शरीर में स्थित मांस पेशियों के साथ कार्य करता है। योग का अभ्यास सभी एथलिटस के द्वारा किया जा सकता है। योग भौतिक और मानसिक सन्तुलन बनाने में भी सहायक होते है।

फाइब्रोमायजिया के लिए योग :- इस रोग में मांसपेशियों मे दर्द, सोने मे दिक्कत, सुनने की क्षमता मे कमी आदि समस्यायें होती है। इस रोग में भुजंगासन,

अनुलोम, विलोम एवं कपालभाती आसन योग गुरू की देख-रेख मे ही करने चाहिए।

थायरॉइड के लिए योगः- विशेषज्ञों का मानना है कि 30% महिलाओं में थायरॉइड की समस्या उत्पन्न हो जाती है। थायरॉइड दो प्रकार के है (अ) हाइपर थायरॉइड जिसमें थायरॉइड हॉर्मोन के अत्यधिक स्रावित होने से ऑटोइम्यून बीमारियां हो सकती है यह बीमारी पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों में ज्यादातर देखने को मिलती है। इस अवस्था में थायरॉइड ग्रन्थि दो से तीन गुना तक बढ़ जाती है। धीरे-धीरे व्यक्ति का वजन भी घटने लगता है (ब) हाइपोथायरॉइड इसमें थायरॉइड हार्मोन का अल्प स्राव भ्रूण अवस्था, बाल्यावस्था या वयस्कावस्था में होने लगता है, जिसको क्रमशः स्निट्रिनिज्म एवं माइजीडेमा कहते है। सिरेटिन से त्वचा का रंग पीला होने लगता है। इसमें शरीर का तापमान कम होने के कम हृदय की गति भी कम होने लगती है। थायरॉइड रोगियों हेतु नौकासन, मत्स्यासन, कपालभाती अनुलोम-विलोम आदि लाभकारी है।

सिर दर्द के लिए योगः- सिर में दर्द होने के बहुत से कारण है जिनमें अपच एवं तनाव मुख्य है। फूड एलर्जी और विषाक्त भोजन से भी सिर मे दर्द होने लगता है। भुजंगासन, कपालभाती, अनुलोम-विलोम इसमें कारगर सिद्ध होते है।

महिलाओं के लिए योगः- भावनात्मक दवाब और तनाव महिलाओ की सेहत को काफी प्रभावित करते है जिसके कारण महिलाओं मे बहुत से रोग उत्पन्न हो जाते है। हार्मोन परिवर्तन भी स्त्रियों की सेहत को प्रभावित करता है। योग के द्वारा इन सभी कारणों से निजात पाया जा सकता है। बिड़ालासन (कैटपोज) के द्वारा महिलाओं में ऊर्जा का स्तर बढ़ जाता है। मेरूदण्ड मे लचीलापन आ जाता है। महिलाओं के लिए कपालभाती एवं अनुलोम-विलोम प्राणायाम अत्यन्त लाभदायक है।

पुरुषों के लिए योगः- योग के द्वारा पुरुषों में भौतिक अनियमितता को सही किया जा सकता है। आसनों द्वारा मांसपेशियों को भी लचीला किया जा सकता है। सूर्य-नमस्कार, सुखासन, हलासन, वक्रासन, भुजंगासन, कपालभाती एवं अनुलोम-विलोम पुरुषों के लिए महत्वपूर्ण आसन हैं।

वजन बढ़ाने के लिए योगः- योग की सहायता से शरीर का वजन भी बढ़ा सकते है। योग-सीधे शरीर का वजन बढ़ाने मे सहायता न करके भूख को बढ़ाने मे सहायक होता है। साधारण योगासन जैसे- शीर्षासन शरीर को आराम पहुंचाने के साथ साथ तनाव को भी दूर करता है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क रहता है अतः योग के द्वारा शरीर को स्वस्थ रखा जा सकता है। मत्स्यासन और चक्रासन के द्वारा हम अपनी मांसपेशियों को मजबूत कर सकते है।

वजन घटाने के लिए योगः- योगाभ्यास के साथ सन्तुलित भोजन लेने पर अच्छे परिणाम दिखते है। योग के द्वारा चर्बी को भी कम कर सकते है। वजन कम करने के लिए उपयुक्त योगसन हैं- चक्रासन, पवनमुक्तासन, एवं भुजंगासन आदि।

अपच के लिए योगः- हमारे शरीर में अपच के कारण बहुत सी परेशानियां उत्पन्न हो जाती है। योगासन के द्वारा पाचन तंत्र को सुचारू रूप मे चला सकते है। योग शरीर को शक्ति पहुंचाने के साथ साथ चयापच-दर को भी नियंत्रित कर सकता है। प्राणायाम के द्वारा शरीर में ऑक्सीजन की मात्रा को बढ़ा सकते है। हलासन और पवनमुक्तासन द्वारा भी पाचन तंत्र को

मजबूत करा जा सकता है। नौकासन भी अपच दूर करने मे सहायक है।

हृदय रोग के लिए योगः- हृदय रोग में योग काफी मददगार होते है। लेकिन इनको करने से पहले चिकित्सक की सलाह ले लेनी चाहिए। धमनियों मे अवरोध से रक्त का बहाव धीमा हो जाता है, जिसके कारण बहुत सी समस्याएं जैसे-उच्चरक्त चाप, हृदय धमनी रोग आदि हो जाती है। तनाव और भोजन इस रोग के प्रमुख कारण है। योग के द्वारा उच्च रक्तचाप को भी नियंत्रित कर सकते है। भुजंगासन द्वारा हृदय रोग को घटाया जा सकता है। प्राणायाम एवं कपालभाती भी काफी प्रभावकारी होते है इसके द्वारा शरीर मे ऑक्सीजन की मात्रा को बढ़ाया जा सकता है।

त्वचा संबंधी बीमारियों के लिए योगः- योग त्वचा संबंधी बीमारियों के लिए कारगर उपाय है। योग करने से त्वचा की झुर्रियां, धब्बे और मुर्झापन से छुटकारा मिल जाता है। प्रतिदिन 20 मिनट तक योगाभ्यास करने से त्वचा में कसाव और चमक भी आती है। चेहरे से दागों को हटाने के लिए मुंह द्वारा लम्बी सांस खींचकर एक मिनट तक इसे रोकने की कोशिश करनी चाहिए। इस प्रक्रिया को 5 से 7 बार करना चाहिए।

कम्प्यूटर और योगः- जो लोग कम्प्यूटर पर लगातार 8 से 10 घंटे तक काम करते है, वे कई तरह की बीमारियों के शिकार हो जाते है। निश्चित ही कम्प्यूटर पर लगातार आंखे गड़ाए रखने से नुकसान तो है ही इसके अलावा तनाव एवं दृष्टिदोष होने की संभावनाएं होती है। इन सबसे बचने के लिए कम्प्यूटर को आंखों के ठीक सामने रखना चाहिए। कम्प्यूटर पर काम करते समय अपनी सुविधानुसार प्रत्येक 5 से 10 मिनट बाद 20 फुट दूर देखना चाहिए। इससे दूर दृष्टि बनी रहती है। तनाव दूर करने हेतु अंग संचालन लाभदायक पाया गया है। इसमें प्रत्येक अंग का संचालन होता है जैसे आंखों की पुतलियों को दांए'-बांए, ऊपर-नीचे घुमाते हुए फिर गोल गोल घुमाना चाहिए। इसके द्वारा आंखों की मांसपेशियां मजबूत होती हैं। पीठ दर्द से निजात पाने के लिए दांए-बांए बाजू की कोहनी से मोडकर, दोनों हाथों की अंगुलियों को कंधे पर रखना चाहिए। तत्पश्चात् दोनों हाथों की कोहनियों को मिलाते हुए और सांस भरते हुए सामने से ऊपर की ओर घुमाकर नीचे की ओर सांस छोड़ते हुए ले जाना चाहिए। ऐसा 5 से 6 बार करते हुए कोहनियों को विपरीत दिशा में घुमाना चाहिए। गर्दन को दांए-बांए, फिर ऊपर-नीचे, और गोल-गोल घुमाना चाहिए। इसमें सांस को लेने एवं छोड़ने का ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

नियमानुसार योग को दैनिक जीवन में अपनाना अपने जीवन को सुखद बनाने का मूल रहस्य है। अपनी दिनचर्या में 30-40 मिनट का समय योगासन को दिये जाने से शरीर के समस्त अंग-प्रत्यंगों की संचालक कोशिकाऐं अपनी पूरी क्षमता से कार्यशील रहती है एवं शरीर को अधिकतम सुचारू रूप से अनुरक्षित रखती है। अतएव, योग एक सरल, सस्ती एवं लाभदायी वैज्ञानिक पद्धति है। अतः तन और मन से संयम एवं नियमपूर्वक योग को अपना कर स्वलाभ अर्जित करने की आवश्यकता है। काल करे सो आज कर, आज करे सो अब। किसी पल अस्वस्थता होयेगी, बहुरि करोगे कब।।

पद्मासन

भुजंगासन

हलासन

पवनमुक्तासन

वक्रासन

मत्स्यासन

मयूरासन

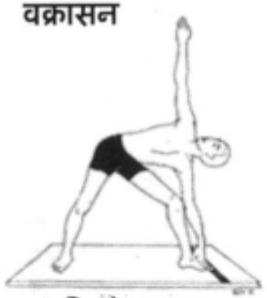
त्रिकोणासन

सुखासन

नौकासन

वज्रासन

शीर्षासन

योगासनों के प्रकार

सूर्य नमस्कार की बारह स्थितियाँ

१- प्रणामासनं २- हस्त उत्तानासनं ३- पादहस्तासनं
४- अश्वसचलनासनं ५- दंडासनं ६- साष्ठांग नमस्कारासनं
७- भुजंगासन ८- पर्वतासन ९- अश्वसचलनासनं
१०- पादहस्तासनं ११- हस्त उत्तानासनं १२- प्रणामासनं

जलीय जीवाणुओं में बढ़ता प्रतिजैविक प्रतिरोध: एक स्वास्थ्य एवं पर्यावरणीय संकट

डॉ. सत्य प्रकाश पाठक

जलीय विषविज्ञान, भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

एलेक्जन्डर फ्लेमिंग ने सितम्बर 1928 में संयोगवश स्टैफायलो कोकस ऑरियस जीवाणु को नष्ट करने वाला पदार्थ (रसायन) पेनीसीलियम नामक फफूंद (Mould) से विकसित कर आधुनिक औषधि चिकित्साविज्ञान के क्षेत्र मे क्रांति ला दी। ऐसे जीवजन्य (अब संश्लेषित भी) पदार्थ जो अन्य किसी जीव को मार या निष्क्रिय कर सकते हो, उन्हें औषधिविज्ञान में प्रतिजैविक (Antibiosis) कहा जाता है। प्रतिजैविक शब्द वास्तव मे लुई पाश्चर द्वारा सन् 1889 में निरूपित शब्द प्रतिजीविता (Antibiotic) से उत्पन्न हुआ। ग्रीक भाषा में Anti अर्थात विरूद्ध या प्रति तथा Bios अर्थात जीवन या जीव होता है, जिसके आधार पर ऐसे पदार्थों को प्रतिजैविक (Antibiotic) कहा गया। इस प्रकार पेनीसीलियम से उत्पन्न पदार्थ स्टैफायलोकोस ऑरियस जीवाणु के लिए प्रथम प्रतिजैविक था, जिसे उसके उत्पादक फफूँद के नाम पर आधारित पेनीसिलीन (Pencillin) नामकरण हुआ। इस आविष्कार के पश्चात विभिन्न जीवाणुजन्य संक्रामक बीमारियों के उपचार हेतु प्रतिजैविकों की एक अन्तहीन श्रृंखला जीवों से एवं संश्लेषण द्वारा निर्मित की गयी। आज प्रतिजैविकों का औषधि चिकित्साविज्ञान में महत्वपूर्ण स्थान एवं योगदान है। इस दिशा में हुई प्रगति अल्बर्ट स्काट्ज द्वारा 19 अक्टूबर 1943 में स्ट्रेपटोमायासिन प्रतिजैविक का विकास क्षयरोग (तपेदिक या राजयक्ष्मा) जैसे प्राणघातक संक्रामक रोग का सफल उपचार चिकित्साविज्ञान के क्षेत्र में एक मील का पत्थर सिद्ध हुई।

इस उत्कृष्ट आविष्कार का दूसरा चिन्ताजनक पहलू प्रतिजैविकों के उपयोग के कुछ ही दशक पश्चात जो सामने आया, वह था जीवाणुओं (रोगाणुओं) में प्रयुक्त प्रतिजैविकों के प्रति उत्पन्न प्रतिरोध (Resistance) अर्थात अपेक्षित जीवाणु को नष्ट करने या निष्क्रिय करने में असफलता। यह प्रतिरोध किसी प्रतिजैविक विशेष के प्रति जीवाणुओं में मुख्यतया निम्नलिखित विधि या विधियों द्वारा विकसित होता है-

1. प्राकृतिक चयन के फलस्वरूप उसके गुणसूत्रों (Chromosomes) तथा कोशिकाद्रव्य मे गुण सूत्र खण्डों या प्लाज्मिड्स (Plasmids) में आनुवांशिक उत्परिवर्तन के फलस्वरूप उत्पन्न हो जाता है। गुणसूत्रीय प्रतिरोध (Chromosomal resistance) वंशानुगत (Inherent) होता है जबकि प्लाज्मिडजन्य प्रतिरोध स्थानान्तरणीय (Transferrable) होता है, और निकटस्थ संवेदी (Sensitive) जीवाणु में संयुग्मन (Conjugation)] पारवहन (Transduction) या रूपान्तरण (Transformation) द्वारा अपने प्रतिरोधजीन युक्त प्लाज्मिड को पहुँचाकर उसे अपने समान प्रतिरोधी बना देते हैं। यह प्रक्रिया प्राकृतिक रूप से जैविक तथा जलीय पर्यावरण में होती रहती है।

2. जीवाणु द्वारा अपने ऊपर रक्षात्मक कवच (प्रायः श्लेष्मा कवच) निर्मित करके।

3. जीवाणु द्वारा विकर (Enzyme) आदि के उत्पादन से प्रतिजैविक का विखण्डन करके।

4. जीवाणु द्वारा प्रतिजैविक को रासायनिक अथवा जैविक क्रियाओं से निष्क्रिय या निष्प्रभावी करके।

भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान लखनऊ के वैज्ञानिक दल ने राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन, भारत सरकार द्वारा दो दशक पूर्व संचालित राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग 14 चिन्हित प्रदेशों के विभिन्न 19 जल समस्याग्रस्त जनपदों के जल स्रोतों के गुणवत्ता विश्लेषण (भौतिकी-रसायनिक तथा जीवाण्विक) द्वारा ज्ञात हुआ था कि 3500 से भी अधिक गाँवों में 20 लाख से भी अधिक जनसंख्या नदी, झील, तालाब, नाला, कुँआ, बावली, टाँका, नल, हैण्डपम्प, नलकूप, टंकी तथा एकत्रित वर्षा जल का उपयोग करता है। इन जल स्रोतों के 10-95% नमूनों में कोलीफार्म/मलीय कोलीफार्म प्रति 100 मि.ली. में निर्धारित सीमा से अधिक पाये गये। उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर मेघालय तथा मिजोरम के जनपदों से एकत्रित जल के नमूनों से प्राप्त कोलीफार्म और मलीय कोलीफार्म जीवाणुओं पर समेकित अध्ययन से ज्ञात हुआ कि 05-95% जीवाणु एम्पीसिलीन टेट्रासायक्लीन, सेफलार्डीन, सल्फाट्रायड तथा कार्बेनीसिलीन के प्रति प्रतिरोधी थे, जबकि 15-45% जीवाणु बहु प्रतिजैविक प्रतिरोधी (Multiple antibiotic resistant) थे।

इसी क्रम में हुए इन्हीं प्रांतों के जनपदों से एकत्रित विभिन्न पेयजलों स्रोतों के नमूनों का जीवाण्विक विश्लेषण कर क्लेबसियेला, सिट्रोबैक्टर, इश्चरेश्चिया कोलाई तथा इन्टरोबैक्टर जीवाणु क्रमशः 50, 23.4, 18 और 8.5% जल के नमूनों में पाये गये। इन सभी कोलीफार्म जीवाणुओं पर 11 प्रचलित प्रतिजैविकों के प्रति प्रतिरोध का आँकलन किया गया जिसके परिणाम निम्नलिखित है :

तालिका-1 जलीय कोलीफार्म जीवाणुओं में प्रतिजैविक प्रतिरोध।

कोलीफार्म प्रजाति	कुल जीवाणु संख्या	प्रतिरोधी जीवाणु संख्या	% प्रतिरोधी जीवाणु
इश्चरेश्चिया कोलाई	34	31	91.1
क्लेबसियेला	94	86	91.4
सिट्रोबैक्टर	44	34	77.2
इन्टरोबैक्टर	16	12	75.0
योग	**188**	**163**	**86.7**

(रामटेके आदि, 1991 ज. इन्वेरानमेंटल बायलोजी 12 (2), 153,158)

उपरोक्त ऑकड़ो से वर्तमान में प्रतिजैविक प्रतिरोधी जीवाणुओं की संख्या एवं प्रतिशतता में वृद्धि का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। मैदानी क्षेत्रों के सतही जल के कोलीफार्म जीवाणुओं में प्रतिजैविक प्रतिरोध पहाड़ी क्षेत्र के जल तथा भूमिगत जल की अपेक्षा अधिक पाया गया। इसके अतिरिक्त शहरी क्षेत्रों से गुजरने वाली अधिकांश नदियाँ, नगरीय मल-जल से प्रदूषित होती जा रही है। गोमती नदी जो लखनऊ नगर क्षेत्र में 40 से अधिक गन्दे नालों को भी समेटती है, के जल में कोलीफार्म स्यूडोमोनास, सल्मोनला, शिगेला, एरोमोनास तथा विब्रियो कालेरी जीवाणु, विशेषकर ग्रीष्म ऋतु में एवं अधोधारा (Downstream) से, निर्धारित सीमा से बहुत अधिक पाये गये तथा उस समय के अतिप्रचलित प्रतिजैविक जैसे एम्पीसिलीन, टेट्रासायक्लीन, क्लोरम फेनीकाल, तथा नैलीडिक्सिक अम्ल के प्रति महत्वपूर्ण प्रतिरोध 78 % कोलीफार्म जीवाणुओं ने दर्शाया। जैसा कि विदित है कि नगरीय मलजल से प्रदूषित पेयजल के माध्यम से विभिन्न जलजन्य संक्रामक बीमारियों की सम्भावना अधिक रहती है। इन बीमारियों के कारक रोगाणु यदि उपचार हेतु प्रयुक्त प्रतिजैविक के प्रति प्रतिरोधी होगा तो समस्या की गम्भीरता का अनुमान लगाया जा सकता है।

गत कुछ दशकों से संक्रामक रोगों के उपचार हेतु विभिन्न उच्च क्षमता एवं श्रेणी के प्रतिजैविकों का प्रयोग चिकित्सकों की बाध्यता हो रही है और उनका प्रयोग बढ़ गया है जिसके फलस्वरूप उसके संवेदी जीवाणुओं में उन नई प्रतिजैविकों जैसे सिप्रोफ्लाक्सासिन, केनामायसिन, जेन्टामायसिन के प्रति भी कारक जीवाणुओं में प्रतिरोध विकसित हो रहा है। इसके अतिरिक्त प्रतिजैविक उपभोक्ताओं में उसके विभिन्न पार्श्व-प्रभावों (Side effects) के साथ साथ उनको प्रतिरक्षण (Immunity) प्रणाली भी क्षीण हो रही है। प्रतिजैविकों का सबसे अधिक दुष्प्रभाव आहार नाल के जीवाणुओं (Gut flora) पर पड़ता है जो अधिक समय तक या बारम्बार किसी प्रतिजैविक के सम्पर्क में आने पर उस प्रतिजैविक के प्रति प्रतिरोध विकसित कर लेते हैं। ऐसे प्रतिजैविक प्रतिरोधी जीवाणु मल के साथ मल जल के माध्यम से जल स्रोतों को प्रदूषित करते हैं। जल स्रोत के अन्य संवेदी जीवाणुओं में ऐसे प्रतिजैविक प्रतिरोधी जीवाणु किसी भी उपयुक्त क्रिया द्वारा अपना प्रतिरोधकारी प्लाज्मिड संवेदी जीवाणु तक पहुंचा देते हैं। जब ऐसे प्रतिरोधी जीवाणु व्यक्ति में संदूषित जल (Contaminated water) लेने पर जो जलजन्य संक्रामक रोग उत्पन्न करते है, उसका सफल उपचार उस प्रतिजैविक की क्षमता एवं प्रकार से नही हो पाता हैं।

चूँकि अधिकांश नगर किसी न किसी नदी या अन्य प्राकृतिक जल स्रोत के निकट बसे होते हैं और नगर का मल-जल बिना किसी उचित उपचार के निस्तारित होकर नदी या जलाशय के जल को संदूषित करता है। इस मल-जल में मनुष्यों के अतिरिक्त पशुओं, पक्षियों तथा अन्य समतापी (homeotherm) जन्तुओं का मल-मूत्र भी सम्मिलित रहता है जिसके फलस्वरूप जीवाणुओं के अतिरिक्त, विषाणु, प्रजीव (Protozoa), परजीवी आदि भी जल में आ जाती है। ऐसे संदूषित जल के पीने या उसमें तैरने और नहाने से अतिसार, हैज़ा, पेचिश, पीलिया, मस्तिष्क ज्वर, मियादीबुखार आदि के अतिरिक्त कृमि रोग, गले, आंख, कान, त्वचा तथा फेफड़ों का भी संक्रमण हो जाता है। जलजन्य

संक्रमण का माध्यम ऐसे संदूषित जल के अतिरिक्त इसके जल उत्पाद जैसे सिंघाड़ा, मछली, झींगा, समुद्री जन्तु साग आदि भी हैं। यही नहीं ऐसे संदूषित जल से सब्जी फल, फूल व अन्य खाद्य सामग्री धोने से भी जलजन्य संक्रमण की सम्भावना रहती है।

इस संस्थान में हुए राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन, भारत सरकार के अंतर्गत राष्ट्रव्यापी जीवाण्विक जल विश्लेषण के उपरान्त दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों से एकत्रित जल के नमूनों से प्राप्त कालीफार्म तथा मलीय कोलीफार्म में विभिन्न प्रतिजैविकों के प्रति प्रतिरोध पाया गया। जबकि उन दूर दराज क्षेत्रों में प्रतिजैविकों का प्रयोग नगण्य था। इससे यह सम्भावना स्पष्ट होती है कि वहां के जल में धातुओं की प्राकृतिक उपस्थिति के कारण उसके जीवाणुओं में धातु प्रेरित प्रतिजैविक प्रतिरोध विकसित हो गया। इसके लिए सम्भवतः जीवाणु का एक ही वंशाणु (Gene) धातु सहिष्णुता के साथ-साथ प्रतिजैविक प्रतिरोध के लिए भी उत्तरदायी है। इसी तथ्य को सुदृढ़ करने वाले एक वैज्ञानिक अध्ययन से ज्ञात हुआ कि चन्ना पंक्टेटस (Channa punctatus) मछली जो गोमती नदी से एकत्रित की गयी थी, के विभिन्न अंगों जैसे यकृत (Liver), प्लीहा (Spleen), वृक्क (Kidney), गलफड़ (Gills) तथा मांस (Muscles) में ऐरोमोनास (Aeromonas) जीवाणु प्राप्त हुए। ये ऐसे रोगकारी जीवाणु हैं जो मछलियों में लाल फुन्सी रोग (Furunculosis) तथा रक्तपूति (Septicemia) एवं मनुष्यों में पेयजल के माध्यम से 'ट्रैवेलर्स डायरिया' यानी कि अतिसार (दस्त) उत्पन्न करता है।

इस अध्ययन में धातु प्रेरित प्रतिजैविक प्रतिरोध के विकास देखने के लिए उक्त प्रायोगिक मछली को कैडमियम, क्रोमियम तथा लेड (सीसा) जैसी विषाक्त भारी धातुओं की उपस्थिति से प्रेरित (Induced) एकल (Single) तथा बहु प्रतिजैविक प्रतिरोधी एरोमोनास जीवाणु मत्स्यांगों में देखे गये। 50-90% एरोमोनास बहु प्रतिजैविक प्रतिरोधी (Multiple antibiotic resistant) विशेषकर नई पीढ़ी के प्रति जैविकों जैसे जेन्टामायसिन, केनामायसिन, सिप्रोफ्लाक्सासिन तथा नारफ्लाक्सासिन के प्रति प्रतिरोधी थे। इस अध्ययन से यह प्रमाणित होता है कि पर्यावरणीय अथवा जैविक तंत्र में धातुओं की उपस्थिति तथा जीवाणुओं में उसके प्रति सहिष्णुता के कारण उनमें विभिन्न प्रतिजैविकों के प्रति प्रतिरोध उत्पन्न हो सकता है जो धातु प्रेरित होगा। देश-विदेश की अन्य प्रमुख नदियों, जलाशयों समुद्री जल एवं जलीय जीव जन्तुओं में वैज्ञानिकों को विभिन्न प्रति जैविक और धातु प्रतिरोधी जीवाण्विक प्रजातियाँ मिली है।

इसी तथ्य पर आधारित एक अन्य अध्ययन में मृदुजलीय (Freshwater) मछली क्लेरियस बट्रैकस (Clerias batrachus) गोमती नदी से एकत्रित कर उसके यकृत, प्लीहा, वृक्क व गलफड़ से प्राप्त विषम पोषी वायव्य जीवाणुओं (Heterotrophlic aerobic bacteria) में सात बहु प्रचलित प्रतिजैविकों के साथ पाँच विषाक्त भारी धातुओं जैसे कैडमियम, क्रोमियम कॉपर, लेड तथा मैन्गनीज के प्रति प्रतिरोध प्रतिशतता देखी गयी जो निम्नलिखित है।

तालिका-2 मछली (Clarias batrachus) के विभिन्न अंगों के जीवाणुओं में प्रतिशत प्रतिजैविक एवं धातु प्रतिरोध।

	प्रतिजैविक / धातु	यकृत	प्लीहा	वृक्क	गलफड़
प्रति जैविक	कोलिस्टीन	100	100	100	90
	टेट्रासायक्लीन	20	30	20	10
	सिप्रोफ्लाक्सासिन	00	00	10	00
	जेन्टामायसिन	40	60	30	20
	कार्बेनिसिलीन	10	40	80	00
धातु	कैडमियम	10	20	20	20
	क्रोमियम	100	40	40	20
	कॉपर	00	00	00	00
	लेड	30	20	00	20
	मैन्गनीज	30	20	00	00

(पाठक व गोपाल 2005 इन्वेरान्मेन्टन रिसर्च 98, 100-103)

ये परिणाम यह दर्शाते हैं कि प्राकृतिक जलाशयों में नगरीय मल-जल तथा धातु आधारित औद्योगिक अपशिष्ट का बिना उपचार के निस्तारण जलीय जन्तुओं विशेषकर मछलियों एवं मनुष्यों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। ऐसे प्रतिरोधी जीवाणुओं से संक्रमित मछलियों तथा अन्य जलीय जीवजन्तुओं को पकड़ने वाले मछुआरे, व्यापारिओं एवं उपभोक्ताओं में भी ऐसे प्रतिजैविक प्रतिरोधी जीवाणुओं से संक्रमण होने की सम्भावना अधिक रहती है। विशेषकर संवर्धित, पालतू व सजावटी मछलियों में प्रतिजैविक प्रतिरोधी जीवाणुओं एवं फफूँदों के संक्रमण से ग्रसित मछलियों का उपचार कठिन हो जाता है और मछलियों के अकाल मृत्यु से आर्थिक हानि भी उठानी पड़ती है।

इस प्रकार जलीय जीवाणुओं में प्रतिजैविक प्रतिरोध का विकास मुख्यतया मनुष्यों एवं पालतु जन्तुओं में सक्रांमक रोगों के उपचार हेतु इसके उपयोग के उपरान्त मल-विसर्जन एवं / अथवा धातु प्रदूषण के कारण होता है विचारणीय तथ्य यह है कि एक तो विभिन्न प्रकार के जल प्रदूषण के फलस्वरूप अधिकांश पेयजल स्रोत घातक रोगाणुओं से संदूषित हो रहे हैं जो एक गम्भीर स्वास्थय संकट है। दूसरी ओर विभिन्न प्रतिजैविकों के अनियंत्रित सेवन के परिणाम स्वरूप आहार नाल के जीवाणुओं में निरंतर बढ़ती हुई प्रभावशाली प्रतिजैविकों के प्रति प्रतिरोध का विकास इस स्वास्थ्य संकट को और जटिल बनाता है। इस संकट के निवारण हेतु इस क्षेत्र से संबंधित वैज्ञानिकों तथा औषधि निर्माताओं पर अपेक्षाकृत अधिक क्षमतावान और प्रभावी प्रतिजैविकों के विकास की अपरिहार्य अनिवार्यता उपेक्षित होती जा रही है। इस प्रकार विभिन्न माध्यमों के जीवाणुओं में प्रतिजैविकों के प्रति निरन्तर बढ़ता प्रतिरोध औषधि चिकित्साविज्ञान के लिए एक अन्तहीन चुनौती है।

इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण रूप से उल्लेखनीय है कि जो गंगा नदी हमारे देश की अति पवित्र एवं भारतीय संस्कृति व आस्था की केन्द्र है आज उसकी भी गणना प्रदूषित नदियों में होती है। इसका कारण है कि गंगा हरिद्वार से लेकर हुगली तक 48 प्रथम श्रेणी तथा 66 द्वितीय श्रेणी के नगरों का अनौपचारित नगरीय मल-जल ग्रहण करती है। इसके अतिरिक्त उन्नाव तथा कानपुर के चमड़ा मिलों के उत्प्रवाह से गंगा नदी का जल प्रदूषित होकर इसके जलीय परितंत्र (Ecosystem) में जलीय जीव-जन्तुओं, इसके जल से सिन्चित वनस्पतियों एवं मानव स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। इसी के साथ गंगा के जलीय जीवाण्विक प्रजातियों में क्रोमियम सहित अन्य धातुओं के प्रति भी प्रतिरोध विकसित हो चुका है, जिसके फलस्वरूप प्रतिजैविक एवं धातु प्रतिरोधी जीवाणुओं की संख्या गंगा नदी के जल तथा तलछट में निरन्तर बढ़ रही है, जो इसके जलीय जन्तुओं एवं मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा है।

इस तरह से यह स्पष्ट है कि मनुष्यों, पशुओं एवं अन्य समतापी जन्तुओं के मल-मूत्र युक्त नगरीय मल जल तथा धातु आधारित औद्योगिक उत्प्रवाह को बिना उपचार के प्राकृतिक जल स्रोतों में प्रवाहित करने से उसके जलीय जीवाणुओं में प्रतिजैविकों एवं धातुओं के प्रति प्रभावी स्तर पर प्रतिरोध विकसित हो जाता है, जो समग्र रूप से जलीय पर्यावरण जैवविविधता एवं जन स्वास्थ्य के लिए गम्भीर संकट है, जिसका समाधान सम्पूर्ण वैज्ञानिक समुदाय, पर्यावरण विद्रों एवं समाज के विभिन्न वर्गों का उत्तरदायित्व है। अतएव, प्राकृतिक जल स्रोतों को प्रदूषण से बचाने में ही पर्यावरण, स्वास्थ्य, समाज एवं विश्व का कल्याण निहित है।

जल का पुनः चक्रण (रिसाइक्लिंग) एवं उपयोग

डा. वीरेन्द्र मिश्र
पारिस्थितिकी विष विज्ञान, आई.आई.टी.आर., लखनऊ

जल की रिसाइक्लिंग (पुनः चक्रण) का अर्थ है जल की हर बूंद को साफ कर उसका पुनः उपयोग करना। चूँकि पानी का कोई विकल्प नहीं है इसलिये आवश्यक है कि जितना पानी मिल रहा है, हम उसका अधिकतम उपयोग करें और यह केवल पुनः चक्रण संरक्षण एवं शोधन से संभव है। शहरी क्षेत्रों में रोजाना सप्लाई किये जाने वाले करोड़ों लीटर पानी का 80 प्रतिशत हिस्सा इस्तेमाल के बाद सीवरेज में बहा दिया जाता है। अगर इस 80 प्रतिशत हिस्से को पुनः चक्रण या शोधित कर लिया जाय तो यह जल की बहुत बड़ी बचत होगी। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी0पी0सी0बी0) की एक रिपोर्ट के अनुसार उद्योगों में प्रयोग होने वाले पानी का 35 प्रतिशत हिस्सा ही शोधित होता है। यदि शेष 65 प्रतिशत पानी को भी शोधित कर लिया जाय तो न केवल जल संकट को काफी हद तक दूर किया जा सकेगा बल्कि हम पर आर्थिक भार भी कम होगा। नहाने, हाथ-मुँह, कपड़े धोने, साफ-सफाई और बर्तन बगैरह धोने में इस्तेमाल पानी 'ग्रे वाटर' कहलाता है और इसे पुनः चक्रण किया जा सकता है जब कि टॉयलेट में इस्तेमाल पानी 'ब्लैक वाटर' कहलाता है जिसे शोधित करना पड़ता है। जल पुनः चक्रण घर, कार्यालय अथवा कारखानों कहीं भी और कोई भी इसे अपने स्तर पर कर सकता है। पुनः चक्रित जल चूँकि पीने लायक नहीं होता अतः इसका उपयोग मुख्यतः कृषि, लैन्डस्केप (परिदृश्य), सार्वजनिक पार्क, गोल्फ कोर्स की सिंचाई में, ऊर्जा संयत्रों और तेल रिफाइनरियों में प्रयुक्त ठन्डे जल के रूप में, कागज मिलों, कालीन रंगाई, शोचालय फ्लसिंग, धूल नियन्त्रण, निर्माण गतिविधियाँ, कान्क्रीट मिक्सिंग एवं कृत्रिम झीलों के लिये किया जाता है।

हम जानते हैं कि प्रकृति जल चक्र द्वारा कई हजार सालों से जल का पुनः चक्रण एवं पुनः उपयाग करती आ रही है। जल पुनः चक्रण को दो भागों में बाँटा जा सकता है।

(1) अनियोजित

(2) नियोजित

अनियोजित चक्रण के उदाहरण हैं जब शहर अपने पानी की पूर्ति नदियों से करता है जैसे कि कोलोराडो नदी एवं मीसीसीपी नदी है। इन नदियों में शहर का दूषित जल आता है। इन नदियों के पानी का पुनः प्रयोग किया जाता है। पहले इस पानी को शोधित किया जाता है और फिर इनका जलपूर्ति में प्रयोग किया जाता है। नियोजित चक्रण वह है जिसमें पुनः चक्रण एवं पुनः उपयोग नियोजित ढंग एवं लाभकारी उद्देश्य से किया जाता है। इन्वायरनमेन्टल प्रोटेक्शन एजेन्सी (इ0पी0ए0) ने 2004 में पानी के पुनः चक्रण एवं उसके लाभकारी उपयोग के लिये एक तकनीकी दस्तावेज प्रकाशित किया है जिसका शीर्षक है ''जल का पुनः उपयोग करने के लिये दिशा निर्देश।''

पुनः चक्रण (रिसाइक्लिंग)

प्राथमिक शोधन - बालू से छानने की प्रक्रिया में 'ग्रे वाटर' को रेत, रोड़ी व कंकड़ से पास कर निथारा जाता है। इसमें पानी से केवल ठोस पदार्थ एवं मिट्टी

के कण अलग हो जाते हैं क्लोरीनेशन प्लांट भी इसी श्रेणी में आता है जो नगर निगम व नगर पालिकाएं लगाती हैं।

द्वितीयक शोधन - इसमें विद्युत चुंबकीय विकिरणों का प्रयोग होता है। बहुत ज्यादा प्रदूषित पानी के लिये सुपरक्लोरीनेशन और रिवर्स आस्मोसिस (आर0ओ0) प्लांट लगाते हैं। आर.ओ. में 'ग्रे वाटर' में आक्सीजन पम्प करके 'मित्र जीवाणुओं' को सक्रिय किया जाता है। 500 तक की आबादी वाले गांव में आर0 ओ0 प्लांट लगाने पर करीब 15 लाख रूपये खर्च होता है। एक रिपोर्ट के अनुसार पंजाब के दो हजार गांवों में प्लांट लगाये गये हैं। इन्हें शेष गांवों में भी लगाया जायगा।

तृतीयक शोधन - सीवरेज पानी को शोधित कर इन्डस्ट्रियल ग्रेड व सिंचाई योग्य बनाने का यह सबसे बढ़िया तरीका है। तृतीयक या क्लोरीनेशन प्लांट को जोड़कर शुद्ध किया जाने वाला पानी पीने योग्य बन जाता है। तीनों प्रकार के शोधन को निम्न चित्र द्वारा दर्शाया जा सकता है :-

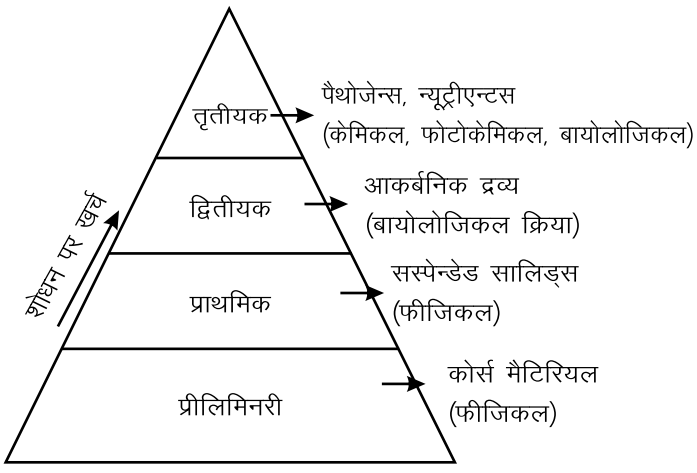

चित्र : शोधन की विभिन्न स्तर

पुनः चक्रण का देश-विदेश में परिदृश्य - बेंगलुरु में रेन वाटर क्लब के संस्थापक और जल विशेषज्ञ एस0 विश्वनाथ के अनुसार शोधन या पुनः चक्रण प्लांट में पानी की लागत ताजे जल की तुलना में आधी आती है। बेंगलुरु में कावेरी नदी से पानी लाने पर प्रति हजार लीटर 18 रुपये खर्चे होते हैं, जब कि इतने ही पुनः चक्रण जल (हार्ड वाटर) की लागत 5 से 8 रुपये आती है। अमेरिका के लॉस एंजिलिस, सेन फ्रासिंसको और दक्षिण कैलीफोर्निया में गोल्फ कोर्स व दूसरे पार्कों में सिंचाई के लिये पुनः चक्रित जल का उपयोग 1929 से किया जा रहा है। 1972 से तो अमेरिका ने जल पुनः चक्रण को अनिवार्य बना दिया है। सिंगापुर में पुनः चक्रण एवं आर0ओ0 प्लांट की मदद से पानी को साफ कर बेचा जाता है जबकि नामीबिया में इसे वापस जल स्रोतों में डाल देते हैं। इस मामलें में हम पीछे जरूर हैं लेकिन काम हमारे यहाँ भी हो रहा है। सिटी ब्यूटीफुल के नाम से मशहूर भारत की पहली नियोजित शहर चन्डीगढ़ में 50 साल से सीवरेज पानी को तृतीयक पद्धति से शोधित कर गोल्फ कोर्स व पार्कों में प्रयोग किया जा रहा है। अगले साल से बड़ी कोठियों में बने पार्कों की सिंचाई के लिये भी 'हार्ड वाटर' देने की योजना है। नगर निगमों और नगर पालिकाओं में शोधन प्लांट लगाना अनिवार्य है लेकिन सख्ती नहीं होने के कारण अमल नहीं हो पाता। सरकार सख्ती करके इसे लागू करवा सकती है। गुजरात के सूरत में पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप (पी0पी0पी0) के तहत देश का पहला जल पुनः चक्रण प्लांट लगने जा रहा है। इसमें घरों से निकलने वाला 'ग्रे वाटर' तृतीयक पद्धति से पुनः चक्रित कर 'पांडेसरा इन्डस्ट्रीयल एरिया' में स्थापित उद्योगों को दिया जायेगा। अब तक इस पानी को शोधित कर खाड़ी में फेका जाता था। तृतीयक पद्धति से उद्योगों को रोजाना 40 एम0एल0डी0

(मिलियन लीटर प्रतिदिन) पानी दिया जायेगा। इसकी दरें एक हजार लीटर के लिय 18.20 रूपये रहेगी। इसे कम करने के लिये वार्ता चल रही है फिलहाल इन उद्योगों को नगर निगम 16 रूपये प्रति एक हजार लीटर के हिसाब से पानी दे रहा है। जल विशेषज्ञ विश्वनाथ को उम्मीद है कि वह दिन दूर नहीं है जब भारत में घरेलू स्तर पर जल पुनः चक्रण प्लांट लगने लगेंगे। उसके बाद पानी की कमी और सीवरेज की बदबू बीते जमाने की बात हो जायेगी। इस सन्दर्भ में बहुत सी सूचनायें ऐसी हैं जिनके बारे में हमें पता नहीं है जैसे - इजरायल में पानी बर्बाद करने पर सजा का प्रावधान है। फ्लोरिडा में पुनः चक्रण नहीं करने पर जुर्माना लगता है। चीन ने अपने शहरों/कस्बों में एक हजार से अधिक जल पुनः चक्रण प्लांट लगाये है। समूचे आस्ट्रेलिया, अमेरिका और यूरोप के कई देशों में टॉयलेट में केवल पुनः चक्रित जल इस्तेमाल किया जाता है। दिल्ली के हैदरपुर व गोकुलपुरी में दो पुनः चक्रण प्लांट चल रहे हैं। बेंगलुरु डेबलपमेन्ट अथारिटी अपने मशहूर कब्बन पार्क में 'हार्ड वाटर' देती है।

घर में प्रयुक्त जल का पुनः चक्रण के बाद उपयोग - लोग अपने स्तर पर घर में 4'x 5' का गड्ढ़ा बनाकर रसोई व बाथरूम के पानी को उसमें डाल सकते हैं। गड्ढे में मिट्टी, चारकोल, रोड़ी व कंकड़ डाल कर पानी को पुनः चक्रित कर उससे बगीचे को सींचा जा सकता है। इसके लिये रसोई, नहाने व कपड़े धोने में प्रयुक्त पानी को टॉयलेट के पानी से अलग करने के लिये दो पाइप लाइन बिछानी होगी। रसोई व स्नान घर की लाइन को पुनः चक्रण प्लांट व शोधित पानी को टॉयलेट तक ले जाने के लिये अलग लाइन चाहिये। इसमें प्लांट की जगह और पाइप की कीमत के अलावा दूसरा खर्च बहुत मामूली है। इसके अलावा रसोई में इस्तेमाल पानी को भी दो हिस्सों में बाँटा जा सकता है। एक, वह पानी जो कार्बन/बैक्टीरिया वाला नहीं होता जैसे सब्जियाँ धोने के बाद बचा पानी। इसे सीधे पौधों में डाला जा सकता है। दूसरा बर्तन धोने के बाद बचा पानी। चूँकि इसमें तेल और मसाले मिले होते हैं, इसलिये इसे पुनः चक्रण कर बागीचे या टॉयलेट में फ्लश के लिये इस्तेमाल किया जा सकता है। सब्जियों को भी सीधे नल के नीचे धोने की जगह किसी बर्तन में धोना चाहिये। बाद में वह पानी पौधों में डाला जा सकता है। आजकल ऐसे भी टॉयलेट आने लगे हैं जिसमें फ्लश टैंक के ऊपर ही वॉश बेसिन होता है। इससे अपने आप दूसरी बार पानी का इस्तेमाल हो जाता है।

शहर में प्रयुक्त जल का पुनः चक्रण के बाद उपयोग - 14 जून 1986 में लॉच पहले गंगा एक्शन प्लान के सदस्य रह चुके और अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के पूर्व प्रोफेसर रासिद हयात सिद्दीकी कहते हैं कि किसी भी कालोनी या शहर में पुनः चक्रण प्लांट लगाया जा सकता है। इसमें पानी को शुद्ध करने की लागत बहुत कम आयेगी। उदाहरण के तौर पर आर0ओ0 प्लांट की लागत करीब 15 लाख रूपये आती है। अगर इसे 100 घरों वाली सोसाइटी में लगाया जाय तो प्रत्येक परिवार पर केवल 15000/- रूपये का बोझ पड़ेगा। शहरी स्तर पर लगने वाला 240 एम0एल0डी0 क्षमता वाले क्लोरीनेशन प्लांट की लागत 300 करोड़ रूपये तक बैठती है इसमें प्रति हजार लीटर पानी का खर्च 4.80 रूपये आता है जिसे शहर वासियों के लिए वहन करना कठिन नहीं है। शहर में पानी का पुनः चक्रण करने का सबसे अच्छा उदाहरण फिनलैंड के शहर हेलीसिंकी का है। वहाँ एक सिस्टम के अन्तर्गत

शहर के प्रत्येक घर व औद्योगिक इकाई का गंदा पानी सात एकड़ में बने पुनः चक्रण प्लांट में पहुँचता है। वहाँ पानी को शोधित करके उसके एक हिस्से को फिर से इस्तेमाल करने के लायक बनाया जाता है जब कि दूसरे हिस्से को झील या तालाब में छोड़ दिया जाता है।

समुद्री पानी का डिसेलिनेशन के बाद उपयोग- धरती पर मौजूद पानी का 97 प्रतिशत हिस्सा समुद्री पानी के रूप में है जो खारा है। अमेरिका, आस्ट्रेलिया, इजराइल, चीन और साउदीअरब अपनी कुल मांग का बड़ा हिस्सा इसी पानी का डिसेलीनेशन करके पूरा करते हैं। सऊदी अरब की राजधानी रियाद में इसके लिये 320 कि0मी0 लम्बी पाइप लाइन बिछाई गयी है। दुनियां भर में इसके 15000 और भारत में अंडमान, गुजरात, तमिलनाडु, लक्ष्यदीप और आन्ध्र प्रदेश में छोटे बड़े 175 प्लांट चल रहे हैं। इसमें पहला प्लांट अन्डमान में 1946 में लगा था। फ्लोरिडा में रोजाना 9 करोड़ 45 लाख लीटर समुद्री पानी शुद्ध होता है। संयुक्त अरब अमीरात में 38 करोड़ 50 लाख लीटर खारे पानी को मीठा बनाया जाता है।

निष्कर्ष - बहरहाल पानी का इस्तेमाल रोका तो नहीं जो सकता, लेकिन यह ध्यान रखना होगा कि उसकी हर बूँद का बार-बार उपयोग हो सके क्योंकि अगर जल है तो कल है। एक फीट की रफ्तार से गिरते भूजल स्तर के मद्देनजर हम सबको पुनः चक्रण व शोधन को बढ़ावा देना ही होगा।

आज दुनियाँ में तेजी से भूजल भंडार खत्म हो रहे हैं। बेशकीमती पानी को आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाने के लिये सब लोगों को इसे अपनाना होगा। हमें आज ही से इस पर अमल करना होगा। संकल्प लेना होगा। इस कार्य के लिये सिर्फ इच्छा शक्ति चाहिये। सरकार को भी जल पुनः चक्रण को अनिवार्य बनाना होगा तभी यह कार्य सम्भव हो पायेगा ऐसा हमारा विश्वास है।

जल का पुनः चक्रण एवं उसके उपयोग के सुझाव - पुनः चक्रित जल का उपयोग इ0पी0ए0 दस्तावेज कि दिशा निर्देश पर आधारित है।

वाटर कलेक्शन सिस्टम

शोधन का बढ़ता हुआ क्रम →

प्राथमिक शोधन
सेडीमेन्टेशन
(अवसादन, निक्षेपण)

- इस स्तर पर पानी के उपयोग के लिये रिकमेन्डेशन नहीं है।

द्वितीयक शोधन
जैविक आक्सीकरण
डिसइन्फेक्शन(रोगाणुनाशन)

- बागीचे और वाइन यार्ड की सिंचाई
- नान फूड फसलों की सिंचाई
- रेसट्रिकटेड लैन्डस्केप इम्पाउन्डमेन्टस
- ग्राउन्ड वाटर रिचार्ज आफ नानपोटेबुल एक्वीफर
- वेट लैन्ड, वाइल्ड लाइफ हैवीटैट, स्ट्रीम आगमेन्टेशन
- इन्डस्ट्रियल कूलिंग प्रासेसस

तृतीयक/एडवान्स शोधन
केमिकल कोआगुलेशन, फिल्टरेशन, डिसइन्फेक्शन

- लैन्डस्केप एवं गोल्फ कोर्स की सिंचाई
- शौचालय फ्लसिंग
- गाड़ियों की धुलाई
- फसलों की सिंचाई
- अनरिस्ट्रिकटेड रिक्रियेशनल इम्पाउन्डमेंट्स

- इन्डाइरेक्ट पोटेबुल पुनः उपयोग
- ग्राउन्ड वाटर रिचार्ज आफ पोटेबुल एक्वीफर और सरफेस वाटर रेसरवायर आगमेन्टेशन

भूमण्डलीय तापन एवं वायु मण्डल में गैसों का प्रभाव

रोमा साजवानी एवं डा. कृष्ण गोपाल
भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान, लखनऊ

पिछले दो दशकों में पर्यावरण संरक्षण के लिये वैश्विक स्तर पर जागरूकता निरंतर बढ़ी है और अब इसमें जन साधारण भी तेजी से शामिल हो रहा है। तीव्रता से समाप्त हो रहे प्राकृतिक संसाधन, तहस-नहस हो रही जैव विविधता और इन सभी में तेजी से शीर्ष ऊपर पहुँचता पारा, इन सबने धरती के हर कोने हर समाज, हर संस्कृति को प्रभावित किया है। इन सब स्थिति के लिए जिम्मेदार मानव ही है। परन्तु इस बात में भी संदेह नहीं है कि देर से ही सही अब अपनी करनी स्वयं उसके सामने आ रही है। अपराध स्वीकार करना सुधार की दिशा में पहला कदम होता है और वैश्विक स्तर पर पहला कदम रख दिया गया है। औद्योगिक क्रांति के बाद हमारी दोहन क्षमता ही में अभूतपूर्व वृद्धि हुयी और हमने प्रकृति के अनमोल उपहारों को स्वीकारना व उनका प्रयोग करना शुरू किया, किन्तु जैसे-जैसे साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद बढ़ा पर्यावरण पर ही इसका कुप्रभाव पड़ा। इस आधी सदी में इतना दोहन हुआ जितना कि पिछले दो सहस्रत्राब्दियों में भी नहीं किया गया। प्रकृति के नैसर्गिक नियमों को तोड़ा और प्राकृतिक गतिविधियों पर अंकुश लगाया। भू-जल वायु सभी मंडलों को प्रदूषित किया। पेड़ों की अंधाधुंध कटाई, अदूरदर्शी तरीके से बांध निर्माण, अत्यधिक खनन, परमाणु ऊर्जा का मनमाना प्रयोग, कृषि, चराई, हर चीज की अति। इन कदमों से हमने अपने आप को प्रकृति का नियंता मान लिया। समझा कि पृथ्वी तो हमारी है ही और इसके संसाधनों का प्रयोग करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। भला इसके प्रयोग में हमें कौन रोक सकता है। हम तो मानव होने के नाते ईश्वर द्वारा प्रदत्त अपनी अतुलनीय क्षमता का प्रयोग करने का पुनीत कर्तव्य निर्वहन कर रहे हैं। हम कितने मूर्ख है जो प्रकृति के विशाल उपहारों को चीर फाड़ कर अपनी क्षमता दिखाने की कोशिश कर रहे हैं।

इतना विशाल सूर्य जिसके क्षुद्राश प्रकाश से पृथ्वी पर जीवन पनप गया इतनी तीव्र वायु जो एक सांस में पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर को छू आती हैं। अतुल समुद्र जिसमें भूमण्डल से भी कहीं ज्यादा विविधता वाला रहस्यमय जीवन अभी भी विराजमान है। परन्तु मनुष्य ने इन सभी संसाधनों का गलत तरीके से उपयोग किया जिसके कारण वही सूर्य जो हमारे जीवन प्रवाह का कारण बना था एक दिन वही सूर्य हमारे जीवन के अंत का कारण बनेगा। निरंतर बढ़ रहे पर्यावरण के परिवर्तन के कारण एक शोध से पता चला कि वर्ष 2300 तक पृथ्वी इतनी गर्म हो जायेगी कि मनुष्य का कोई अस्तित्व नहीं बचेगा। वैज्ञानिकों के अनुसार सिर्फ तीन दशक में धरती का तापमान इतना बढ़ जायेगा कि पृथ्वी पर रह पाना मनुष्य के लिये असम्भव होगा। ऑस्ट्रेलिया के न्यू साउथ वेल्स यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों के अनुसार प्रतिवर्ष औसतन सात डिग्री सेल्सियस तापमान में वृद्धि हो रही है और इसका एक प्रमुख कारण लगातार जैव ईधन का पलना है जिसके लगातार जलने से उत्पन्न ऊष्मा की मात्रा दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और जिसकी वजह से 2300 तक धरती का तापमान मनुष्यों जीवित रहने

योग्य नहीं रह पायेगा।

निरंतर बढ़ते कंकरीट के जंजाल, वनों की अंधाधुंध कटाई कृषि के अदूरदर्शी तरीके, उर्वरकों का अति प्रयोग, सिंचाई हेतु हर जगह पृथ्वी का सीना बांध देना, काला जहर उगलते कारखाने निरंतर उड़ान भरते जहाज, लगातार बढ़ता वायु प्रदूषण जो हमारी सांसों में जहर घोल रहा है, सभी पृथ्वी के विनाश का कारण बने हुये हैं।

चारों तरफ सिर्फ होमो सेपियंस का वर्चस्व है क्योंकि वह सेवियंस यानि बुद्धिमान है किन्तु अफसोस कि इतना बुद्धिमान नहीं कि प्रकृति की, पर्यावरण और अन्य प्राणियों जो उनके लिये लाभदायी है कि महत्ता समझा सके।

ग्लोबल वार्मिंग या भूमण्डलीय तापन - जैसा कि नाम से स्पष्ट है ग्लोबल वार्मिंग अर्थात् धरती के तापमान में हो रही निरंतर वृद्धि। हमारी धरती प्राकृतिक तौर पर सूर्य की किरणों से ऊष्मा प्राप्त करती हैं। ये किरणें वायुमण्डल से गुजरती हैं और धरती की सतह से टकराती हैं और फिर वहीं से परावर्तित होकर पुनः लौट जाती हैं। धरती का वायुमण्डल कई गैसों से मिलकर बना है इनमें से अधिकांश धरती के ऊपर एक प्रकार से एक प्राकृतिक आवरण बना लेती हैं। यह आवरण लौटती किरणों के एक हिस्से को रोक लेती है और इस प्रकार धरती का वातावरण गर्म बना रहता है। परन्तु निरंतर बढ़ रही विषैली गैसों के कुप्रभाव से यह आवरण दिन प्रतिदिन सघन होता जा रहा है जिससे दिन-प्रतिदिन धरती का तापमान बढ़ता जा रहा है।

ग्लोबल वार्मिंग का कारण - भूमण्डलीय तापन/ग्लोबल वार्मिंग का सबसे बड़ा जिम्मेदार मनुष्य तथा उसकी गतिविधियां ही हैं। अपने आप को इस धरती का सबसे बुद्धिमान प्राणी समझने वाला मनुष्य अनजाने में या जानबूझकर अपने ही रहवास को खत्म करने में तुला हुआ है। मनुष्य जनित इन गतिविधियों से कार्बन डाई आक्साइड, मीथेन, नाइट्रोजन आक्साइड इत्यादि ग्रीनहाउस गैसो की मात्रा में बढ़ोत्तरी हो रही है। जिससे इन गैसों का आवरण सघन होता जा रहा है ग्लोबल वार्मिंग का अन्य कारण निरंतर नष्ट हो रही ओजोन परत हैं और इसकी एक प्रमुख वजह सीएफसी (क्लोरो फ्लोरोकार्बन) है जो रेफ्रिजरेटर्स, अग्निशामक यंत्रो इत्यादि में इस्तेमाल की जाती है। यह धरती के ऊपर बने एक प्राकृतिक आवरण ओजोन परत को नष्ट करती है अतः ग्लोबल वार्मिंग के प्रमुख कारण है :-

(1) ग्रीन हाउस गैस प्रभाव

(2) ओजोन परत का नष्ट होना

पर्यावरण को प्रभावित करने वाले कारक -

ग्रीन हाउस गैस - औद्योगीकरण, वनो के निरंतर कम होने तथा प्रदूषण के लगातार बढ़ने से वायुमण्डल में जलवाष्प कार्बन डाई आक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी ग्रीन हाउस गैस का जमा होना, पृथ्वी की सतह पर सूर्य ऊष्मा को फंसा देता है यानि पृथ्वी पर सूर्य से आने वाली ऊष्मा का एक बड़ा हिस्सा इन गैसों के कारण वापस अंतरिक्ष में नहीं जा पाता जिससे पृथ्वी के तापमान में वृद्धि होती है।

ग्रीन हाउस गैसों में विभिन्न गैसों का प्रतिशत

गैस	सूत्र	योगदान
वाटर वेपर	H_2O	36-72%
कार्बन डाई आक्साइड	CO_2	9-26%
मीथेन	CH_4	7-9%
ओजोन	O_3	3-7%

ग्रीन हाउस गैसे वर्षों तक वायुमण्डल में रहती हैं जिसका अर्थ है कि यदि इसके उत्सर्जन को रोक दिया जाये तो भी ग्लोबल वार्मिंग को तुरंत रोकना सम्भव नहीं।

कार्बन डाई आक्साइड, फ्लोरोकार्बन, मीथेन, नाइट्रस आक्साइड, ग्रीन हाउस की चार प्रमुख गैसे पर्यावरण और मनुष्य के जीवन के लिये चुनौती बन गयी हैं लेकिन इनके उत्सर्जन में मानव की ही महत्वपूर्ण भूमिका है।

भूमण्डलीय तापन के प्रमुख कारण इस प्रकार हैं।

(1) औद्योगिक इकाइयों, कारों से निकलने वाला धुंआ, जीवाश्म ईंधन आदि।

(2) कार से निकलने वाली एक गैलन गैसोलिन से लगभग 22 पाउंड CO_2 का उत्सर्जन।

(3) कोयला, प्राकृतिक गैस और तेल जैसे ईंधनों को जलाने से ग्रीन हाउस गैस भारी मात्रा में पैदा होता है। ग्रीन हाउस इफेक्ट यानी ऐसी गैसों का उत्सर्जन जो सूरज की गर्मी को वायुमण्डल में लेती है इससे गर्मी वायुमण्डल से बाहर नहीं निकल पाती।

(a) फ्लोरोकार्बन :- पृथ्वी की ओजान परत के लिये खतरनाक हाइड्रोफ्लोरोकार्बन से तापमान में वृद्धि होती है।

कारक :- मुख्यतः एयर कंडीशनर व फ्रिज

(b) मीथेन :- बैक्टीरिया जनित खतरनाक गैस है। कार्बन डाई आक्साइड की तुलना में इसके कण बीस गुना अधिक प्रभावशाली है। 35 से 50 करोड़ टन का उत्सर्जन प्रत्येक वर्ष होता है।

कारक :- कोयला खदान, कोयला गैस व जैव ईधन, जंगलों के जलने, धान रोपाई, कचरे से।

(c) नाइट्रस आक्साइड - इसका उत्सर्जन समुद्र व मिट्टी में पाये जाने वाले बैक्टीरिया से होता है। 7 से 13 करोड़ टन उत्सर्जन हर वर्ष/कार्बन डाई आक्साइड की तुलना में इसके कण 200 गुना अधिक प्रभावशाली है।

कारक - सिवरेज ट्रीटमेंट प्लांट

- नाइट्रोजन युक्त खाद
- पशुओं और मानव का मल
- आटोमोबाइल

ग्रीन हाउस गैसों का विभिन्न क्षेत्रों द्वारा उत्सर्जन (वार्षिक)

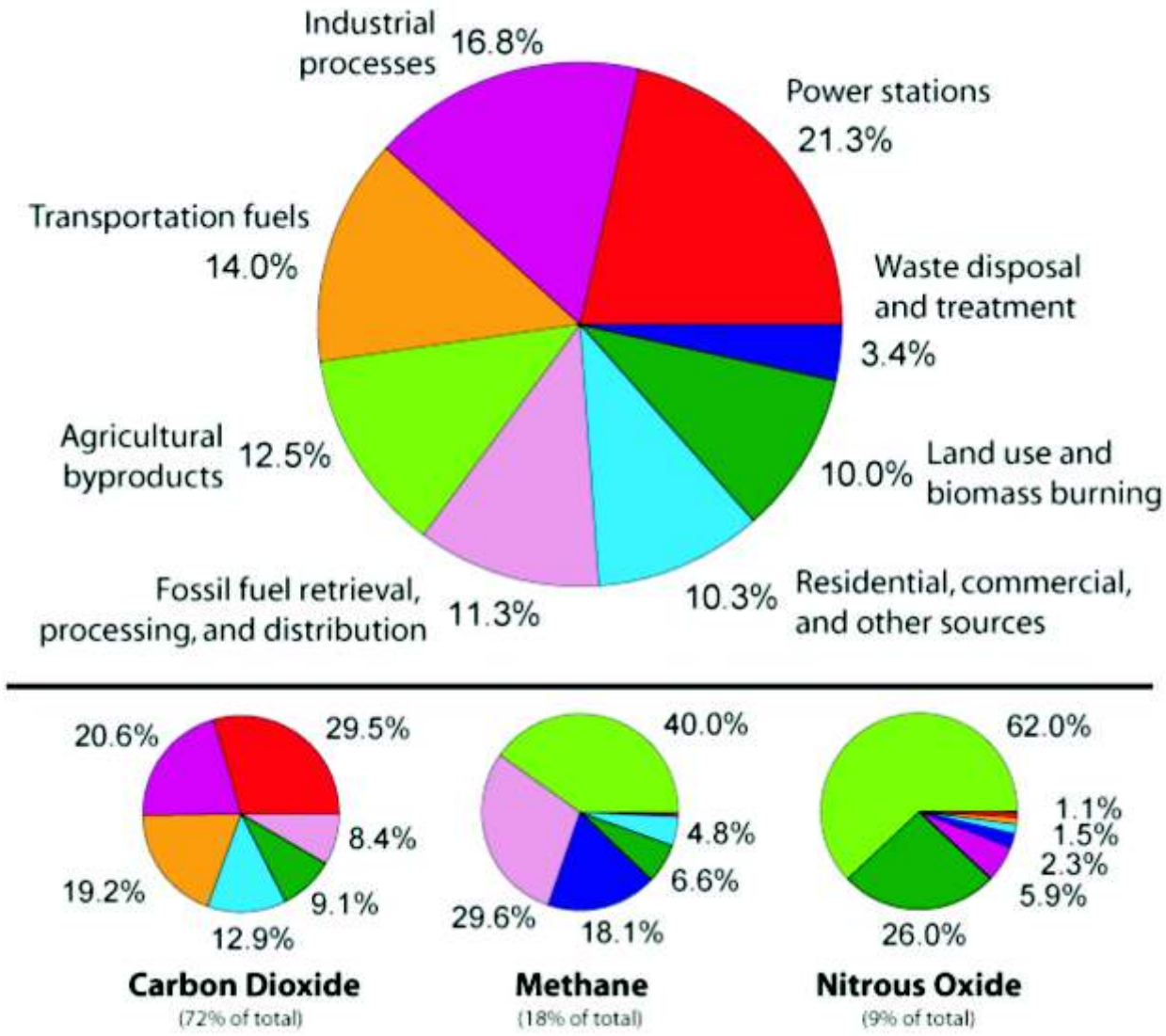

ग्लोबल वार्मिंग का एक बहुत बड़ा कारण तथा ग्रीन हाउस गैस में सबसे अधिक प्रतिशत CO_2 का ही है। CO_2 ही एक ऐसी गैस है जो पर्यावरण के लिये खतरे का कारण बन गयी है और जिसका एक बहुत बड़ा कारण है पेड़ों का नष्ट होना।

दिन प्रतिदिन वनों तथा पेड़ों का नष्ट होना पर्यावरण के लिये अभिशाप बन गया है इसी के कारण ही पूरे पर्यावरण का संतुलन ही बिगड़ गया है। भूकम्प, बाढ़, सूखा एवं अकाल ओजोन क्षरण सभी इसी के परिणाम हैं। दिन प्रतिदिन कम होती पेड़ों की संख्या के कारण CO_2 की मात्रा बढ़ती जा रही है।

प्रकृति में कार्बन चक्र - सजीव पदार्थ की संरचना में भाग लेने वाले सभी कार्बनिक यौगिकों में कार्बन होता है। इस कार्बन के मुख्य स्रोत हैं :-

(1) वायुमण्डल

(2) समुद्र

(3) कार्बोनेट पत्थर (चूने का पत्थर)

(4) कोयला एवं पेट्रोलियम

जीवधारी मुख्य रूप से CO_2 के रूप में कार्बन ग्रहण करते हैं, पृथ्वी के वायुमण्डल में 0.03-0.04% तक CO_2 है। कार्बन चक्र एक पूर्ण चक्र है क्योंकि वायुमण्डल एवं जीवमण्डल के बीच लगातार CO_2 का विनिमय होता रहता है। इसी चक्र के कारण वायुमण्डल में कार्बन का संतुलन बना रहता है। अतः जीवधारियों

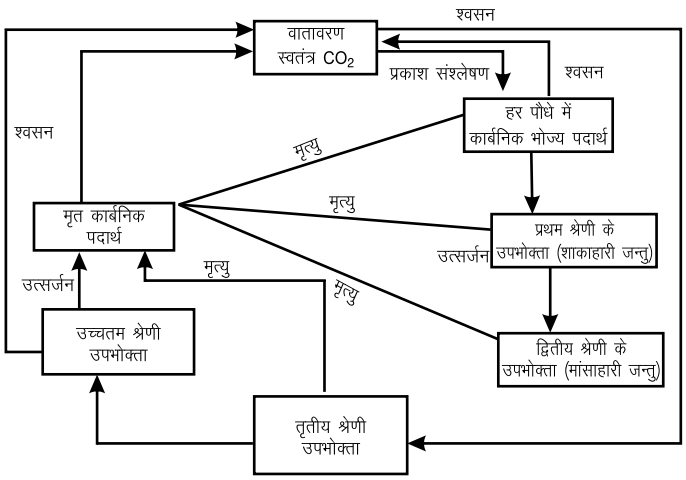

के शरीर का समस्त कार्बन उन्हें वायुमण्डल की CO_2 से प्राप्त होता है।

प्रकृति में कार्बन चक्र का वर्णन निम्न पदों में कर सकते हैं :-

(1) प्रकाश संश्लेषण की क्रिया CO_2 के रूप में पादपों द्वारा ग्रहण करके कार्बनिक पदार्थो में परिवर्तित हो जाता है यही कार्बनिक पदार्थ शरीर का निर्माण करते हैं।

(2) पादप श्वसन द्वारा कार्बन की कुछ मात्रा को CO_2 के रूप में वायुमण्डल में उत्सर्जित कर देते हैं।

(3) पौधों को शाकाहारी जन्तु खाते हैं, जिससे कार्बन इन जन्तुओं के शरीर पर पहुँच जाता है।

(4) शाकाहारी जन्तु कार्बन को CO_2 के रूप में त्याग देते हैं तथा कुछ प्रतिशत मांसाहारी जन्तुओं के शरीर में चला जाता है। इस प्रकार कार्बन यौगिक के रूप में उत्पादकों से खाद्य श्रृंखला के सर्वोच्च उपभोक्ताओं तक पहुँचता है। ये भी कुछ प्रतिशत कार्बन को CO_2 के रूप में बाहर निकालते हैं।

(5) अंत में उत्पादक एवं उपभोक्ता जन्तुओं के मरने पर इनके कार्बनिक यौगिकों को अपघटित करके इन्हें CO_2 तथा ह्यूमस में बदल लेते हैं। CO_2 वायुमण्डल में चली जाती है तथा ह्यूमस भूमि या जल में रह जाता है।

(6) CO_2 व ह्यूमस को पौधे पुनः ग्रहण कर लेते हैं तथा कार्बन चक्र पुनः आरम्भ हो जाता है।

(7) पौधे, सीपी तथा अन्य मौलस्क जल से CO_2 को अवशोषित करते है तथा कैल्शियम के साथ मिलकर कैल्शियम कार्बोनेट का खोल बनाते हैं। मृत मौलस्कों के खोल समुद्र के तल पर जमा होते रहते हैं।

(8) लकड़ी व जीवाश्म ईंधन (कोयला, पेट्रोल) व अन्य ज्वलनशील पदार्थो के जलने पर कार्बन CO_2 के रूप में मुक्त होकर वायुमण्डल में आ जाता है। इस प्रकार वायुमण्डल में CO_2 की मात्रा बढ़ जाती है।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य कारक जैसे औद्योगिक इकाइयों, कारों से निकलने वाला धुंआ आदि सभी CO_2 की अधिकता के कारण हैं।

सारिणी-1

विभिन्न देशों द्वारा CO_2 का उत्पादन

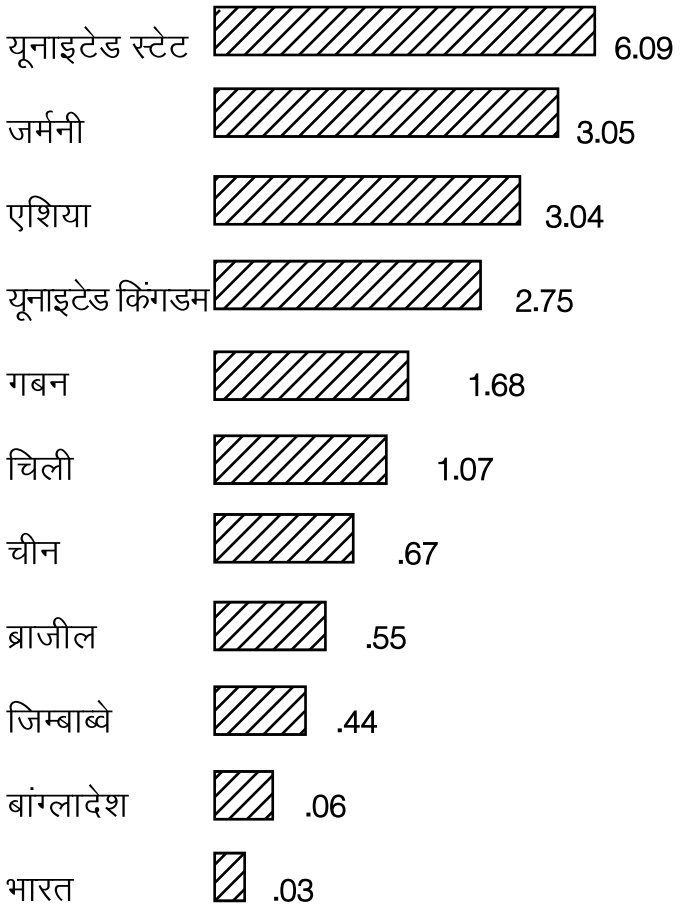

CO_2 का वातावरण में विभिन्न वर्षों में प्रतिशत

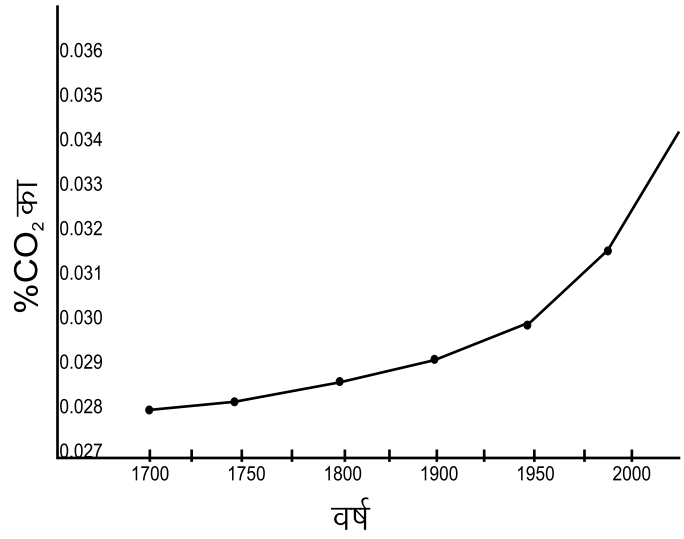

ओजोन परत का महत्व : - ओजोन परत का महत्वपूर्ण कार्य पर्यावरण की सुरक्षा करना है यह हानिकारक पराबैंगनी किरणों को पृथ्वी पर पहुँचने से रोकता है परंतु आजोन परत में छिद्र होने यह हानिकारक किरणें पृथ्वी पर पहुँचकर अनेक प्रकार की समस्या उत्पन्न कर रही हैं। इसका भी एक बहुत बड़ा कारण ग्रीन हाउस गैस में वृद्धि होने से फलस्वरूप है।

ओजोन परत पृथ्वी के लिये एक सुरक्षा कवच का काम करता है इसकी जानकारी सर्वप्रथम 1939 में श्योनवाइन नामक वैज्ञानिक ने दी थी। यह आजोन परत सूर्यप्रकाश पुन्ज की हानिकारक पराबैंगनी किरणों को ऊपरी वायुमण्डल में रोक लेती है यह पराबैंगनी किरणें 400 नैनोमीटर से कम तरंग वैर्ध्य वाली होती हैं इन्हें तीन श्रेणियों अ, ब, स में विभाजित किया गया है। पराबैंगनी अ (315-400 नैनोमीटर) किरणों का पृथ्वी आगमन पर ओजोन क्षरण का विशेष प्रभाव नहीं पड़ता यह किरणें स्वयं में हानिकारक नहीं होती हैं। पराबैंगनी 'ब' किरणें (280-315 नैनोमीटर) पृथ्वी तथा पृथ्वी पर रह रहे मनुष्यों, पशुओं वनस्पतियों आदि के लिये अत्यन्न हानिकारक होती हैं। इन किरणों से उत्पन्न 68 मिली. जूल प्रतिवर्ग सेमी. ऊर्जा चेहरे पर झुर्रियों को जन्म देती है यदि हिस्टमीन की मात्रा त्वचा में 4 गुनी अधिक पैदा हो, तो उस स्थान की त्वचा में लाल चकत्ते व कभी-कभी फफोले भी पड़ जाते हैं और अधिक मात्रा बढ़ने पर त्वचा कैंसर जैसे भयानक रोग भी हो जाते हैं। पराबैंगनी स (100-280 नैनोमीटर) किरणें सबसे अधिक हानिकारक होती हैं। परन्तु ओजोन परत इन किरणों को पृथ्वी तक नहीं पहुँचने देती।

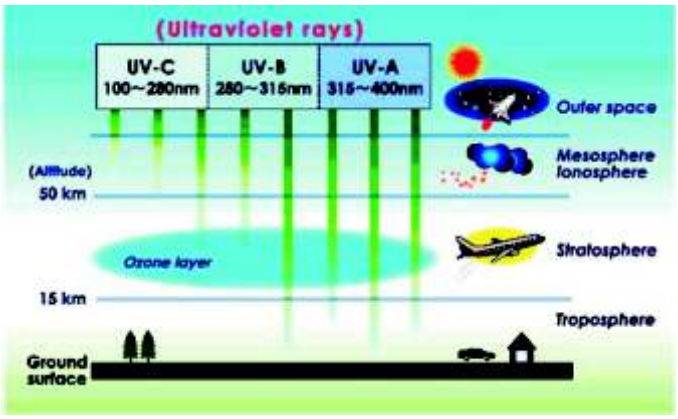

ओजोन परत नष्ट होने के दुस्प्रभाव :-

1. इस सदी में तापमान पांच से छः डिग्री तक बढ़ने का अनुमान है जबकि दो डिग्री की भी वृद्धि दुनिया में तबाही ला सकती है।

2. एक डिग्री सेल्सियस की वृद्धि से वनस्पतियों की कई प्रजातियों के लिये खतरा उत्पन्न हो सकता है।

3. दो डिग्री वृद्धि का असर फसलों की पैदावार पर, रूस व यूरोप पर अधिक प्रभाव पड़ सकता है।

4. जानवरों और पौधों की 12 हजार प्रजातियों के खत्म होने की आशंका है।

5. 2.8 अरब लोग पानी की किल्लत झलेंगे क्योंकि पृथ्वी पर मौजूद पानी का 97.4% समुद्रो में खारे पानी के रूप में है जो पीने लायक नही होता और 1.8% ग्लेशियर के रूप में है अतः धरती पर उपलब्ध कुल पानी लगभग 0.8% ही पानी लायक मीठा पानी है।

6. ध्रुवीय इलाकों के बाद पूर्वी हिमालय दुनिया का ऐसा क्षेत्र है। जहाँ का बहुत बड़ा भू-भाग बर्फ से ढका है इससे प्रतिवर्ष काफी मात्रा में स्वच्छ जल मिलता है। इसलिये इसे 'वाटर टावर' कहा जाता है। तापमान में वृद्धि के कारण हिमालय में सम्पूर्ण हिंदु कुश की बर्फ पिछले दो दशकों में काफी घट गयी है। साथ ही साथ हिमालय में ग्लेशियर के तेजी से पिघलने के कारण स्वच्छ जल स्त्रोत घटता जा रहा है और नदियों में बाढ़ का खतरा बढ़ गया है।

वैश्विक स्तर पर किये जा रहे उपाय :-

अभी तक जलवायु परिवर्तन के काम करने के लिये इंटरनेशनल इंस्टूमेंट के नाम पर क्योटो संधि की है। 1997 में जापान के क्योटो में एकत्रित विश्व के अधिकांश राष्ट्र इस बात पर सहमत हुये कि राष्ट्रों द्वारा ग्रीन हाउस गैस के उत्सर्जन में कमी करनी चाहिये। इसके तहत बाकायदा समय सीमा तय की गयी कि 2008-12 तक ग्रीन हाउस गैस का उत्सर्जन वर्ष 1990 को उत्सर्जन से औसतन 5.2% कम किया जायेगा। जून 2008 तक इस क्योटों प्रोटोकॉल पर हस्ताक्षर करने वाले राष्ट्रों की संख्या 182 थी। लेकिन इस प्रोटोकाल की कमजोरी यह है कि केवल एक तिहाई बड़े प्रदूषक देश ही शामिल है और दूसरा मुख्य कारण इस लक्ष्य का बहुत नरम होता है महज 2012 तक 1990 के कार्बन स्तर में 5.2% ही कटौती लाना। इस प्रकार क्योटों संधि के बावजूद कार्बन उत्सर्जन बढ़ता जा रहा है।

पिछले वर्ष यूनएफसीसीसी का वाली सम्मेलन बहुत ही महत्वपूर्ण था। इसमें 2012 के बाद का रोडमैप तैयार करना था। अभी क्योटो प्रोटोकॉल में केवल विकसित देशों का लक्ष्य दिया गया है। 2010 के बाद इसमें विकासशील देशों को भी शामिल करने का लक्ष्य है। इस बार एक और बात हुयी कि अमेरिका भी संधि का हिस्सा बनने को तैयार है जो पहले क्योटो प्रोटोकॉल में शामिल नहीं हुआ था। परंतु भारत जैसे विकासशील देश अपने देश की गरीबी दूर करने के लिए संघर्षरत है। अतः इसके लिये वे ग्रीन हाउस गैसों को कम करने के लिये कोई वायदा नहीं करना चाहता

है क्योंकि भारत में अभी 600 मिलियन आबादी के पास बिजली नहीं है और 700 मिलियन जनता अभी भी लकड़ी या गैस से खाना पकाती है इसलिये विकासशील देश किसी संधि के तहत कानूनी तौर पर बंधना नही चाहते हैं।

तमाम विश्व संगठन यथा ASEAN, SCO, DPO, LOTO आदि द्वारा समय-समय पर जलवायु परिवर्तन व पर्यावरण संरक्षण पर विचार किया जा रहा है अभी पिछले वर्ष हुये 16वें सार्क सम्मेलन जो 28 अप्रैल से 29 अप्रैल 2009 के मध्य भूटान की राजधानी थिम्पू में सम्पन्न हुआ, उसका दूसरा प्रमुख मुद्दा ही जलवायु परिवर्तन के दोहरे खतरों से दक्षिण एशिया को मुक्त करने को था।

ओजोन परम का क्षरण केवल मनुष्यों के लिये नहीं वरन् पेड़-पौधे व जन्तु के लिये भी अत्यन्त हानिकारक है। सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणों का सबसे अधिक प्रभाव मनुष्य के नेत्रों पर पड़ता है। ओजोन परत् के 1% भाग के क्षरण से लगभग 0.7-0. 8% मोतियाबिन्द के मरीजों की वृद्धि होती है।

पराबैंगनी किरणों का प्रभाव केवल मनुष्यों पर ही नहीं अपितु पेड़ पौधों व कृषि पर भी पड़ता है। पराबैंगनी किरणों के दुस्प्रभाव के फलस्वरूप पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है। जिससे पौधों की प्रजनन शक्ति क्षीण होने से उनकी उत्पादन क्षमता में कमी आ जाती है।

पराबैंगनी किरणों का प्रभाव जलीय जीव-जन्तुओं पर भी पड़ता है। 5% ओजान परत के क्षय होने से 6 मिलियन टन मछलियों की उत्पत्ति में कमी पायी गयी है। भूपटल से वर्तमान में अनेक पक्षियों, सरीसृपों, स्तरधारी जीवों की भी अनेक प्रजातियां विलुप्त होने के कगार पर हैं।

उपसंहार - खैर अब तक तो बात हुयी कि हमने क्या कर डाला पर मुद्दा तो यह है कि हम क्या कर सकते हैं? 'बीति ताहि बिसार दे, आगे, की सुधि लेई।' भगवान का लाख-लाख शुक्र है कि हम समझे काफी कुछ खोने के बाद। अब भी हमारे पास बचाने के लिये खोने से बहुत कुछ ज्यादा है।

विश्व पर्यावरण दिवस इसी खोने से बचाने का एक उपाय है। इसका लक्ष्य है पर्यावरण के संरक्षण व संवर्धन हेतु लोगों में जागरूकता लाना व कार्यक्रम आयोजित करना। UNO के तत्वाधान में हुये स्टॉक होम सम्मेलन में 1972 में इस दिवस को हर वर्ष 5 जून को आयोजित करने का निर्णय लिया गया। इसी के साथ इसी दिन U.N.E.P. (United Nations Environment Programme) भी अस्तित्व में आया जो समग्र पर्यावरण के संरक्षण व संवर्धन हेतु संयुक्त राष्ट्र द्वारा आयोजित किये जाने वाले कार्यक्रमों का एक शीर्ष एजेडा है। वैश्विक स्तर पर, देश एवं राज्यों के स्तर पर पर्यावरण संरक्षण व संवर्धन हेतु किये जा रहे प्रयासों में U.N.E.P. का तकनीकि व संगठनात्मक सहयोग आमतौर पर रहता है। इसी दिशा में कई अन्य कार्यक्रम जेसे पृथ्वी दिवस, ओजोन संरक्षण दिवस आदि कई महत्वपूर्ण प्रयास किये जा रहे हैं।

प्रदूषण से ताजमहल की सुरक्षा

पूनम पाण्डेय, अम्बरीश कुमार वर्मा, ए0एच0 खान,
पर्यावरण अन्वेक्षण विभाग

आगरा में यमुना तट पर स्थित, शाहजहाँ ने अपनी पत्नी मुमताज की स्मृति में जो भव्य एवं अद्वितीय कला का परिचायक भवन बनवाया था, वह आज ताजमहल के नाम से जाना जाता है। इसको बनवाने में विभिन्न प्रकार के पत्थरों का इस्तेमाल किया गया है, जिसमें पारदर्शी सफेद संगमरमर, फिरोजा यशब, जेह, क्रिस्टल, लापीस एवं लाजुली प्रमुख हैं। इन सभी पदार्थों में सर्वाधिक मात्रा में सफेद, पारदर्शी संगमरमर प्रयोग किया गया, जो राजस्थान के मकराना नामक स्थान से मंगवाया गया था। ताजमहल का अद्वितीय नमूना है।

आगरा शहर की गुणवत्ता

ताज समलम्ब क्षेत्र में उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की पर्यावरण निम्नलिखित योजना की रिपोर्ट के आधार पर प्रदूषकों का स्तर निम्नलिखित है।

तालिका-1 आगरा शहर में वायु गुणवत्ता

वर्ष	सल्फर डाई आक्साइड (माइक्रोग्राम प्रति घन मी.)	नाइट्रोजन आक्साइड (माइक्रोग्राम प्रति घन मी.)	आर.एस.पी.एम. (श्वसन योग्य विलंबित कण) (माइक्रोग्राम प्रति घन मी.)	एस.पी.एम. (विलम्बित कण) (माइक्रोग्राम प्रति घन मी.)
2002	5	22	147	376
2003	4	22	145	352
2004	5	18	133	309
2005	9	22	147	306
2006	6	22	133	316
2007	6	23	167	296
2008	7	22	167	304
2009	6	20	157	334
वायु गुणवत्ता मानक	20	30	60	70

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड 2006 में किए गए एक अन्वेक्षण के अनुसार वर्ष भर आर.एस.पी.एम का स्तर निम्न प्रकार पाया गया।

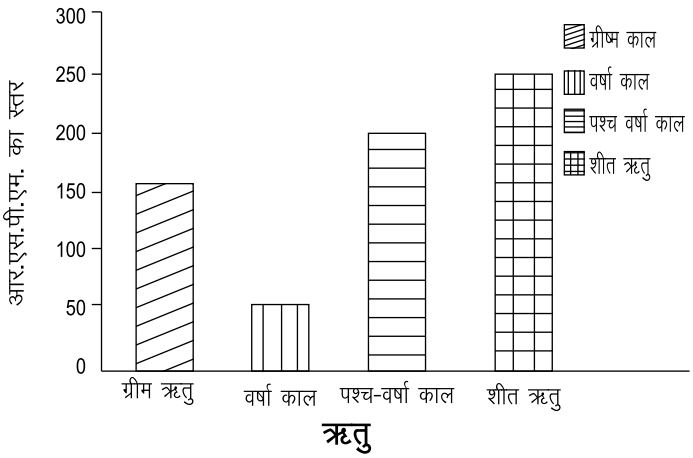

चित्र-आर.एस.पी.एम. का स्तर वर्ष 2006

एक अन्य शोध के अनुसार (2008) पॉली साइ क्लिक एरोमेटिक हाइड्रोकार्बन (AAHC) की औसत मात्रा 0.32 नैनोग्राम प्रति घनमी. पायी गयी। इस शोध मे बेन्जोपाइरीन की मात्रा 0.005-0.23 नैनौग्राम प्रति घनमी. पायी गयी। यह अत्यन्त कैंसर जनिक प्रदूषक है जो IARC (अंतराष्ट्रीय एंजेसी शोध एव कैंसर) द्वारा कैंसर जनिक पदार्थो की श्रेणी में रखा गया है।

विन्ड रोज -(WIND ROSE)

विन्ड रोज एक प्रकार का ग्राफिक निरूपण है जो मौसम विज्ञानियों द्वारा किसी विशेष स्थान पर निश्चित समय में हवा की गति एवं दिशा को बताता है। विन्ड रोज की सहायता से हम प्रदूषकों का वायु मे वितरण का मापन कर सकते है आगरा मे कई शोधकर्ताओं ने वायु गुणवत्ता के साथ-साथ विण्ड रोज का भी निरूपण किया है हाल ही में एक शोधकर्ता द्वारा किए गए आकंलन के अनुसार आगरा में सूक्ष्म कण एवं मौसम के विभिन्न घटकों का वर्णन तालिका 2,3 तथा चित्र -2 में वर्णित है।

तालिका-2 वर्ष 2008 में पी.एम. 10, पी.एम. 2.5 तथा मौसम के विभिन्न घटक

घटक	तापमान ^{o}C	सापेक्ष आर्द्रता %	वायु गति कि/घं	पी.एम. माइक्रोग्रा./मी.^{3}	पी.एम. माइक्रोग्रा./मी.^{3}
कुल नमूने के दिन	266	266	266	77	78
माध्य	24.7	58	1.9	154.2	104.9
निम्नतम	11.7	17.3	0	33.2	22.8
अधिकतम	39.7	95	16.1	295.3	215.1

स्त्रोत - कुलश्रेष्ठ, 2009

औसत वायु वितरण इस प्रकार देखा गया -

तालिका -3 औसत वायु वितरण

दिशा	प्रतिशत वितरण
उत्तर	2
उत्तर उत्तर पूर्व	4
उत्तर पूर्व	11
पूर्व उत्तर पूर्व	11
पूर्व	11
पूर्व दक्षिण पूर्व	2
दक्षिण पूर्व	2
दक्षिण दक्षिण पूर्व	0
दक्षिण	1
दक्षिण दक्षिण पश्चिम	23
दक्षिण पश्चिम	29
पश्चिम दक्षिण पश्चिम	2
पश्चिम	1

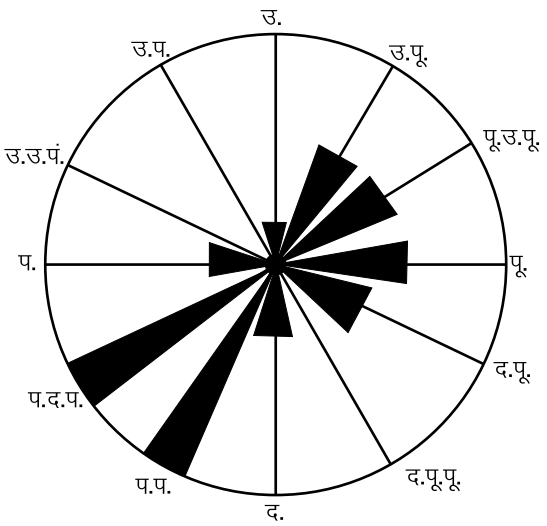

चित्र-2 विण्ड रोज आगरा-2008
स्त्रोत-कुलश्रेष्ठ-2008

औद्योगिक विकास एवं शहरीकरण के कारण कला का अद्वितीय परिचायक ताजमहल अपने सौन्दर्य को दिन-प्रतिदिन खोता जा रहा है। अतः यह हमारे सामने एक समस्या बन गयी है कि इस अनूठे स्मारक चिन्ह को नष्ट होने से कैसे बचावें? इस समस्या के समाधान के लिए हमें निम्न बातों पर ध्यान देना होगा :-

संगमरमर कैसा पदार्थ है?

यह रवादार और सघन पत्थर है। यह चूने के पत्थरों का सबसे मजबूत और सबसे ज्यादा टिकाऊ रूप है। शुद्ध संगमरमर सफेद रंग का होता है, लेकिन विभिन्न अशुद्धियों के कारण यह अनेक रंगों में पाया जाता है, जैसे- भूरा, पीला, हरा, लाल, नीला और काला संगमरमर। शुद्ध संगमरमर में 99 प्रतिशत कैल्शियम कार्बोनेट होता है। अतः इसे कैलकेरिस राक भी कहते है। रवादार और सघन होने के कारण संगमरमर पर बहुत अच्छी पालिश की जा सकती है। प्रदूषण के सम्पर्क में आने पर यह पालिश अधिक समय तक नहीं टिकती। संगमरमर का औसत भार 169 पौण्ड प्रति घन फीट होता है।

संगमरमर एक मैटामारफिक राक है जो चूने के पत्थर से बनता है। जब चूने के पत्थर पर बहुत अधिक गर्मी और दबाव डाला जाता है, तो यह संगमरमर में बदल जाता है। यदि चूने के पत्थर को इस प्रकार गर्म किया जाय कि उसमें से कार्बन डाइआक्साइड बाहर न निकलने पाये तो चूने का पत्थर कृत्रिम संगमरमर में बदल जाता है। इस ऊष्मा के कारण इसकी भौतिक संरचना बदल जाती है, परन्तु रासायनिक संगठन वैसा ही रहता है।

किन-किन कारणों से संगमरमर का क्षय होता है?

संगमरमर को खतरा मुख्यतः कोयला के जलने से उत्पन्न गैसों तथा पेट्रोलियम पदार्थों के जलने से उत्पन्न गैसों के कारण होता है। कच्चे खनिज तेल के आंशिक शोधन से उत्पन्न गैस भी संगमरमर को बहुत नुकसान पहुँचाते हैं।

ताजमहल को नुकसान पहुँचाने वाले संस्थान

मुख्यतः 250 से ज्यादा धातु गलाने के कारखाने, रेलवे सन्टिग यार्ड और भी अनेक प्रकार के कल-कारखाने, घर दुकान और होटलों में जलने वाले चूल्हे इत्यादि से उत्पन्न सल्फर-डाईआक्साइड गैस, कार्बन डाईआक्साइड गैस, कार्बन तथा कालिख के महीन कण और राख के कण अलग-अलग तथा एक साथ अनेकों प्रकार से ताजमहल तथा अन्य पत्थरों तथा अन्य पत्थरों के स्मारक चिन्हों तथा मूर्तियों को बहुत नुकसान पहुँचा रहे हैं।

आगरा एवं समीपवर्ती स्थानों के प्रमुख कारखाने जो ताजमहल को क्षतिग्रस्त कर रहे हैं :-

- लोहे की ढलाई (फाउण्ड्री) - आगरा

- फेरो मिश्र धातु उद्योग - आगरा
- रबर प्रसंस्करण - आगरा
- ईंट भट्टे उद्योग - आगरा एवं आसपास के क्षेत्र
- रसायन उद्योग - आगरा
- चूड़ी एवं ग्लास उद्योग - फिरोजाबाद
- तेल - रिफाइनरी
- उद्योग - मथुरा

मोटरकार, ट्रक, बस, ट्रैक्टर, लालटेन, बत्ती, स्टोव इत्यादि में जलने वाले पेट्रोल, डीजल, मिट्टी का तेल आदि से उत्पन्न गैस भी पर्यावरण को दूषित कर रहे हैं। यही सब पर्यावरण को दूषित करने वाले मुख्य स्रोत हैं जो ताजमहल को नुकसान पहुँचा रहे हैं।

कार्बन डार्डआक्साइड कैसे क्षय करता है?

कार्बन डार्डआक्साइड पानी में घुलनशील है। साधारण तापक्रम पर एक आयतन पानी में एक आयतन गैस घुलता है। यह गैस पानी में घुलकर एक कमजोर और अस्थायी कार्बोनिक अम्ल बनता है। इस गैस और जल के बीच प्रतिक्रिया निम्न प्रकार से होती है -

$$CO_2 + H_2O = H_2CO_3$$

हम यह भी जानते हैं कि संगमरमर (कैल्शियम कार्बोनेट) जल में व्यवहारिक रूप से अघुलनशील है, लेकिन कार्बोनिक अम्ल में बहुत आसानी से घुल जाती है। कैल्शियम कार्बोनेट, कार्बोनिक अम्ल के साथ प्रतिक्रिया कर कैल्शियम बाइकार्बोनेट बनाता है जो पानी में बहुत ज्यादा घुलनशील है। इस तरह कार्बोनिक अम्ल संगमरमर को घोलकर नष्ट कर देता है।

$$CaCO_2 + H_2CO_3 = Ca(HCO_3)_2$$

कैल्शियम बाइकार्बोनेट का एक गुण है कि यह गर्म करने पर या लम्बे समय तक रखने पर यह टूटकर फिर कैल्शियम कार्बोनेट का अवक्षेप देता है।

$$Ca(HCO_3)_2 = CaCO_3 + H_2O\downarrow + CO_2\uparrow$$

इस तरह हम पाते हैं कि कार्बन डाइआक्साइड संगमरमर को धीरे-धीरे लेकिन अनवरत रूप से क्षय करती रहती है।

चूँकि यह गैस हवा से 153 गुना भारी है, अतः इस गैस की सान्द्रता पर्यावरण के निचली सतहों में ज्यादा रहती है। पर्यावरण में उपस्थित नमी (जल की छोटी-छोटी बूंदों) से मिलकर कार्बोनिक अम्ल बनता है जो द्रव की छोटी-छोटी बूंदों के रूप में पर्यावरण की निचली सतहों पर हवा में तैरता रहता है। पर्यावरण में उपस्थित कार्बोनिक अम्ल की ये छोटी-छोटी बूंदे संगमरमर तथा अन्य पत्थर के स्मारक चिन्हों तथा मूर्तियों का क्षय करती रहती है।

सल्फर-डाइआक्साइड कैसे क्षय करता है?

सल्फर-डाइआक्साइड जल में बहुत ज्यादा घुलनशील है। O°C तापक्रम पर एक आयतन जल में 80 आयतन गैस घुलता है। यह गैस पानी में घुलकर सल्फ्यूरस अम्ल बनाती है।

यह सल्फ्यूरस अम्ल संगमरमर से प्रतिक्रिया पर अघुलनशील कैल्शियम सल्फाइट बनाता है।

$$SO_2 + H_2O = H_2SO_3$$

$$CaCO_3 + H_2SO_3 = CaSO_3\downarrow + H_2O + CO_2\uparrow$$

यह कैल्शियम सल्फाइट ज्यादा सल्फ्यूरस अम्ल या सल्फर-डाइआक्साइड तथा नमी (जल) से संयोग कर घुलनशील कैल्शियम बाइसल्फाइट बनाता है।

$$CaSO_3 + H_2SO_4 = Ca(HSO_3)_2$$

या

$$CaSO_3 + SO_2 = Ca(HSO_3)_2$$

कभी-कभी नमी की उपस्थिति में, सल्फर-डाइआक्साइड का परिवर्तन सल्फ्यूरिक अम्ल में हाइड्रोजन की मुक्ति से या आक्सीजन की प्राप्ति होने से हो जाता है।

$$SO_2H_2O = H_2SO_3 + 2H$$

$$SO_2 + H_2O + O = H_2SO_4$$

जलीय सल्फर-डाइआक्साइड वायुमण्डलीय आक्सीजन से संयोग करके भी सल्फ्यूरिक अम्ल का निर्माण करता है।

$$H_2O + SO_2 + O_2 = H_2SO_4$$

पर्यावरण में उड़ती हुई राख की उपस्थिति में सल्फर-डाइआक्साइड आक्सीकृत होकर सफल्र-ट्राय-आक्साइड में परिवर्तित हो जाता है और अन्तिम रूप से सल्फ्यूरिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है जो द्रव की छोटी-छोटी बूँदों के रूप में पर्यावरण में हवा में तैरता रहता है जो संगमरमर को कैल्शियम सल्फेट में परिवर्तित कर नष्ट कर देता है।

$$CaSO_3 + H_2SO_4 = CaSO_4 + H_2O + CO_2 \uparrow$$

कैलशियम सल्फेट, सल्फ्यूरिक अम्ल तथा जल दोनों में अघुलनशील है। अतः यह संगमरमर और अम्ल के बीच का सम्बन्ध समाप्त कर देता है। फलस्वरूप इन दोनों के बीच प्रतिक्रिया आगे बढ़ नही पाती है। इस तरह और आगे संगमरमर का क्षय होना बन्द हो जाता है। अतः सल्फ्यूरिक अम्ल की तुलना में सल्फ्यूरस अम्ल संगमरमर के लिए ज्यादा खतरनाक है।

अनेक कारणों से उत्पन्न सल्फर-डाइआक्साइड गैस, फैलाव तथा हवा की हलचल के बावजूद भी पर्यावरण में समान रूप से नहीं मिल पाता है। इस गैस की सान्द्रता पर्यावरण के निचली सतहों में ज्यादा रहती है। पर्यावरण में उपस्थित नमी के साथ संयोग से सल्फ्यूरस तथा सल्फ्यूरिक अम्ल बनता है, जो द्रव की छोटी-छोटी बूंदों के रूप में पर्यावरण की निचली सतहों पर हवा में तैरता रहता है। पर्यावरण में उपस्थित अम्लों की ये छोटी-छोटी बूंदे संगमरमर तथा अन्य पत्थर के स्मारक चिन्हों तथा मूर्तियों का क्षय करती रहती है।

कार्बन और कालिख के कण कैसे क्षय करते हैं?

दूषित पर्यावरण में उपस्थित कार्बन तथा कालिख के महीन कण, राख के कण तथा धूल जब कुछ भारी होते हैं तो जमीन पर गिरने लगते हैं। इन कणों का कुछ भाग ताजमहल पर भी गिरता है जो उसे मैला कर देता है। कार्बन कणों का एक गुण सर्वविदित है कि कुछ गैसों तथा नमी को भारी मात्रा में अपने सतहों पर सोख लेते है जिससे ताजमहल को नुकसान पहुँचता है। संगमरमर छिद्रदार पत्थर है। अतः वर्षा के पानी के साथ कार्बन, कालिख, राख, तथा धूल के कण संगमरमर के महीन छिद्रों में घुस जाते है। ये कण संगमरमर को मैला कर देते है।

ताजमहल को सुरक्षित रखने के उपाय

ताजमहल की सतहों पर एकत्रित मैल तथा वनस्पति-वृद्धि उसे अनवरत नुकसान पहुंचाते है। अतः सर्वप्रथम इसकी सफाई पर ध्यान देना होगा कि संगमरमर की बाहरी तथा भीतरी सतहें साफ रहें। इसकी सतहों की सफाई महीने दो महीने में निम्न प्रकार से की जानी चाहिए-

1. संगमरमर की सफाई -

संगमरमर की सतह की सफाई 5 प्रतिशत अमोनिया के घोल से की जाती है। अमोनिया का घोल ग्रीस तथा मैल के साथ एक तेलयुक्त मिश्रण बनाता है, जिसे आसानी से धोकर दूर कर दिया जाता है। अगर संगमरमर की सतहें, लाइकेन (Lic kens) तथा अन्य वनस्पति उपज के कारण हरी, भूरी या काली हो गयी हों तो उसे भी 5 प्रतिशत अमोनिया का घोल धो डालता है। पुराने तथा सड़े हुए लाइकेन या दूसरे वनस्पति-उपज को अमोनिया का घोल तेजी से छोटे-छोटे भागों में पृथक कर देता है जिसे आसानी से धोकर अलग कर दिया जाता है। अमोनिया के घोल को प्रयोग में लाने का एक लाभ यह भी है कि अमोनिया और जल दोनों बिना कोई अवशेष छोडे उड़ जाते है।

2. ताजमहल के परिसर में घास उगाकर-

पौधों के प्रकाश - संश्लेषण के गुण के आधार पर पौधों को दो प्रकार में बांटा जा सकता है- C_3 पौधा और C_4 पौधा। वे पौधे जिनके प्रकाश-संश्लेषण का पहला प्रतिफल फासफोग्लाइसेरिक अम्ल (एक 3-कार्बन यौगिक) है तो उन्हें C_3 पौधा कहते है। वे पौधे जिनके प्रकाश-संश्लेषण का पहला प्रतिफल आक्जैलोएसिटक अम्ल (एक 4 - कार्बन यौगिक) है तो उन्हें C_4 पौधा कहते है। हम जानते है कि C_4 पौधों की प्रकाश-संश्लेषण की गति C_3 पौधा की प्रकाश-संश्लेषण की गति से दुगुनी होती है। यानी इकाई समय में C_4 पौधा, C_3 पौधा से दुगुनी मात्रा मे कार्बन डाइआक्साइड का उपयोग करता है। C_3 पौधों और C_4 पौधों के पत्तों की संरचना में अन्तर के कारण ही दोनों प्रकार के पौधों के प्रकाश-संश्लेषण की गति में भिन्नता होती है। हम जानते है कि घास, C_4 प्रकार का पौधा है। अतः घासों को ताजमहल तथा उसके अहातों के बीच खाली जगहों मे उपजाने से यह घास ताजमहल के आसपास घेरे हुए प्रदूषित पर्यावरण में उपस्थित कार्बन डाइआक्साइड की सान्द्रता को घटाकर शुद्व करती है इस तरह यह घास ताजमहल को सुरक्षा प्रदान करती है। साथ-साथ यह घास ताजमहल की सुन्दरता को और निखारती है जिससे यह दर्शकों के लिए और ज्यादा आकर्षक हो जाता है।

3. बराइटा घोल (Solution of Barium Hydroxide) का उपयोग

बराइट के संतृप्त घोल की दो या तीन लेपें संगमरमर की सतह पर ब्रुश द्वारा समान रूप से देने पर यह संगमरमर को क्षय होने से बचाता है। यह पहले से बने हुए कैलशियम सल्फेट से प्रतिक्रिया कर बेरियम सल्फेट तथा कैलशियम डाइहाईड्राक्साइड बनाता है।

$$CaS0_4 + Ba(OH)_2 = BaS0_4 + Ca(OH)_2$$

बेरियम सल्फेट अधुलनशील होने के कारण संगमरमर को प्रदूषित पर्यावरण से प्रभावित नहीं होने देता। यह संगमरमर को और आगे क्षय होने से बचाता है। ऊपर लिखे रासायनिक समीकरण से स्पष्ट है कि इस प्रतिक्रिया में कैलशियम हाइड्राक्साइड भी बनता है जो वायुमण्डलीय कार्बन डाइआक्साइड से संयोग कर कैलशियम कार्बोनेट बनाता है। इस तरह से बना हुआ कैलशियम कार्बोनेट संगमरमर को दृढ़ता प्रदान करता है।

हम जानते है कि बेरियम हाइड्राक्साइड $Ba(OH)_2$ $8H_2O$ एक रवादार उजाला पदार्थ है जो पानी में अल्प घुलनशील है। 15^0C पर इसकी

घुलनशीलता मात्र 3.23 ग्राम है। चूंकि यह पानी में अल्प घुलनशील है तथा इसका रंग उजला है। अतः यह संगमरमर की सतह पर अति पतली परत का निर्माण करता है जो कि करीब-करीब पारदर्शी होती है। इसके प्रयोग से संगमरमर के दर्शन में कोई अन्तर नही पड़ता है।

हम जानते है कि कार्बनिक और अकार्बनिक दोनों तरह के रक्षणशील पदार्थ (preservatives) समय के साथ नष्ट होते रहते हैं प्रत्येक एक या दो साल के अन्तराल पर पुराने रक्षणशील पदार्थ को हटाकर ताजा रक्षणशील पदार्थ की लेप करनी चाहिए। चूंकि बेरियम सल्फेट, जलीय अमोनियम नाइट्रेट के घोल में घुलनशील है। अतः बेरियम सल्फेट के पुराने लेप को जलीय अमोनियम नाइट्रेट के घोल से उपचार करके हटा देना चाहिए। तब साफ संगमरमर की सतह पर ताजा जलीय बेरियम सल्फेट के घोल की दो या तीन लेपें करनी चाहिए।

4. ताजमहल की सुरक्षा में यमुना नदी का योगदान

ताजमहल यमुना नदी के तट पर है। इस नदी में पानी का तल साल-भर ताजमहल के आधार तल से नीचे रहता है। SO_2 गैस, हवा से 2.26 गुणा भारी है। यही कारण है कि SO_2 की सान्द्रता पर्यावरण की निचली सतहों में ज्यादा रहती है। हम यह जानते हैं कि O^0C तापक्रम पर 1C.C. पानी में 80C.C. गैस घुलता है। अतः जैसे ही SO_2 गैस यमुना के पानी के सम्पर्क मे आता है त्यों ही यह गैस जल में घुलने लगती है। चूंकि यमुना में साल-भर पानी की धारा बनी रहती है, अतः हमेशा ताजा पानी गैस के सम्पर्क में आता रहता है। वह अपने साथ इस गैस को घुलाते हुए आगे की ओर बढ़ता जाता है। इस तरह यमुना नदी SO_2 गैस की सान्द्रता अनवरत घटाते हुए ताजमहल के इर्द-गिर्द के पर्यावरण को शुद्वकरती रहती है।

ठीक इसी तरह यमुना नदी CO_2 गैस की सान्द्रता अनवरत घटाते हुए ताजमहल के इर्द-गिर्द के पर्यावरण को शुद्ध करती रहती है क्योंकि CO_2 गैस हवा से 1.53 गुणा भारी है तथा साधारण तापक्रम पर 1C.C. गैस 1C.C. जल में आसानी से घुल जाता है।

इस तरह पाते है कि यमुना नदी पर्यावरण में उपस्थित SO_2 तथा CO_2 गैसों की सान्द्रता को अनवरत धटाते हुए ताजमहल की सुरक्षा में महान् भूमिका अदा करती है।

5. मथुरा के तेल-शोधक कारखाने को जीरो-डिस्चार्ज कराकर

मथुरा के तेल-शोधक कारखाने का निर्माण ताजमहल के लिए घातक है। ताजमहल दुनिया की सात आश्चर्यजनक चीजों मे से एक है। मथुरा का यह तेल शोधक कारखाना केवल ताजमहल के लिए नहीं वरन् दूसरे अनेक स्मारक चिन्हों के लिए भी घातक है। फतेहपुर सीकरी का स्मारक चिन्ह (दुनिया की चौदहवीं आश्चर्यजनक वस्तु) सिकन्दरा में स्थित अकबर का मकबरा, आगरा का किला इत्यादि भी मुख्य स्मारक चिन्ह है। भरतपुर का राष्ट्रीय पक्षी विहार भी बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है, जहाँ करीब 2 से 3 लाख तक चिडियाँ निवास करती हैं। कुछ तो इनमें से दुर्लभ और अनूठी हैं। फ्रांस के एक वन्य जीव विशेषज्ञ ने इसे देखने के बाद कहा कि यह पक्षी विहार दुनिया के सुन्दरतम पक्षी विहारों मे से एक है। आगरा का राधास्वामी मन्दिर भी काफी सुन्दर और महत्वपूर्ण है।

मथुरा, आगरा और भरतपुर एक त्रिभुज का निर्माण करते है जिसकी प्रत्येक भुजा करीब 30 मील लम्बी है।

ताज महल से लगभग 50 कि.मी. की दूरी पर तेल शोधक रिफाइनरी का निर्माण 1982 में 253.92 करोड़ रूपयें की लागन से किया गया था। इस कारखानें में लगभग 70 लाख टन कच्चें तेल का शोधन प्रतिवर्ष होता है। वर्तमान में इसकी शोधन क्षमता 8.00 मिलियन मीट्रिक टन प्रतिवर्ष है। इससे प्रतिदिन 60 से 120 टन तक सल्फर-डाइआक्साइड, 100 से 150 टन तक कार्बन मोनोक्साइड, 60 से 100 टन तक हाइड्रोकार्बन, कई टन नाइट्रोजन और कार्बन डाइआक्साइड, कई टन कार्बनिक अम्ल तथा ट्रेस मैटल जैसे वेन्डियम कैडमियम और निकिल निकलेगा, जो पर्यावरण को प्रदूषित कर देगा। रिफाइनरी में स्थित इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए यूनीटेरा नामक अमेरिकी प्रकाशन ने चेतावनी दी है-''कि यह प्रश्न ही नहीं उठता कि मथुरा का तेल-शोधक कारखाना तालमहल को कितना नुकसान पहुँचाएगा? प्रश्न यह उठता है कि ताजमहल इस तरह से प्रदूषित पर्यावरण के अम्लीय गैसों के सामने कितने समय तक सुरक्षित रहेगा।''

आज भारत सरकार एक योजना बना रही है जिसमें करीब 20 लाख विदेशी यात्रियों को प्रतिवर्ष ताजमहल तथा आगरा के अन्य स्मारक चिन्हों को देखने के लिए आकर्षित किया जाय और करीब 300 करोड़ रूपये मूल्य की विदेशी मुद्रा प्रतिवर्ष अर्जित की जा सकेगी।

6. ताज ट्रेपेजियम जोन-

ताज ट्रेपेजियम वह क्षेत्र है जो ताजमहल के चारों ओर 10,400 किमी.^{2} का क्षेत्र है 30 दिसम्बर 1996 में सुप्रीम कोर्ट ने ताज ट्रेपेजियम के क्षेत्र में सभी कारखानों को बंद करने का तथा कोयला, कोक इत्यादि ईधनों के उपयोग को बंद करने के निर्देश दिये है। ताज ट्रेपेजियम 27^0 30 N और 77^0 30 E से 27^0 45 N और 77^0 15 एवं 26^0 45 N एवं 77^0 15 E से 27^{0}00 N और 78^0 30 E के बीच में निर्धारित किया गया है।

7. बैटरी चलित वाहन तथा मैट्रो की सुविधा उपलब्ध करा कर आगरा शहर में वायु की गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है। यह एक स्थाई हल हैं।

आज यह एक विज्ञान का युग है। जिसके फलस्वरूप आज हमने शहरों में फैली नाइट्रोजन एवं सल्फर डाई आक्साइड जैसी जहरीली वायु पर काबू पा लिया है। ठीक उसी प्रकार तेल शोधक कारखानें में कोई संयत्र लगाकर जीरों डिस्चार्ज किया जा सकता है आज यह प्रश्न हमारे वैज्ञानिकों के लिए एक चुनौती का विषय है बहुत जल्दी ही हमें इस चुनौती को स्वीकार करना चाहिए अन्यथा हम अपनी सबसे अमूल्य धरोहर को खो देगें।

वर्षा जल संग्रहण द्वारा भूगर्भ जल का संरक्षण

अल्ताफ हुसैन खान, अम्बरीश कुमार वर्मा
पर्यावरण अनुवीक्षण विभाग

जल मानव शरीर का अनिवार्य घटक है, जिसके बिना जीवन असम्भव है। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए जल की आवश्यकता निरन्तर बढ़ रही है, किन्तु पृथ्वी का जल भण्डार सीमित है। एक अनुमान के अनुसार सन् 2050 तक देश की 17% जनता गम्भीर जल संकट का सामना कर रही होगी और 76% जनता जल के गम्भीर संकट में पहुँचने की स्थिति में होगी।

वर्षा से प्राप्त जल मुख्य रूप से दो रूपों में उपयोग के लिए उपलब्ध होता है। एक पृथ्वी की सतह पर प्राकृतिक रूप से अथवा मानव द्वारा संग्रहित जैसे नदी, जलाशय पोखर इत्यादि का जल तथा दूसरा भूमिगत जल के रूप में जिसे कुँए एवं नलकूप, हैण्डपम्प इत्यादि बनाकर प्राप्त किया जाता है। भारत में जल संग्रहण मानव सभ्यता के आरम्भ से किया जाता रहा है। इस परम्परा का प्रमाण प्राचीन लेखों, शिला लेखों और स्थानीय परम्पराओं तथा पुरातात्विक अवशेषों में मिलता है। हमारे पूवर्जो ने पानी के महत्व को रेखांकित ही नहीं किया अपितु उस पर कार्य करते हुए जल प्रबन्धन किया। यही कारण है कि जब हम पीछे मुड़कर देखते हैं तो अपने पूर्वजों द्वारा बसाए गए गाँवों को जल उपलब्धता में आत्मनिर्भर पाते हैं।

जल प्रबंधन के मामले में विश्व में अग्रणी और आत्मनिर्भर भारत में जल संकट की समस्या अचानक ही उत्पन्न नहीं हुई है। प्रकृति के साथ मनुष्य द्वारा अपनी आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु किए गए अवांक्षित क्रियाकलाप का परिणाम इस समस्या के रूप में आना ही था। भरपूर बारिश होने के बावजूद पानी की समस्या ज्यों के त्यों मुंह-बांये खड़ी रहती है। आधुनिक विज्ञान और तकनीक ने मनुष्य की उद्यमशीलता को प्रभावित किया है और इस कथित विकास आधारित जीवन और औद्योगीकरण ने पर्यावरण के साथ भारी छेड़छाड़ की है। पर्यावरण प्रदूषण का सर्वाधिक घातक प्रभाव हमारे सतही जल स्रोतों जैसे कि तालाबों, नदियों, जलाशयों एवं समुद्रों पर पड़ रहा है। इसका कारण इन जल स्रोतों में शहरी मल-जल तथा औद्योगिक उत्प्रवाह बिना उचित उपचार के प्रवाहित किया जाना है। इस सीमा से अधिक प्रदूषित जल का उपचार, जो कि इसको उपयोगी बनाने के लिए अनिवार्य है, कठिन तथा मंहगा हो जाता है। इन सब कारणों से सतही जल स्रोतों की तुलना में भूमिगत जल स्रोतों पर निर्भरता बढ़ती जा रही है।

उत्तर प्रदेश के लघु सिंचाई एवं ग्रामीण अभियंत्रण सेवा अनुभाग-1 के अनुसार प्रदेश में लगभग 75% सिंचाई भूजल संसाधनों से होती है। साथ ही प्रदेश की लगभग 80% जनता अपनी दैनिक आवश्यकताओं हेतु भूजल पर निर्भर है। उत्तर प्रदेश में गंगा जमुना का मैदानी भू-भाग विश्व का विशालतम भू-जल भण्डार रहा है। अतः प्रदेश में भूजल की सहज उपलब्धता तथा आसान दोहन के कारण विगत दशकों में भूजल संसाधनों का अंधाधुंध दोहन हुआ है, जिससे इस बहुमूल्य एवं सहज उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन को अब खतरा पैदा हो रहा है। प्रदेश में भूजल संसाधनों की प्रचुर उपलब्धता होने पर भी वर्तमान स्थिति यह है कि विगत दशकों में प्रदेश के 260 विकास खण्डों में

भूजल स्तर में 10 से 70 से0मी0 प्रतिवर्ष का ह्रास हुआ है। शहरी क्षेत्र में यह 22 से 56 से0मी0 प्रतिवर्ष है। प्रदेश के 22 विकास खण्ड अतिदोहित (क्रिटिकल) श्रेणी में वर्गीकृत है। इतना ही नहीं भूजल स्तर में गिरावट आने से कई छोटी-छोटी नदियाँ/नाले सूख गए हैं और अब बड़ी नदियाँ, जो भूजल से पोषित है।, को भी खतरा पैदा हो रहा है। यदि भूजल स्तर में हो रही गिरावट को रोकने के लिए अभी से सार्थक एवं प्रभावी कदम नहीं उठाए गए तो आगे आने वाले समय में भूजल स्तर इतना नीचे चला जाएगा कि भूमि की नमी समाप्त हो जाएगी, जिससे प्राकृतिक वनस्पतियाँ स्वतः सूख जाएगी तथा पर्यावरण असंतुलन का संकट उत्पन्न हो जाएगा। इसके अतिरिक्त कतिपय स्थानों में भूजल प्रदूषण का गम्भीर संकट भी अब परिलक्षित हो रहा है।

लखनऊ में भूजल की स्थिति -

गोमती नदी लखनऊ शहर के बीच से बहती है, अतएव इस नदी को लखनऊ शहर की जीवन रेखा कहा जा सकता है। यह नदी शहर की लगभग 30% मांग को पूरा करती है जो कि मुख्यतः पुराने लखनऊ का क्षेत्र है। विगत 20 वर्षों में लखनऊ की जनसंख्या लगभग दुगुनी हो गई है और जल की मांग भी इसी अनुपात में बढ़ गई है। वर्तमान में शहर की जनसंख्या लगभग 30 लाख है तथा प्रतिवर्ष लगभग एक लाख लोग बाहर से आकर शहर में बस रहे हैं। इस प्रकार शहर में लगभग 800 मिलियन लीटर जल की मांग है, जबकि जल संस्थान लगभग 480 मिलियन लीटर जल की आपूर्ति करता है। शहर की कुल जल की मांग का 30% सतही जल स्रोतों तथा 70% भूजल स्रोतों से प्राप्त होता है।

औसतन एक व्यक्ति को प्रतिदिन 150 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। स्टेट ग्राउन्ड बोर्ड के एक आकलन के अनुसार शहर में प्रतिदिन 500 मिलियन लीटर भूमिगत जल निकाला जा रहा है। इतने जल की निकासी के लिए जल संस्थान के 470 नलकूप, बहुमंजिला इमारतों के 400 नलकूप, राज्य तथा केन्द्रीय विभागों के 200 नलकूप तथा जनता द्वारा घरेलू तथा व्यावसायिक उपयोग हेतु लगभग 10,000 गहरे बोरिंग वर्तमान में कार्य कर रहे हैं। इस अनियंत्रित दोहन से लखनऊ शहर का प्रतिदिन लगभग 6 लाख लीटर भूजल भण्डार कम हो रहा है। परिणाम स्वरूप लखनऊ का भूजल स्तर लगभग 73 से0मी0 प्रतिवर्ष की गति से नीचे जा रहा है। एक दर्जन से अधिक नलकूप सूख गए हैं तथा बहुत से कम मात्रा में जल निकाल पा रहे हैं। इसी प्रकार हजारों हैण्ड पम्प भी सूख गए हैं। भूजल स्तर की यह गिरावट गोमती नगर में 1.5 मीटर, इंदिरानगर में 1.15 मीटर एवं निरालानगर में 81 से0मी0 प्रतिवर्ष दर्ज की गई है। शहर के विभिन्न क्षेत्रों में भूजल की स्थिति निम्न प्रकार है :-

क्षेत्र	भूजल तल कीगहराई (मीटर में)
आर्यनगर	21.40
लखनऊ विश्वविद्यालय	27.51
दिलकुशा	30.90
गुलिस्ताँ कालोनी	31.30
राजाजीपुरम	28.60
नरही	31.06
गोमतीनगर	21.35
इंदिरानगर	26.13
निराला नगर	29.55

भूजल भण्डार हेतु उपाय -

राज्य के भूगर्भ जल विशेषज्ञों द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार लखनऊ शहर के 350 वर्ग कि0मी0 क्षेत्रफल में खुली छतों (रूफ टाप) का क्षेत्र लगभग 50 वर्ग कि0मी0 है। मानसून के चार महीनों में औसतन वर्षा लगभग 902 मि0मी0 होती है। इस प्रकार वर्षाजल संग्रहण द्वारा शहर की खुली छतों से लगभग 20 मिलियन घन मीटर वर्षा का जल भूगर्भ जल के रूप में प्रतिस्थापित किया जा सकता है। परन्तु विडम्बना यह है कि न तो जन साधारण इस समस्या के प्रति जागरूक है और न ही शासकीय संस्थाएं। केवल भूगर्भ जल विभाग ने ही इस समस्या को गम्भीरता से लिया है। चारों तरफ सीमेंट कंक्रीट से बने भवनों एवं अन्य संरचनाओं ने प्राकृतिक रूप से भूगर्भजल का प्रतिस्थापन बाधित कर दिया है। अतः भूगर्भ जल के प्रतिस्थापन हेतु सरकार ने भूजल पुनर्भरण को प्रत्येक शासकीय तथा निजी भवनों के लिए अनिवार्य कर दिया है। भारत सरकार द्वारा इस सम्बन्ध में विधान बनाने हेतु उपलब्ध कराए गए माडल बिल के क्रम में प्रदेश सरकार द्वारा उ0प्र0 भूगर्भ जल संरक्षण, सुरक्षा तथा विकास (प्रबंधन, नियंत्रण एवं विनियमन) बिल 2010 तैयार किया है। इसके अन्तर्गत वर्तमान अथवा भावी भूजल के सामूहिक उपयोक्ता, व्यापारिक तथा औद्योगिक उपयोक्ता, ग्रामीण क्षेत्र के सामान्य कृषक तथा नगरवासियों के लिए महत्वपूर्ण प्राविधान किए गए हैं। अब तक लगभग 558 सरकारी तथा अर्धसरकारी भवनों ने नियम के अनुसार वर्षाजल संग्रहण की व्यवस्था की है। परन्तु उचित रखरखाव व देखभाल के अभाव में यह प्रणाली ठीक तरह से कार्य नहीं कर पा रही हैं। इसके अतिरिक्त शहर के 6 लाख घरों में से मात्र 2842 घरों में यह प्रणाली लगाई गई है। लोग अभी वर्षा जल संग्रहण पर पैसा खर्च करना अनावश्यक मानते हैं, परन्तु वह इस बात से अनभिज्ञ हैं कि कालान्तर में भूजल तल नीचे चला जायगा तथा उनके पम्प अनुपयोगी हो जाएगें। विशेषज्ञों की राय में इस समस्या का समाधान जनता के सहयोग से उ0प्र0 भूगर्भ जलसंरक्षण, सुरक्षा तथा विकास एक्ट के प्रभावी क्रियान्वयन द्वारा सम्भव है। इसी श्रृंखला में वर्षा जल संग्रहण का एक सफल प्रयास सी0एस0आई0आर0 की अलीगंज कालोनी में किया गया।

लगभग 20 वर्ष पूर्व सन् 1990 में सी0एस0आई0आर0 का एक वैज्ञानिक आवासीय परिसर अलीगंज में बनकर तैयार हुआ। इस परिसर में केन्द्रीय औषधि विज्ञान अनुसंधान संस्थान एवं भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिक रहने के लिए आए। इस परिसर में तीन ओर कुल 14 तिमंजिले भवन थे तथा बीच में एक बड़ा मैदान तथा इस मैदान के बीचों-बीच एक बड़ा गड्ढा। यह गड्ढा कचरे तथा छोटी झाड़ियों से पटा था। आरम्भ में इस गड्ढे को पाटने पर विचार किया गया। परन्तु यहाँ पर रहने वाले वैज्ञानिकों को इस प्राकृतिक संरचना का वर्षा जल संग्रहण हेतु उपयोग करने का विचार उपयोगी लगा, जिसे एक प्राकृतिक जलाशय के रूप में विकसित किया जा सकता है।

इस विचार को मूर्त रूप देने हेतु परिसर की देखभाल करने वाले अभियन्ताओं ने परिसर का जल निकास इस प्रकार से डिजाइन किया जिससे परिसर की वर्षा का पूरा जल इस जलाशय में पहुँच सके। शीघ्र ही इस गड्ढें पर कार्य आरम्भ हो गया। सर्वप्रथम इसमें भरा हुआ मलबा तथा झाड़ियाँ हटाई गईं। तत्पश्चात्

चार दिशाओं में छोटी-छोटी नालियाँ खोदी गई जो जलाशय में समलम्ब रूप में मिलती थी। इन नालियों के किनारों को पत्थर लगाया गया, जिसमें मिट्टी का कटाव न हो। जलाशय के मध्य एक टीला था जिसे और ऊँचा कर चारों तरफ से पत्थर लगाकर मजबूत कर दिया गया। इससे जलाशय की सुन्दरता और बढ़ गई।

अब तक किए गए कार्य से यह सुनिश्चित हो गया था कि वर्षा का समस्त जल इस जलाशय तक अवश्य पहुँच जाएगा। अब प्रश्न इस जल को भूगर्भ जल तक पहुँचाने का था। इस कार्य में उ0प्र0 भूगर्भ जल विभाग की सलाह के अनुसार टापू के चारों आरे चार 10 फुट गहरे गड्ढ़े बनाए गए तथा इन में बड़े पत्थर बोल्डर छोटे पत्थर तथा रेत की सतहें लगाकर एक फिल्टर बेड बनाया गया। इसका उद्देश्य वर्षा के जल को भूगर्भ जल में मिलने से पूर्व छानना था। यह कार्य सावधानीपूर्वक किया गया तथा भविष्य में प्रतिवर्ष इस फिल्टर बेड की सफाई सुनिश्चित की गई। इस जलाशल के चारों तरफ के मैदान को समतल कर उसका ढाल जलाशय की ओर किया गया तथा मैदान में घास उगाई गई। तस तरह वर्षा का पानी इस मैदान से होकर जब जलाशय में पहुँचता, तब तक प्राकृतिक रूप से यह छन जाता है। इसके अतिरिक्त जलाशय के चारों ओर लगे नीम के वृक्ष उसी तरह लगे रहने दिए गए। जहाँ एक ओर यह वृक्ष मैदान की सुन्दरता बढ़ाते है वहीं पर इनकी जड़ें मिट्टी को छिद्रिल बनाकर वर्षा के जल को इसमें एकत्र करने की क्षमता बढ़ाती हैं।

वर्षा जल संग्रहण के इस प्रयास के परिणाम स्वरूप इस परिसर में रहने वाले लगभग 100 परिवारों की जल की मांग को पूरा करते हुए यहा पर लगा नलकूप न तो कभी सूखा, न उसकी क्षमता कम हुई और न ही उसे गहरा कराने की आवश्कयता पड़ी। परिसर के निवासी पिछले 10 वर्षों से 24 घंटे जल के आपूर्ति का लाभ उठा रहे हैं। इसके अतिरिक्त, परिसर के चारों ओर रहने वाले लोग भी इससे अवश्य ही लाभान्वित हो रहे होंगे। क्योंकि यहाँ पर वर्षा जल के एक बड़े भाग का भूगर्भ जल संग्रहण किया जा सकता है। इस प्रयास ने राज्य सरकार का ध्यान भी अपनी ओर आकृष्ट किया है। लघु सिंचाई एवं भूगर्भ जल विभाग के प्रमुख सचिव श्री सुशील कुमार ने इस प्रयास को देखकर कहा कि अन्य लोगों को भी इस प्रकार का प्रयास करना चाहिए क्योंकि ऐसे प्रयासों के बिना भूजल का कम होना रोका नहीं जा सकता।

आज जलापूर्ति के लिए जहाँ एक ओर निरन्तर भूजल दोहन से भूजल स्तर काफी नीचे चला गया है, वहीं दूसरी ओर वर्षा जल का बड़ा हिस्सा प्रत्येक वर्ष बहकर व्यर्थ चला जाता है। व्यर्थ बहने वाले इस जल को विभिन्न वर्षा जल संग्रहण/भूगर्भ जल पुनर्भरण विधाओं एवं संरचनाओं के माध्यम से पृथ्वी के भूजल भण्डार तक पहुँचा कर इस सम्पदा में वृद्धि करना ही समस्या का समाधान है। नगरों में छत के वर्षा जल का संग्रहण अनिवार्य करने की आवश्यकता है, वहीं अति दोहित ग्रामीण क्षेत्रों में नियोजित भूजल प्रबन्धन एवं नियमन अपरिहार्य हो गया है। वर्षा जल संग्रहण एवं भूगर्भ जल पुनर्भरण के साथ ही जल को संरक्षित किए जाने हेतु नई तकनीकी का उपयोग करना अपरिहार्य हो गया है। साथ ही साथ मानव स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए भूजल की गुणवत्ता बनाए रखना और प्रदूषण से बचना भी आवश्यक है।

सामान्यतया वर्षा का जल शुद्ध होता है फिर भी

इसमें वायु के सम्पर्क से वायु में पाई जाने वाली गैसें जैसे आक्सीजन, कार्बन डाई आक्साइड, नाइट्रोजन के आक्साइड एवं सल्फर डाइआक्साइड आदि थोड़ी मात्रा में घुल जाते हैं। आक्सीजन से जल की गुणवत्ता बढ़ जाती है क्योंकि यह जलीय जीवन के लिए आवश्यक है जबकि अम्लीय गैसों के सम्पर्क आने से जल में थोड़ी सी अम्लीयता आ जाती है। वर्षा के जल में घुलनशील, अघुलनशील एवं सूक्ष्मजैविक अशुद्धियाँ मुख्य रूप से इसके छतों के तल तथा आगे के अन्य तलों के सम्पर्क में आने से होती है। छतों पर जमा पत्ती, धूल एवं अन्य अपशिष्ठ पदार्थ यदि वर्षा के पूर्व साफ कर दिये जाए तो वर्षा जल में अशुद्धि की सम्भावना कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त यदि आरम्भिक वर्षा का जल भू-जल में न पहुँचाकर इसे नाली द्वारा निस्तारित कर दिया जाये तथा बाद के वर्षा जल को संग्रहित कर भूगर्भ में पहुँचाया जाए तो यह सुरक्षित होगा। इस प्रकार की व्यवस्था का पालन करने से प्राप्त वर्षा जल की गुणवत्ता, भू-जल एवं नदी तालाबों की जल से उत्तम होगी। इस व्यवस्था से यह भी सुनिश्चित हो जाता है कि यह जल मृदा एवं चट्टानों के सम्पर्क में नहीं आता तथा उनके खनिज लवण को अपने साथ नहीं घोलता और न ही मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवों को अपने साथ ले जाता है। इसके अतिरिक्त यह जल मृदा तथा जल के अन्य भण्डारों जैसे नदी, तालाब में पाये जाने वाले प्रदूषकों के सम्पर्क में भी नहीं आता। फिर भी वर्षा जल की गुणवत्ता स्थानीय औद्योगिक यातायात उत्सर्जन इत्यादि से उत्पन्न वायु प्रदूषण से प्रभावित हो सकती है। शहरों में कम औद्योगिक गतिविधि वाले क्षेत्र का वर्षा जल संभवतः अधिक औद्योगिक गतिविधियों वाले क्षेत्रों की तुलना में कम प्रदूषित होगा। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए वर्षा जल संग्रहण से भूजल पुनर्भरण करने से पूर्व जल की गुणवत्ता का आकलन आवश्यक है। यद्यपि वर्तमान में इसके लिए कोई मानक निर्धारित नहीं किये गये हैं फिर भी व्यावहारिक रूप से पेय-जल गुणवत्ता मानक इस स्थिति में सबसे उत्तम उपलब्ध मानक के निम्नलिखित घटक वर्षा जल गुणवत्ता के लिए उपयोगी हो सकते हैं जिसमें की इस जल को पेय जल के रूप में उपयोग किया जा सके।

क्र. सं.	प्राचाल (मात्रक)	विश्व स्वास्थ्य संगठन मानक	भारतीय मानक ब्यूरो मानक
1.	पी0एच0	7.0-8.5	6.5-8.5
2.	घुलनशील लवण	500	500
3.	अनिलता (टरबीडिटी (एन0टी0यू0)	<5	<10
4.	स्वाद	स्वादहीन	स्वादहीन
5.	रंग	रंगहीन	रंगहीन
6.	कठोरता (कैल्शियम) (मि.ग्रा./लि.)	75	75
7.	कठोरत (मैग्नीशियम) (मि.ग्रा./लि.)	50	30
8.	लौह तत्व (मि.ग्रा./लि.)	0.3	0.3
9.	जीवाणु (एम0पी0एन0/100मि0ली0)	नहीं	नहीं
10.	नाइट्रेट (मि0ग्रा0/लि0)	-	45

वर्षा जल को एकत्र करने की कई सरल विधियाँ

हैं। वर्षों से हमारे पूर्वज इसे अपनाते आ रहे हैं, परन्तु आधुनिक जीवन शैली में हम इन्हें भूल से गए हैं। कुछ सरल तथा व्यावहारिक उपाय जैसे घर के प्रांगण को कच्चा रखना, घर के बाहर सड़कों के किनारे कच्चा फुटपाथ का निर्माण लूज-स्टोन लगाकर करना तथा पार्कों में जगह-जगह पुनर्भरण हेतु चौड़ी खाई (ट्रेंच) बनाना। छत के वर्षा जल का संग्रहण एक सरल तकनीक है जिसमें छत पर गिरने वाला वर्षा का जल पाइप द्वारा गड्ढा, खाई, सूखा कुँआ, तालाब-पोखर द्वारा भूजल भण्डार तक पहुँचाया जा सकता है। ये तकनीके स्थानीय जलीय स्थिति (हाइड्रोलाजी) पर निर्भर करती है। वर्षा जल द्वारा भूजल पुनर्भरण व्यवस्था का आरेख, चित्र-1 में दिया गया है। क्षेत्रफल के आधर पर छतों की जल संचयन क्षमता निम्नानुसार है।

छत का क्षेत्रफल (वर्ग मीटर)	उपलब्ध वर्षा जल (लीटर प्रति वर्ष)
100	80,000
200	1,60,000
300	2,40,000
500	4,00,000
1000	8,00,000

शहरों में जल स्तर गिरावट वाले क्षेत्रों को चिन्हित कर वर्षा जल संरक्षण के सरल प्रभावी उपाय अपनाने की नितान्त आवश्यकता है। भूगर्भ जलनियंत्रण एंव नियमन कानून को जन सहयोग से प्रभावी रूप से लागू कर भूजल के अन्धाधुंध दोहन पर अंकुश लगाना होगा। पेयजल हेतु भूजल स्रोतों पर बढ़ती निर्भरता देखते हुए सीमित आपूर्ति तथा नियोजित उपयोग की प्राथमिकता देनी होगी। इस हेतु शहरी सीमा में भूगर्भ जल पर आधारित व्यवसायिक गतिविधियों को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। साथ ही साथ शहर में भूजल दोहन कम करके सीमावर्ती क्षेत्रों में नलकूप लगाकर आपूर्ति व्यवस्था करनी होगी। इसके अतिरिक्त हम अपने दैनिक घरेलू कार्यो में निम्न प्रकार से जल की बचत करके इस महान कार्य में अपना योगदान दे सकते हैं :-

1. घर के सदस्यों को पानी बचाने की शिक्षा देकर, क्योंकि पानी की बर्बादी अथवा टपकना एक ऋणात्मक ऊर्जा उत्पन्न करता है।
2. सार्वजनिक स्थानों पर जल के नलों से लीकेज इत्यादि की सूचना देकर
3. टपकते नलों को तुरन्त ठीक कराकर
4. जल का उपयोग करते समय जल की धार को कम रखकर
5. दंत मंजन करते समय, दाढ़ी बनाते समय नलों के कम खोले तथा मग का उपयोग करें
6. बर्तनों को माँजते समय नल बन्द रखें, जब धुलाई करनी हो तब ही नल खोले
7. घर के आगे की सड़कों को पानी से न धोए
8. गाड़ी की धुलाई पाइप से नहीं, बल्कि बाल्टी में पानी लेकर गाड़ी साफ करें
9. कम पानी की खपत वाले फ्लश सिस्टम का प्रयोग करें।
10. रसोई में ताजा पानी भरने की प्रकृति छोड़कर संग्रहित पानी का उपयोग करें।
11. पानी की टंकी में वाल्व अवश्य लगाएं तथा पानी को ओवरफ्लो न होने दे।

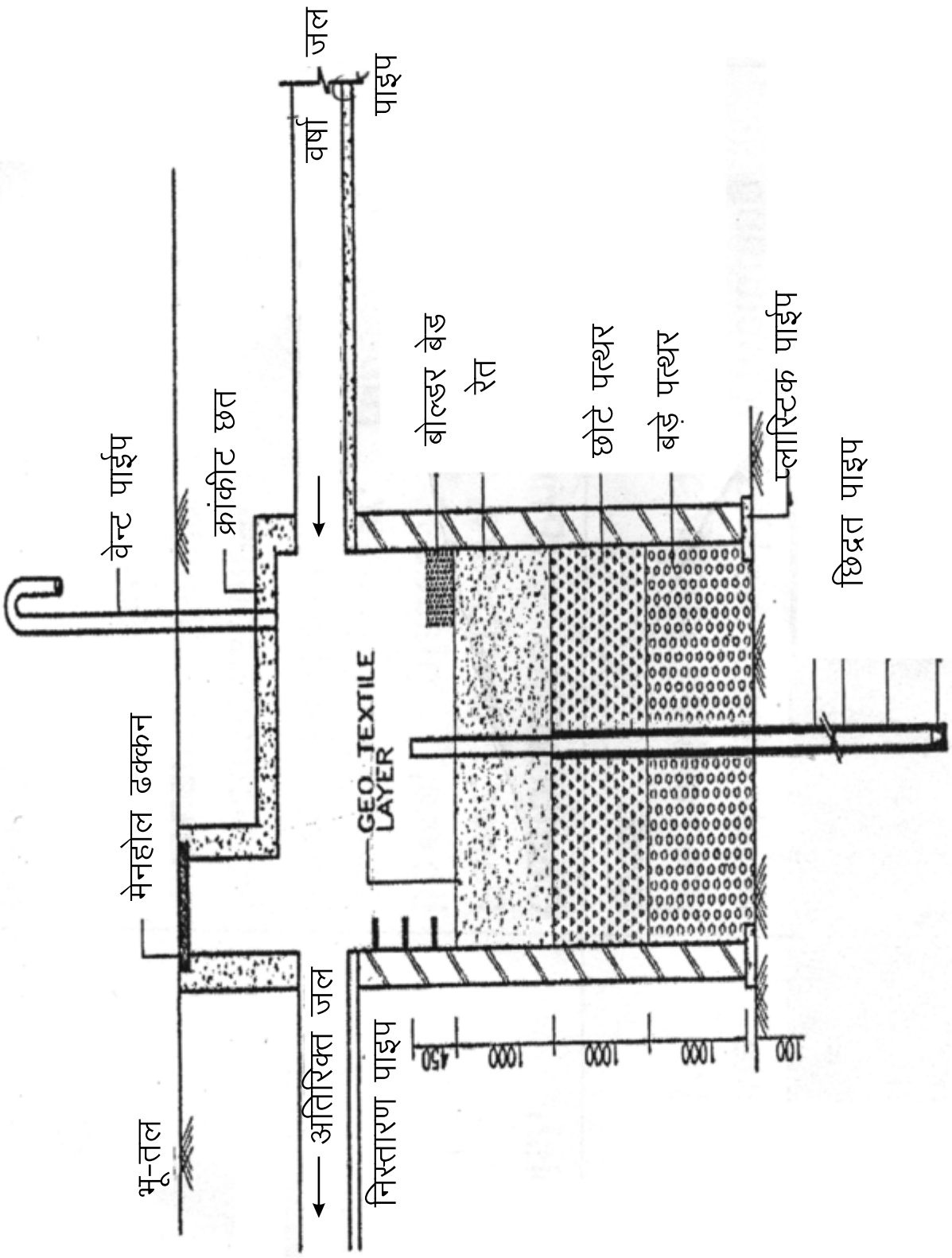

चित्र -1 : वर्षा जल द्वारा भूजल पुनर्भरण व्यवस्था का आरेख चित्र

फास्ट फूड में प्रयोग होने वाले टोमैटो और चिली सॉस में पाये जाने वाले बेंजोएट संरक्षक, और कृत्रिम रंगों का मूल्यांकन एवं कुप्रभाव

सुमिता दीक्षित एवं डॉ. मुकुल दास

खाद्य विषविज्ञान विभाग, भारतीय विषविज्ञान अनुसंधन संस्थान, लखनऊ

बदलती जीवन शैली के साथ फास्ट फूड जैसे, नूडल्स पीजा आदि के साथ प्रयोग होने वाले टोमैटो और चिली सॉस समाज के सभी वर्गों में तेजी से लोकप्रिय हो रहे हैं । ठेलों पर फास्ट फूड बेचने वाले न सिर्फ गरीब जनता को कम दाम में फास्ट फूड उपलब्ध कराते हैं, साथ में स्वयं रोजगार एवं आजीविका के स्त्रोत के रूप में उभर कर सामने आते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन का मानना है कि सरकार को ऐसे लघु उद्यमों तथा ठेलों पर खाद्य उत्पाद बेचने वालों की मदद एवं सुधार के लिए उनके समर्थन में नीतियाँ बनानी चाहिए। यह महसूस किया गया कि इनकी सुरक्षा के लिए सक्षम उपाय की जरूरत है जो उन्हें प्रतिस्पर्धा बाजार में जीवित रखे, परन्तु इसके साथ खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता में भी कोई आँच न आने पाए। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्राालय ने हाल ही में एक सर्वेक्षण किया है, जिसके नतीजों से यह संकेत मिलता है कि सड़कों पर ठेलों पर खाद्य उत्पाद बेचने वालों की संख्या ज्यादा से ज्यादा मात्रा में उपभोक्ताओं को अपनी तरफ आकर्षित करने की कोशिश कर रही है, परन्तु साथ ही खाद्य की गुणवत्ता और सुरक्षा मानकों पर ध्यान नहीं दे रही है।

टोमैटो सॉस और चिली सॉस बाजार में फास्ट फूड के साथ सबसे ज्यादा बिकता है। भारतीय खाद्य अपमिश्रण अधिनियम ने इसमें बेंजोएट संरक्षक की मात्राा 750 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 निर्धारित की है, परन्तु यह आशंका जतायी गई है कि कुछ अनौपचारिक घरेलू इकाईयाँ एवं ठेलों पर खाद्य सामग्री बेचने वाले, सॉस को खराब होने से बचाने के लिये आवश्यकता से ज्यादा बेंजोएट डाल देते हैं। इसके अलावा यह लोग टमाटर की जगह दूसरे सस्ती सब्जियों का इस्तेमाल करते हैं और उनमें टमाटर रूपी कृत्रिम रंग का प्रयोग करते हैं। भारतीय खाद्य अपमिश्रण अधिनियम में टोमैटो और चिली सॉस में किसी भी सब्जी का प्रयोग एवं कृत्रिम रंग का उपयोग वर्जित है।

खाद्य प्रसंस्करण इकाइयाँ एवं ब्रांडेड उत्पाद बनाने वाले हमेशा खाद्य एडीटीव्ज (Additives) के निर्धारित अनुज्ञेय सीमा का पालन करते हैं, परन्तु लघु उद्यमों एवं अनौपचारिक घरेलू उद्योग इकाइयों में इसका कितना पालन होता है, यह कहना मुमकिन नहीं है। वर्तमान अध्ययन में इसी समस्या को ध्यान रखते हुए टोमैटो और चिली सॉस में बेंजोएट और कृत्रिम रंगों के उपयोग का ऑकलन किया गया है और ठेले पर फास्ट फूड के साथ बिकने वाले टोमैटो और चिली सॉस की गुणवत्ता की तुलना ब्रांडेड टोमैटो और चिली सॉस के साथ की गई है।

टोमैटो और चिली सॉस में बेंजोएट के उपयोग की मात्रा का ऑकलन तालिका-1 में दिया गया है। ब्रांडेड उत्पादों में बेंजोएट की अधिकतम सीमा 745 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 पायी गयी जो कि भारतीय अनुमेय सीमा (750 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0) के अन्दर है। छः ब्रांडेड उत्पादों में किसी भी संरक्षक का प्रयोग नहीं किया गया है और अन्य ब्रांडेड उत्पादों में बेंजोएट की न्यूनतम सीमा 151 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 तथा औसत एवं 95 प्रतिशतक (95^{th} Percentile) सीमा क्रमशः 392 एवं 725 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 पायी गयी।

तालिका -1 ठेलों पर मिलने वाले टोमैटो और चिली सॉस में बेंजोएट की मात्रा और उसकी ब्रांडेड उत्पादों से तुलना :-

समुदाय	नमूनों की संख्या			बेंजोइक एसिड (मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0)		
	कुल	सीमा के भीतर[(a)]	सीमा से अधिक (%)[a]	सीमा	औसत	95 प्रतिशतक
टोमैटो सॉस						
ठेलों पर मिलने वाले	100	41	59(59)	353-2119	903	1636
ब्रांडेड	93	93	0	151-745	392	725
चिली सॉस						
ठेलों पर मिलने वाले	25	0	25(100)	772-2104	1052	1657
ब्रांडेड	25	25	0	293-734	556	717

[a] बेंजोइक एसिड की खाद्य अपमिश्रण अधिनियम में अनुमेय सीमा 750 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 है।

ठेलों पर बिकने वाले टोमैटो और चिली सॉस में 59 प्रतिशत नमूनों में बेंजोएट की मात्रा अनुमेय सीमा से ज्यादा पायी गयी। न्यूनतम और अधिकतम सीमा 353 और 2119 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 थी, जबकि औसत और 95 प्रतिशतक सीमा 903 तथा 1636 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 पायी गयी (तालिका-1)।

चिली सॉस में ब्रांडेड उत्पादों में किसी भी नमूने में बेंजोएट अनुमेय सीमा से ज्यादा नहीं थी, जबकि सभी ठेलों पर बिकने वाले चिली सॉस में बेंजोएट की मात्राा अनुमेय सीमा से कई गुना ज्यादा पायी गयी। बेंजोएट की न्यूनतम और अधिकतम मात्रा क्रमशः 772 तथा 2104 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 मिली और औसतन एवं 95 प्रतिशतक सीमा 1052 और 1657 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 पायी गयी।

टोमैटो और चिली सॉस में मिलने वाले कृत्रिम रंगों पर निगरानीः-

ठेलों पर मिलने वाले सॉस बनाम ब्रांडेड टोमैटो और चिली सॉस में कृत्रिम रंगों की जाँच तालिका-2 में दी गयी है। किसी भी ब्रांडेड उत्पादों में कृत्रिम रंग नहीं पाये गये, जबकि ठेलों पर मिलने वाले 80 प्रतिशत सॉस के नमूनों में कृत्रिम रंग मिले (तालिका-2)। कृत्रिम रंगों में सनसेट यलो के साथ एमरैंथ (172-742

मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0), कारमाईजीन (148-597 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0) और पोन्स्यू 4 आर (Ponceau 4 R) (154-825 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0) के मिश्रण पाये गये। व्यक्तिगत रंगों में इरीथ्रोसिन (37-46 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0), सनसेट यलो (99-1624 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0) पोन्स्यू 4 आर (104-124 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0) एवं आरेंज II (81 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0) 21 प्रतिशत नमूनों में पाये गये (तालिका-2)। एमरैंथ और आरेंज II भारतीय खाद्य अपमिश्रण अधिनियम के अनुमति सूची में नहीं है।

चिली सॉस में ब्रांडेड उत्पादों में किसी में भी कृत्रिम रंग की मौजूदगी नहीं मिली, जबकि ठेले पर मिलने वाले 80 प्रतिशत नमूनों में टारट्राजिन रंजक मौजूद था। इसकी अधिकतम सीमा 500 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 पायी गयी, जबकि औसत एवं 95 प्रतिशत तक सीमा 166 और 391 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 मिली।

तालिका -2 ठेलों पर मिलने वाले टोमैटो और चिली सॉस में कृत्रिम रंगों की उपस्थिति और उनकी ब्रांडेड उत्पादों से तुलना :-

समुदाय	नमूनों की संख्या			बेंजोइक एसिड मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0		
	कुल	कृत्रिम रंग रहित	कृत्रिम रंग सहित (%)	सीमा	औसत	95 प्रतिशतक
टोमैटो सॉस						
ठेलों पर मिलने वाले	100	20	80(80)	37-1624	303	825
ब्रांडेड	93	93	0	0	0	0
चिली सॉस						
ठेलों पर मिलने वाले	25	5	20(80)	93-500	166	391
ब्रांडेड	25	25	0	0	0	0

स्थानीय घरेलू उपभोक्ताओं में टोमैटो सॉस की खपत एक सीमित सर्वेक्षण द्वारा कुल 238 लोगों पर की गयी, जिसमें सॉस खपत की मात्रा 10 से 50 ग्राम प्रति सेवन थी। अधिकांश उपभोक्ता 10 से 25 ग्राम तक टोमैटो सॉस का एक बार में सेवन करते थे, जबकि 9 प्रतिशत उपभोक्ता उच्च मात्रा सेवन की श्रेणी में थे। औसत उपभोक्ता और 95 प्रतिशतक उपभोक्ता 19 ग्राम और 30 ग्राम प्रति सेवन पाए गए (तालिका-3)।

तालिका-3 लखनऊ शहर में टोमैटो सॉस के खपत के ऊपर सीमित घरेलू सर्वेक्षण :-

दैनिक खपत	प्रतिवादी की संख्या	कुल का प्रतिशत
10	62	26.0
15	56	23.5
20	30	12.6
25	69	29.0
30	17	7.1
50	4	1.7

बेंजोएट का टोमैटो सॉस के साथ सेवन :-

टोमैटो सॉस की औसत सेवन और अधिकतम सेवन करने वालों का औसत और 95 प्रतिशत तक स्तर पर बेंजोएट का स्वीकार्य दैनिक खपत (ADI) के प्रतिशत संतृप्ति का ऑकलन तालिका-4 में दिया गया है। ब्रांडेड सॉस के द्वारा बच्चों और बड़ों में औसत उपभोक्ता और उच्च उपभोक्ता में बेंजोएट का औसत सेवन 0.13 से 0.42 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 शरीरभार प्रतिदिन (mg Kg^{-1}bwt day^{-1}) निकलता है, जो कि स्वीकार्य दैनिक खपत को 2.6 से 8.6 प्रतिशत तक संतृप्त करता है। 95 प्रतिशतक स्तर पर यही सेवन 0. 25 से 0.81 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 शरीर भार प्रतिदिन हो जाता है, जो स्वीकार्य दैनिक खपत को 5 से 16.2 प्रतिशत तक संतृप्त करता है। चूँकि ठेले पर मिलने वाले सॉस नमूनों में बेंजोएट ज्यादा मिला है, इसलिए 95 प्रतिशतक स्तर पर बच्चों और बड़ों में बेंजोएट का सेवन 0. 52 से 1.64 मि0ग्रा0 निकलता है जो कि स्वीकार्य दैनिक खपत को बड़ों में 10 से 16.4 प्रतिशत तक और बच्चों में 21 से 33 प्रतिशत तक संतृप्त करता है।

तालिका-4 टोमैटो सॉस के द्वारा औसत एवं उच्च उपभोक्ताओं में बेंजोएट के सेवन की मात्रा और उससे स्वीकार्य दैनिक खपत की प्रतिशत संतृप्ति[a]

टोमैटो सॉस सेवन सीमा	बेंजोएट के खपत मि0ग्रा0 प्रतिग्राम शरीर भार प्रतिदिन			
	बच्चे[b]		बड़े[b]	
	ब्रांडेड उत्पाद	ठेलों पर मिलने वाले उत्पाद	ब्रांडेड उत्पाद	ठेलों पर मिलने वाले उत्पाद
औसत उपभोक्ता				
औसत	0.27 (5.4)	0.57(11.4)	0.13 (2.6)	0.29 (5.8)
95 प्रतिशतक	0.51 (10.2)	1.04 (20.8)	0.25 (5.0)	0.52 (10.4)
उच्च उपभोक्ता				
औसत	0.42(8.4)	0.90 (18.0)	0.21 (4.2)	0.45 (9.0)
95 प्रतिशतक	0.81(16.2)	1.64 (32.8)	0.40 (8.0)	0.82 (16.4)

[a]बेंजोएट के स्वीकार्य दैनिक खपत 5 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 शरीर भार प्रतिदिन (JECFA , 2001) लिया गया है। कोष्ठक में दिए गए अंक प्रतिशत संतृप्ति को दर्शाता है।

[b]औसत शरीर भार बच्चे (30 कि0ग्रा0) एवं बड़े (60 कि0ग्रा0) राष्ट्रीय स्वास्थ्य सांख्यिकी केन्द्र (अमेरिका) पर आधरित है।

टोमैटो सॉस द्वारा कृत्रिम रंग का सेवन :-

सर्वेक्षण में पाए गए रगों में एमरैंथ, कारमाईजीन, इरीथ्रोसीन एवं पोन्स्यू 4 आर स्वीकार्य दैनिक खपत सीमा का कुल 1.2 से 3.5 प्रतिशत तक संतृप्त होता है, जबकि सनसेट यलो बच्चों के अधिकतम सेवन की श्रेणी में 20 प्रतिशत तक संतृप्त करता है। (तालिका-5)

तालिका - 5 टोमैटो सास के द्वारा कृत्रिम रंगों का प्रतिदिन खपत की मात्रा एवं स्वीकार्य दैनिक खपत सीमा की प्रतिशत संतृप्ति।

कृत्रिम रंग	स्तर सीमा मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0		खपत मि0ग्रा0 प्रतिदिन		स्वीकार्य दैनिक खपत सीमा की प्रतिशत संतृप्ति
	औसत	95 प्रतिशतक	स्वीकार्य दैनिक खपत सीमा के अनुसार अनुमति सीमा	पाए गए रंगों की 95 प्रतिशतक स्तर	
एमरैंथ	120	187	15.0	0.19	1.3
कारमाइजीन	100	144	12.0	0.14	1.2
इंरीथ्रोसिन	39	44	3.0	0.04	1.3
पोन्स्यू 4 आर	262	421	12.0	0.42	3.5
सनसेटयलो	972	1533	7.5	1.53	20.4

भारत में लगभग 5,000 फलों एवं सब्जियों के प्रसंस्करण इकाईयाँ हैं, जिसमें 13 प्रतिशत बड़े पैमाने पर संगठित इकाईयाँ हैं और 75 प्रतिशत तक लघु उद्योग या घरेलू अनौपचारिक इकाईयाँ हैं। चूँकि बाजार में फास्ट फूड में इस्तेमाल की जाने वाली सॉस की मांग बढ़ रही है, इसलिए संगठित और अनौपचारिक दोनों इकाईयाँ इन्हें ज्यादा से ज्यादा बनाने में लगी हुई हैं। संगठित इकाईयाँ तो सख्ती से गुणवत्ता मानकों का पालन कर रही हैं, लेकिन अनौपचारिक और घरेलू इकाईयाँ आर्थिक मजबूरियों के लिए प्रतिस्पर्धा कीमतों पर सस्ते दामों पर सॉस उपलब्ध कराने के लिए अक्सर उत्पादों की गुणवत्ता से समझौता कर लेते हैं। वर्तमान अध्ययन में फास्ट फूड के साथ मिलने वाले टोमैटो और चिली सॉस में बेंजोएट बहुतायत मात्रा में एवं कृत्रिम रंगों का प्रयोग पाया गया। विकसित देशों में इस तरह के अध्ययन के नतीजे बताते हैं कि उनमें बेंजोएट की मात्रा अनुमेय सीमा से बहुत कम मिलती है, इसलिए उनके सेवन से स्वीकार्य दैनिक खपत की अनुमेय सीमा को बहुत कम मात्रा में संतृप्त करती है। टोमैटो और चिली सॉस में कृत्रिम रंग के प्रयोग की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु सस्ता टोमैटो सॉस बनाने के लिए उसमें कद्दू व पपीता जैसी सब्जियों की मिलावट की जाती है और उसमें लाल रंग लाने के लिए कृत्रिम रंग मिलाया जाता है। इसी तरह के हैदराबाद के गैर औद्योगिक क्षेत्र के एक अध्ययन में सनसेट एलो और टारट्राजिन अपने अनुमेय सीमा से ज्यादा पाए गए और बच्चों में इनकी स्वीकार्य दैनिक खपत अनुमेय सीमा से ज्यादा थी।

कुवैत के एक अध्ययन में टारट्राजिन, सनसेट यलो और कारमाईजीन स्वीकार्य दैनिक खपत अनुमेय सीमा से ज्यादा मिले। वर्तमान अध्ययन में भी सनसेट यलो बच्चों के अधिकतम सेवन श्रेणी में स्वीकार्य दैनिक खपत के अनुमेय सीमा को 20 प्रतिशत तक संतृप्त करती है, जो कि एक अकेली समुदाय से बहुत ज्यादा होने का संकेत देती है।

कृत्रिम रंग एवं बेंजोएट संरक्षक का कुप्रभावः-

कृत्रिम रंगों का अपने आप में कोई पोषण मूल्य नहीं है। कई कृत्रिम रंगों के प्रयोग पर ये जानने के बाद कि उनके सेवन से कैंसर जैसी बीमारी हो सकती हैं, उन पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। भारतीय खाद्य अपमिश्रण अधिनियम ने खाद्य उत्पादों में आठ कृत्रिम रंगों के प्रयोग की अनुमति दे दी है। साथ ही इनकी अनुमेय सीमा 100 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 शरीर भार निर्धारित की गई है, परन्तु यह देखा गया है कि लघु उद्योगों में इनकी मात्रा अनुमेय सीमा से ज्यादा मिलती है।

सनसेट यलो, टारट्राजिन, कारमाइजीन और एमरैंथ जैसे एजो डाइज (Azo dyes) लोगों में एलर्जी की संभावना उत्पन्न कर देते हैं और एस्प्रिन के प्रति असहिष्णुता जैसी स्थिति उत्पन्न करते हैं।

सनसेट यलो के अधिक सेवन से दस्त, उल्टी, त्वचा में सूजन जैसी कई बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं। European Food Safety Authority (EFSA) ने 2009 में सनसेट यलो के स्वीकार्य दैनिक सेवन को 2.5 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 शरीर भार से घटाकर 1.0 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 शरीर भार करने का निर्णय लिया है। सनसेट यलो के उत्पादन में अशुद्धियों से अनसल्फोनेटेड अमीन्स (unsulphonated amines) की 100 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 से ज्यादा सान्द्रता हो सकती है जो कैंसर जैसी बीमारियों को जन्म दे सकती हैं। एमरैंथ के सेवन से एस्प्रिन असहिष्णुता के साथ अस्थमा के तीव्र लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। पोन्सियू 4 आर का प्रयोग अमेरिका, नार्वे और फिनलैण्ड में प्रतिबंधित है, क्योंकि इससे कैंसर हो सकता है। EFSA ने 2009 में पोन्सियू 4 आर के स्वीकार्य दैनिक सेवन को 4.0 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 शरीर भार से घटाकर 0.7 मि0ग्रा0 प्रति कि0ग्रा0 शरीर भार करने का निर्णय लिया है। वर्तमान में US Food and Drug Administration (USFDA) द्वारा पोन्सियू 4 आर को प्रतिबंधित पदार्थ के रूप में सूचीबद्ध किया गया है।

टारट्राजिन सभी एजो डाइज (Azo dyes) में सबसे ज्यादा एलर्जी उत्पन्न करने वाला और एस्प्रिन असहिष्णुता के लिए जिम्मेदार माना गया है। इसके सेवन से कई बीमारियाँ जैसे, अपाचन, चिन्ता, सिरदर्द, धुंधली दृष्टि, खुजली, कमजोरी, घुटन, त्वचा में बैंगनी धब्बे और अनिद्रा की शिकायत हो सकती है।

इरीथ्रोसीन से थाइराइड ट्यूमर, गुणसूत्रो क्षति, ब्रांकोकांस्ट्रीक्शन और प्रोटीन बाध्य आयोडीन में बढ़ोत्तरी हो सकती है। आरेंज II मंद विकास, जिगर और तिल्ली वजन में वृद्धि, एवं म्यूटाजेनिक गतिविधि हो सकती है।

खाद्य संरक्षक का प्रयोग खाद्य सुरक्षा में सुधार लाने के लिए किया जाता है। यह संरक्षक खाद्य उत्पादों के नुकसान एवं विषाक्तता को रोकने में और खाद्य उत्पादों के shelf life को बढ़ाने में सहायक होता है, परन्तु खाद्य संरक्षक का असीमित प्रयोग और ज्यादा मात्राा में सेवन स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भी है।

सोडियम बेंजोएट, विटामिन-सी की मौजूदगी में बेंजीन बनाता है जो कि कैंसर उत्पन्न करने में सहायक होता है। इसके अलावा सोडियम बेंजोएट कोशिका में डी0एन0ए0 के महत्वपूर्ण हिस्सो को निष्क्रिय कर सकता है, जिससे कि कई बीमारियाँ जैसे पार्किन्सन या न्यूरोडीजेनेरेटिव रोग उत्पन्न हो सकते हैं और समय से पहले ही बुढ़ापा आ सकता है।

हाल ही में हुए एक अध्ययन में सोडियम बेंजोएट और कृत्रिम खाद्य रंग जैसे सनसेट यलो, टारट्राजिन, कारमाइजीन, पोन्सियू 4 आर, क्वीनोलीन यलो एवं अलूरारेड के मिश्रण से बच्चों में अतिसक्रिय व्यवहार में वृद्धि को जोड़ा जा रहा है, जिससे कि उनमें चिड़चिड़ापन, बेचैनी और अनिद्रा की शिकायत पाई गई। हालांकि अभी इसके कोई ठोस सबूत नहीं मिल सके हैं पर 2008 में Food Standard Agency (FSA) ने इन कृत्रिम रंगों को स्वैच्छिक रूप से हटाने के लिए मांग की है और European Union ने निकट भविष्य में इन छः रंगों को खाद्य एवं पेय पदार्थों से हटाने का निर्देश दिया है।

ठेलों पर बिकने वाले खाद्य उत्पादों में आम बोधगम्य खतरों में जैविक, रासायनिक और भौतिक प्रदूषण शामिल है, लेकिन वर्तमान अध्ययन में कृत्रिम रंग एवं उच्च मात्रा में संरक्षक का प्रयोग जाने-अनजाने में ठेलों के अस्वास्थ्यकर वातारण में पनपी गंदगियों को ढकने के लिए किया गया है, जिसमें आर्थिक लाभ प्रबल दिखायी देता है। अतः क्षेत्र विशेष खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता के प्रति जागरूक कार्यक्रमों को तेज किया जाना चाहिए, जिससे खाद्य सुरक्षा के सिद्धांत वास्तविकता बनकर सामने आयें।

उत्तर प्रदेश की चयनित नदियों में संकटग्रस्त मत्स्य प्रजातियों का परिस्थितिकी तन्त्र स्केलिंग एवं संरक्षण

विनीत दुबे 1, शैलेश कुमार मिश्र 1, ब्रज किशोर गुप्ता 1, अरविन्द द्विवेदी 1,
राष्ट्रीय मत्स्य आनंवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश की नदियों का निरन्तर भूमि उपयोग में बदलाव, प्रदूषण, जलवायू परिवर्तन, विदेशी प्रजातियों का प्रसार एवं अवांछनीय मत्स्य दोहन उत्तर प्रदेश की मत्स्य विविधता के लिए खतरा उत्पन्न कर रहा है। अतः राज्य की प्रमुख नदियों में मत्स्य प्रजातियों के संरक्षण हेतु अध्ययनों की नितांत आवश्यकता है। इसी दिशा में एक कारगर कदम उठाते हुए उत्तर प्रदेश की कुछ विलुप्तप्राय मत्स्य प्रजातियों के संरक्षण को लक्ष्य बनाकर परिस्थितिकी यन्त्र स्केलिंग एवं पर्यावरण जैव प्रौद्योगिकी की सहायता से एक अध्ययन किया गया।

उत्तर प्रदेश में गोमती एवं घाघरा, गंगा नदी की दो प्रमुख सहायक नदियाँ हैं। घाघरा नदी दक्षिण-पूर्व दिशा में छपरा (बिहार राज्य) की तरफ बहती है जहाँ यह 570 मील (917 किमी.) की दूरी तय करके गंगा नदी से मिलती है। गोमती नदी अति उपजाऊ भूमि तथा घनी आबादी वाले क्षेत्रों से होकर लगभग 730 किमी. तक बहती है। इसकी उत्पत्ति पीलीभीत जिले में 3 किमी. पूर्व से होती है तथा यह वाराणसी एवं गाजीपुर से मध्य गंगा नदी में मिल जाती है। साहित्य एवं क्षेत्रों के पूर्व सर्वेक्षण के आधार पर उत्तर प्रदेश के अन्दर गोमती में 6 एवं घाघरा में 5 संभाव्य नमूना संग्रह क्षेत्रों को चिन्हित किया गया। इसके उपरांत दोनों नदियों से मछलियों के नमूने एवं आवास मानको का संग्रह करने हेतु मौसमी सर्वेक्षण किए गये। फलस्वरूप कुल 26 भौतिकी-रसायन (प्रत्येक-13) मानकों को सूचीबद्ध कर

चित्र 1. गोमती (1 एवं 2) घाघरा (3 एवं 4) नदियों की आवास संरचना

उनमें उतार-चढ़ाव का अध्ययन किया गया। नदियों में जल-बहाव जुलाई माह में अधिकतम मापा गया। जल में घुलीत ऑक्सीजन (डी.ओ.) घाघरा में अधिक एवं गोमती नदी लखनऊ में कमतर मापी गयी। इसके अतिरिक्त गोमती नदी लखनऊ में अत्यधिक कम जल बहाव एवं भारी प्रदूषा के चलते पूर्व मानसून ऋतुओं में मछलियों की बहुसंख्यक मृत्युदर भी आँकी गयी। सम्पूर्ण घुलित ठोस (टी.डी.एस.), क्षारकता एवं गन्दगी जैसे मानकों ने नदियों के नमूना क्षेत्रों में मौसमी उतार-चढ़ाव की समान प्रवृत्तियाँ दर्शायीं। गोमती नदी के क्षेत्रों में अमोनिया सम्पूर्ण कठोरता, नाइट्रेटा (NO_2) की सान्द्रता दोनों नदियों में नगण्य थी। दोनों नदियों के मध्य भागों में जल-चालकता अधिक थी जिससे वहाँ घुले पदार्थों की अधिकता की पुष्टि होती है।

इस अध्ययन में, गोमती नदी की 6 तथा घाघरा नदी की 7 प्रजातियाँ सी.ए.एफ.एफ. 2006 (मीठाजल मछलियों का संरक्षण मूल्यांकन) के अनुसार संकटापन्न समूह से सम्बन्ध रखती हैं। चिताला चिताला, ओम्पोक पाब्दा, ओम्पोक बाइमाकुलेटस एवं यूट्रोपिकथिस वाचा जैसी महत्वपूर्ण भयग्रस्त मत्स्य प्रजातियों को आवास अंगुलिछाप तथा पारितन्त्र स्तरीकरण की मदद से विस्तृत अध्ययन हेतु चयनित किया गया। इन

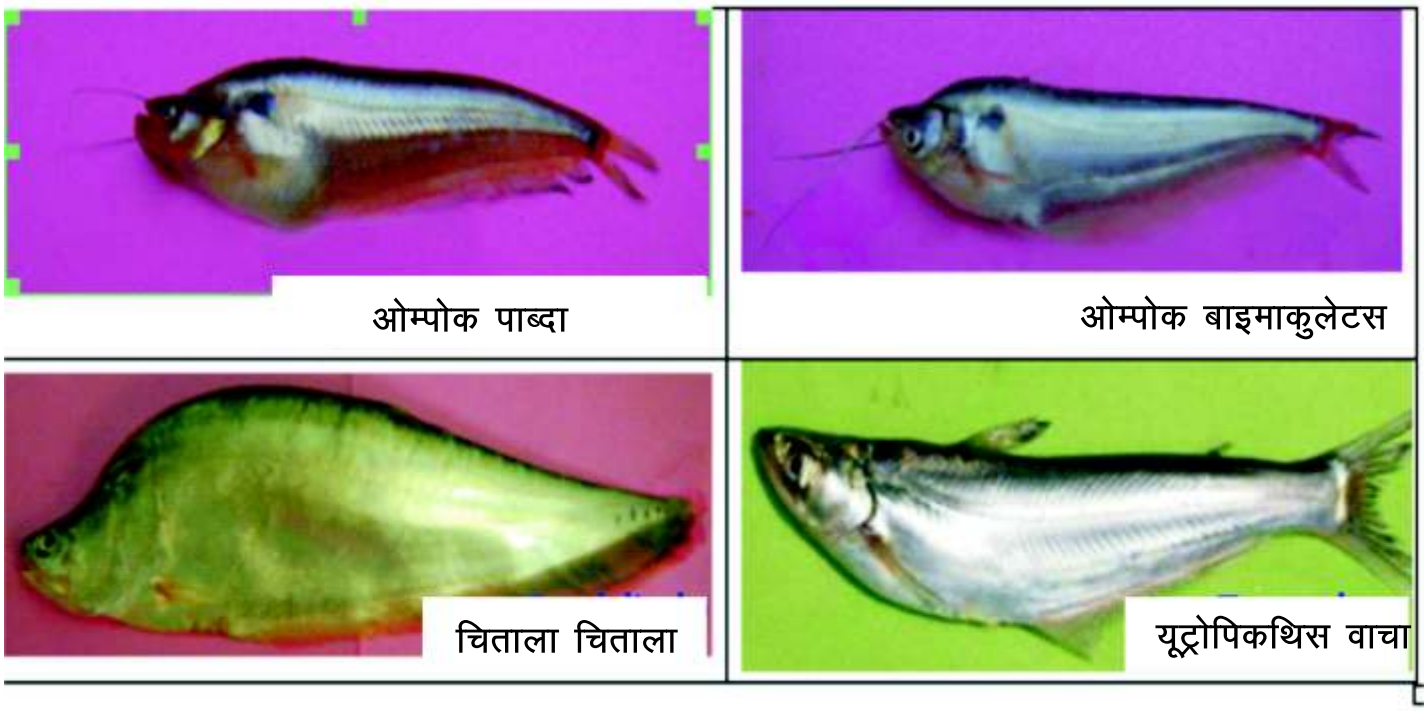

चित्र 2. अध्यन के लिए चयनित लुप्तप्राय मछलियां

विलुप्तप्राय प्रजातियों का वितरण अत्यन्त विविधपूर्ण है। गोमती नदी में विलुप्तप्राय प्रजातियों में ओम्पोक बाइमाकुलेटस एवं घाघरा नदी में यूट्रोपिकथिस वाचा का अधिकता पायी गयी। दोनों नदियों में ओम्पोक पाबदा का वितरण ऊपरी एवं मध्य भाग में जबकि ओम्पोक बाइमाकुलेटस एवं यूट्रोपिकथिस वाचा का सम्पूर्ण नदी में (ऊपर से नीचे तक) पाया गया।

आवास अंगुलिछाप हेतु चयनित मत्स्य

प्रजातियों के नमूने तथा जल नमूने सभी संग्रह क्षेत्रो से एकत्र किये गये। चयनित मत्स्य नमूनों के ओटोलिथ एवं पानी के नमूनों से K,Cd, Cr, B, Pb, Zn, Mn, Na, Sr, Ba, Mg, जैसे तत्वों को विश्लेषित किया गया। जल नमूनों के तात्विक विश्लेषण के परिणामों ने महत्वपूर्ण भिन्नता दर्शायी। तदुपरांत इसका सम्बन्ध मत्स्य ओम्पोक पाबदा एवं ओम्पाक बाइमाकुलेटस) ओटोलिथ के तात्विक संघटन के साथ स्थापित किया गया। इन विश्लेषित तत्वों में Sr, K & Mg की सान्द्रता दोनों प्रजातियों में अधिक तथा Zn, की ओम्पोक पाबदा में अधिक पायी गयी। Ba एवं Zn की सान्द्रताओं का ओटोलिथ एवं जल के नमूनों में सहसम्बन्ध क्रमशः अधिक एवं कम पाया गया।

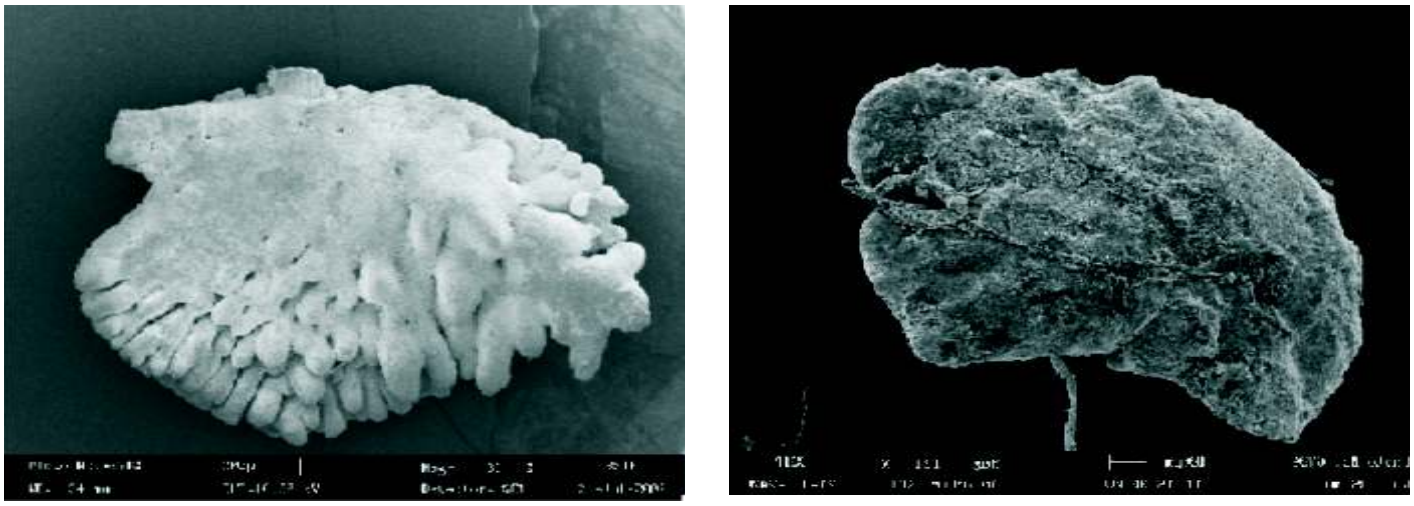

ओम्पोक पाब्दा ओम्पोक बाइमाकुलेटस

चित्र 3. मछलियों के ओटोलिथ की स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन सूक्ष्म संरचना

तालिका 1. चयनित लुप्तप्राय मछलियों के ओटोलिथ में तत्वों की मौलिक रचना

तत्वों का विश्लेषण किया	ओम्पोक पाब्दा		ओम्पोक बायीमकुलेटस	
	साइट 1 औसत ±SD	साइट 2 औसत ±SD	साइट 1 औसत ±SD	साइट 2 औसत ±SD
Sr (µg/L)	426.2±11.14	549.6±4.14	340.3±9.51	448.4±10.62
Ba (µg/L)	17.68±1.706	28.12±20.01	14±2.32	18±1.87
Zn (µg/L)	71.61±1.518	109.4±0.6	32.6±1.23	40.74±0.091
Mg (µg/L)	288.1±17.76	699.2±83.14	94.6±8.35	146.2±32.24
Mn (µg/L)	18.44±0.049	46.74±0.325	2.1±0.04	10.8±0.1
Na (µg/L)	345.9±888.9	2197±1422.3	-1172±415.2	-1380±674.8
K (µg/L)	1109±4.9	1545±87.9	520±5.3	713±5.03
Cd (µg/L)	1.853±0.935	2.132±2.38	0.21±0.14	0.349±0.154
Cr (µg/L)	20.75±2.89	22.6±3.07	4.36±2.1	19.21±1.89
B (µg/L)	106.7±3.54	119.8±4.59	48.36±2.6	52.85±2.33

गोमदी नदी के चयनित संकटापन्न प्रजातियों के लिए पी.सी.ए. (प्रधान घटक विश्लेषण) के प्रयोग द्वारा प्राथमिकता आवास उपयोग प्रतिरूप तैयार किया गया। तीव्र बहाव वाले जल में भयग्रस्त प्रजातियों का संकलन, अत्यन्त गहराई, चालकता तथा गन्दगी जैसे मानक इन गुणों वाले क्षेत्रों के संरक्षण की उच्चतम प्राथमिकता को दर्शाते हैं। गोमती नदी में मत्स्य संकलन के तरीकों एवं मत्स्य समुदाय संरचना के आधार पर 6 प्रमुख प्रकार के मत्स्य आवास चिन्हित किये गये जो इस प्रकार हैं -

(1) तीव्र बहाव वाले जल (2) प्रतिगामी जल एवं छिछले गड्ढे (3) गहरे गड्ढे (4) नदी का घुमान एवं जल मार्ग मिलान (5) खुली नदी एवं (6) जल प्लावन मैदान।

विभिन्न आवास प्रकारों में मत्स्य प्रजातियों के होने में काफी महत्वपूर्ण विभेद पाये गये। ऐसा अवलोकन किया गया कि ओम्पोक तथा यूट्रोपिकथिस जैसे वंशों के लिए तीव्र जल बहाव वाले आवास जबकि चिताला, स्पीरेटा तथा नोटोप्टेरस जैसे वंशों के लिए गहरे गड्ढे सरीखे आवास सर्वाधिक वरीय है।

इस अध्ययन का महत्व इस तथ्य में सन्निहित है कि गोमती एवं घाघरा जैसी अतिमहत्वपूर्ण नदियों की मत्स्य प्रजातियों के विलुप्त होने तथा आवास विखण्डन के लिए जिम्मेदार कारकों (जिसमें अवैध मछली पकड़, कीटनाशकों का अधिकाधिक प्रयोग, औद्योगिक प्रदूषण तथा मृदा जमाव शामिल है) को संक्षेपित करने के उद्देश्य से गोमदी नदी के विभिन्न नमूनो संग्रह क्षेत्रों के वर्तमान सर्वेक्षण के आधार पर एक प्रतिरूप तन्त्र तैयार किया गया है।

कागज उद्योग में लुगदी विरंजीकरण से उत्पन्न प्रदूषकों को कम करने की जैविक विधियों का आकलन

डॉ0 अभयराज और डॉ0 रामचन्द्रा

पर्यावरण सूक्ष्मजैविकी अनुभाग, भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

प्रस्तावना :

कागज निर्माण में प्रयुक्त सफेद सेलूलोज युक्त लुगदी को लकड़ी में मौजूद अन्य घटकों (लिग्निन, हेमिसेलुलोज, पेक्टिन इत्यादि) को लुगदीकरण एवं विरंजीकरण जैसी रासायनिक प्रक्रमों की सहायता से हटाकर बनाया जाता है। परन्तु इन रासायनिक प्रक्रिया में मुख्य रूप से क्लोरीन विरंजीकरण के दौरान बहुत से क्लोरीनेटेड कार्बनिक यौगिक पर्यावरणीय प्रदूषक के रूप में उत्पन्न होते हैं, जो जलीय जीवों के साथ-साथ मानव स्वास्थ्य के लिए भी घातक हैं। इस कारण, कागज उद्योग के उत्प्रवाह का पर्यावरण में सुरक्षित निस्तारण एक बहुत बड़ी चुनौती है। क्लोरीनेटेड यौगिकों के विषाक्तता को देखते हुए विभिन्न देशों के प्रदूषण नियंत्रण प्राधिकरण ने कागज उद्योग के उत्प्रवाह में इन रसायनों की मात्रा को नियंत्रित करने के लिए निर्धारित सीमा तय किये हैं, जिसका अनुपालन करना कागज उद्योग के लिए नैतिक एवं वैधानिक आवश्यकता है। इसलिए कागज उद्योग उचित तकनीकी की खोज में निरंतर प्रयासरत है, जो क्लोरीनेटेड प्रदूषकों को कम करने में सहायक हो। वर्तमान में विकसित देशों के कुछ वृहद् स्तर के कागज कारखानों में क्लोरीन रहित लुगदी विरंजन तकनीकी का प्रयोग हो रहा है। लुगदी विरंजीरकण की इन नवीन विधि में क्लोरीन के स्थान पर आक्सीजन, हाइड्रोजन परआक्साइड और ओजोन जैसे रासायनों का प्रयोग किया जाता है, जिसमें क्लोरीनेटेड कार्बनिक यौगिक नहीं बनता है। यह तकनीकी पर्यावरण सुरक्षा के दृष्टिकोण से काफी प्रभावी है, परन्तु आर्थिक रूप से काफी महँगी है। क्योंकि इसके अनुपालन में कागज उद्योग को अपने मौजूदा प्रक्रम को बदलने के लिए बड़ी रकम खर्च करनी पड़ती है, जो मध्यम और लघु स्तर के उद्योगों की क्षमता से बाहर है। इसलिए, अधिकांश कागज कारखाने आज भी लुगदी विरंजीरकण के लिये क्लोरीन अथवा क्लोरीन डाइऑक्साइड रासायनों का उपयोग कर रहे हैं। वर्तमान में सबसे लोकप्रिय तरीका एंजाइम द्वारा लुगदी जैव-विरंजीकरण है, जो क्लोरीन की खपत और क्लोरीनेटेड प्रदूषकों के निर्माण को कम करता है। लेकिन इसके बावजूद अभी भी लुगदी विरंजीरकण की इन नवीन तकनीकी का व्यापक इस्तेमाल सीमित है। इस प्रस्तुत लेख में जैव-विरंजीकरण तकनीकी की वर्तमान स्थिति में उपयोग, आकलन एवं भविष्य की संभावनाओं का उल्लेख किया गया है।

लुगदी और कागज उद्योग :

कागज एक बहु उपयोगी सामग्री है, जिसका उपयोग प्रत्येक क्षेत्र जैसे लेखन और मुद्रण के अलावा पैकेजिंग, सफाई उत्पादों, औद्योगिक और निर्माण की प्रक्रिया में होता है। विश्व स्तर पर, कागज उपयोग और उत्पादन दोनों में आशातीत वृद्धि हुई है। वैश्विक लुगदी और कागज उद्योग में उत्तरी अमेरिका (संयुक्त

राज्य अमेरिका, कनाडा) उत्तरी यूरोपीयन (फिनलैंड, स्वीडन) और पूर्वी एशियाई देशों (जैसे जापान) का प्रभुत्व है। आस्ट्रेलिया और लैटिन अमेरिका में भी उल्लेखनीय संख्या में लुगदी और कागज उद्योग है, अलगे कुछ वर्षो में भारत और चीन में भी कागज उद्योगों की संख्या में भारी बढ़ोत्तरी की सम्भावना है। वर्तमान में वैश्विक कागज उत्पदन लगभग 37 करोड़ टन प्रतिवर्ष है, जबकि भारत में यह दर 9 लाख टन प्रति वर्ष है जो 2010 के अंत तक बढ़कर करीब 11.2 लाख टन प्रति वर्ष होने की उम्मीद है, कागज निर्माण में इस्तेमाल लुगदी बनाने के लिए वर्तमान में 57% लकड़ी (बांस, जंगली कठोर और मुलायम लकड़ी), 39% बेकार कागज और 4% कृषि अवशेषों (गन्ने की खोई) का कच्चे पदार्थ के रूप में प्रयोग हो रहा है। कुल कागज उत्पादन में गन्ने की खोई का 10% विश्व स्तर पर तथा दक्षिण अमेरिका, भारत और चीन में 20% का योगदान है।

कागज निर्माण की प्रक्रिया :

लकड़ी की जटिल संरचना के कारण, कागज निर्माण में क्रमबद्ध तरीकों से कई रासायनिक प्रक्रियाओं का उपयोग होता है। सामान्यतः सभी प्रकार के कच्चे

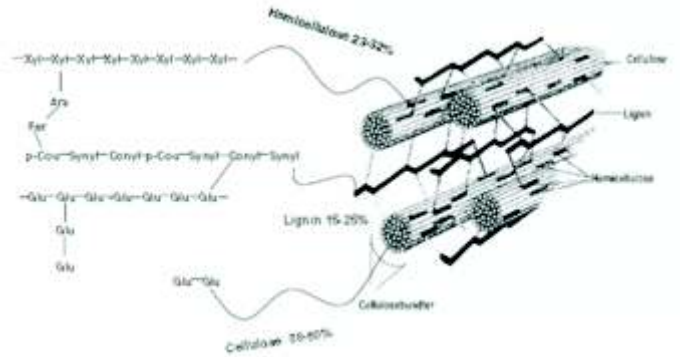

fp= l[;k&1 ydMh Qkbcj dh ljpuk d fy, iLrkfor ekMy

पदार्थ जिसमें कठोर और मुलायम लकड़ी तथा विभिनन कृषि अवशेष शामिल हैं जिसमें सेलूलोज (38-50%), लिग्निन (15-25%) एवं हेमिसेलूलोज (23-32%) जैसे मुख्य कार्बनिक अवयव पाए जाते हैं। इन कार्बनिक यौगिकों की रासायनिक संरचना एक दूसरे से काफी भिन्न होती है।

प्रायः सेलूलोज हरे पादप की प्राथमिक कोशिका दीवार का संरचनात्मक घटक है। सेलूलोज डी-ग्लूकोज की सौ से लेकर दस हजार से अधिक इकाइयों से बना एक कार्बनिक पालीसैकराइड है, जिसमें डी-ग्लूकोज की इकाई $\beta \ (-\rightarrow 4)$इथर के बंधन से जुड़ी होती है। हेमिसेलूलोज विभिन्न प्रकार के सुगर मोनोमर से बना एक जटिल हेटेरोपालीसैकराइड है, जिसमें डी-जाइलोज, डी-मैनोज, डी-ग्लैक्टोज और एल-अरेबिनोज सुगर पाई जाती है। जबकि लिग्निन एरोमैटिक फिनोलिक यौगिकों का बहुत बड़ बहुलक है। जिसकी मूल इकाई पी-कोउमर्ल, कोनिफेर्ल और सिनापाइल एल्कोहल है, जो एंजाइमी प्रतिक्रिया के द्वारा पालीमेराइज करके एक बहुत बड़ा एरोमैटिक बहुलक का गठन करती है। लिग्निन पौधों की माध्यमिक कोशिका भित्ति का एक अभिन्न अंग है, जो सेलूलोज, हेमिसेलूलोज और पेक्टिन के मध्य कोशिका भित्ति में उपस्थिति रिक्त स्थान को भरती है तथा पादपों की संरचना को मजबूती प्रदान करती है। सेलूलोज का उपयोग औद्योगिक पेपरबोर्ड और कागज उत्पादन के लिया जाता है जो मुख्य रूप से लकड़ी से प्राप्त होता है। लकड़ी से सेलूलोज लुगदी परिवर्तन में कागज उद्योग विभिन्न रासायनिक प्रक्रमों के द्वारा हेमिसेलूलोज, लिग्निन सहित अन्य घटकों को लकड़ी से अलग करते हैं जो निम्नवत् हैं :-

(अ) लुगदीकरण -

वैसे तो लकड़ी लुगदीकरण के कई विधिया है, परन्तु सबसे प्रचलित क्राफ्ट पल्पिंग विधि है, जिसका योगदान कागज उत्पादन में करीब 90% है। इस विधि में कास्टिक सोडा और सोडियम सल्फाइड का इस्तेमाल होता है। कागज में इस्तेमाल सेलूलोज को प्राप्त करने के लिये लकड़ी के चिप्स को क्षारीय घोल (कास्टिक सोडा और सोडियम सल्फाइड) में उच्च-तापक्रम (130-180 डिग्री सेल्सियस) पर कई घंटों तक पकाकर लिग्निन, हेमिसेलूलोज, पेक्टिन एवं रेजिन ऐसिड जैसे अवयवों को अलग किया जाता है। इस प्रक्रम के दौरान अधिकतर हेमिसेलूलोज तथा लिग्निन (95%) क्षार के प्रभाव से गलकर लकड़ी से अलग हो जाती है। लुगदीकरण के उपरांत प्राप्त लुगदी भूरे रंग की होती है (चित्र सं. 2, B) जिसमें करीब 5% लिग्निन अवशेष रहती है। भूरी लुगदी निम्न गुणवत्ता के कागज जेसे गत्ते, लिफाफे, पैकेजिंग कागज एवं दफ्ती इत्यादि बनाने योग्य होती है। अच्छी गुणवत्ता के कागज जो लेखन एवं मुद्रण कार्यो में उपयोग होता है, इसको बनाने के लिए लुगदी से अवशेष लिग्निन को हटाना आवश्यक होता है।

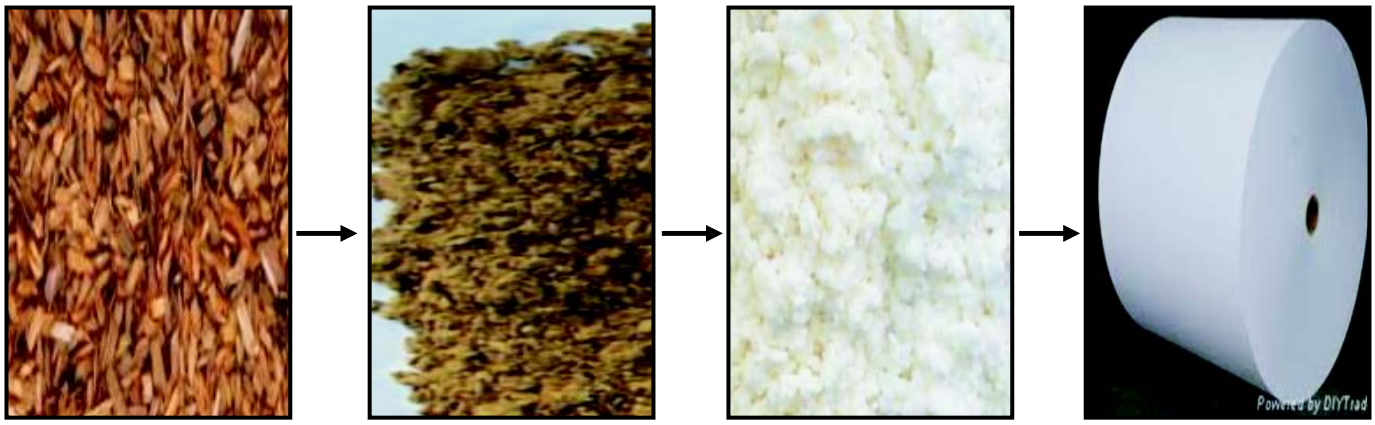

चित्र सं.-2 लकड़ी की चिप्स (A) लुगदीकरण के बाद (B) विरंजीकरण के बाद लुगदी (C) तथा अंतिम कागज उत्पाद (D)।

(ब) विरंजीकरण :

अंतर्राष्ट्रीय मानकीकरण संगठन (आई.एस.ओ.) ने कागज के उपयोग के अनुसार उनके मानक तय किये है, जिसको % आई.एस.ओ. चमक के रूप में मापा जाता है। जैसे अखबारी कागज 55-75% तथा लेखन और मुद्रण योग्य कागज 104% आई.एस.ओ. चमक तक होना चाहिए। इन आई.एस.ओ. चमक तक के कागज बनाने के लिये कागज कारखाने रासायनिक विरंजीकरण विधि से अवशेष लिग्निन को हटाकर लुगदी को सफेद करती है। वर्तमान में लुगदी विरंजीकरण के लिए पारम्परिक और अधुनिक विधियों का प्रयोग हो रहा है जो तालिका संध्या (1) में वर्णित है। पारम्परिक विधि में मौलिक क्लोरिन रासायनों का प्रयोग होता है। यह आक्सीकरण रासायन लुगदी में मौजूद अवशेष लिग्निन को क्षारीय घुलनशील उत्पादों में परिवर्तित कर देती है, जिसको बाद में क्षारीय घोल द्वारा लुगदी से अलग किया जाता है। फलस्वरूप लुगदी का रंग पूर्ण रूप से सफेद हो जाता है। (चित्र सं. 2, C)। शुरू में क्लोरीन यौगिक आधारित विरंजीकरण प्रक्रम दुनिया भर के कागज कारखानों में प्रयोग हो रहा

था। परन्तु, इस विधि द्वारा उत्पन्न विषैले प्रदूषको के दुष्प्रभाव को देखते हुये वर्ष 1990 के बाद विकसित देशों की करीब 75% कागज कारखानों में क्लोरीन डाइऑक्साइड आधारित विरंजन प्रक्रम का प्रयोग हो रहा है। विरंजीकरण के इस विधि में कम मात्रा में क्लोरीनयुक्त प्रदूषक बनते हैं। क्लोरीन रहित लुगदी विरंजीकरण विधि भी पूरे विश्व में 5% है जो केवल विकसित देशों में प्रयोग में हो रहा है। क्लोरीन यौगिक सस्ती और अपने प्रभावी ऑक्सीकरण गुण के कारण भारत सहित विकासशील देशो के लगभग सभी कागज कारखानों में आज भी बड़े पैमाने पर प्रयोग हो रहा है।

rkfydk l-1 oreku le; e yxnh fojthdj.k dh fof/k;k ,o bul mRiUu in"kd

विरंजीकरण विधि	रासायनिक विरंजीकरण प्रक्रम	उत्सर्जित प्रदूषक
मौलिक क्लोरीन विरंजीकरण	सी इ एच एच	बिषैले क्लोरीनेटेड कार्बनिक यौगिक, कार्सेनोजेन (डाइआक्सिन और फ्युरान)।
मौलिक क्लोरीन रहित (क्लोरीन डाइऑक्साइड) विरंजीकरण	डी इ डी	उपरोक्त, किन्तु कम मात्रा में।
पूरी तरह से क्लोरीन रहित विरंजीकरण	ओ जेड इ पी वाई	प्रदूषक रहित अर्थात पर्यावरण सुरक्षात्मक विधि।

सी = क्लोरीन, इ = अल्कली एक्सट्रैक्सन, डी = क्लोरीन डाइऑक्साइड, एच = सोडियम हाइपोक्लोराइट, ओ = आक्सीजन, पी = परआक्साइड, जेड = ओजोन, वाई = सोडियम हाइड्रोसल्फाइड

क्लोरीन विरंजीकरण से उत्पन्न प्रदूषक एवं इसके दुष्प्रभाव :-

क्लोरीन आधारित विरंजीकरण से विभिन्न प्रकार के क्लोरीनेटेड कार्बनिक यौगिक जैसे अति विषैले प्रदूषक बनते है। ये जहरीले सहउत्पाद क्लोरीन और लिग्निन में मौजूद फिननालिक यौगिकों के बीच प्रतिक्रिया से उत्पन्न होते है। इन क्लोरीनेटेड प्रदूषको को एडजार्बबेबल आर्गेनिक हेलोजन (ए.ओ.एक्स.) के रूप में मापा जाता है। प्रायः क्लोरीन आधारित लुगदी विरंजीकरण से करीब 5 किलो ए.ओ.एक्स. प्रति टन कागज उत्पाद से बनता है, जो मिल उत्प्रवाह के साथ वातावरण में पहुचकर जलीय जीव-जंतु के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते है। क्लोरोफिनाल्स एक तीव्र जहरीला, जैवसंचयी, हठधर्मी यौगिक है। जैविक प्रणाली में क्लोरोफिनालस की विषाक्तता पर काफी आकड़े उपलब्ध है। क्लोरोफिनाल का मानव स्वास्थ्य पर 90% से अधिक घातक खाद्य श्रृंखला के माध्यम से होता है। ये वसाघुलनशील यौगिक खाद्य-श्रृंखला के माध्यम से मनुष्यों के शरीर में पहुँचकर मांसपेशियों में एकत्रित होकर प्रजनन, विकास, प्रतिरक्षा, हार्मोन, गुर्दा और खून बनाने की क्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव डालते है। क्लोरोफिनालस के अन्य यौगिक जैसे ट्राईक्लोरोफिनोल ट्राई और टेट्रा क्लोरोगुवायकाल मछली में जैवसंचय और तीव्र विषाक्तता के लिए

जिम्मेदार हैं। कनाडा में विभिन्न जल निकायों में इन यौगिको की उपस्थिति के कारण वर्ष 1988 में मत्स्य पालन बुरी तरह प्रभावित हुआ। क्लोरोफिनाल के बुरे प्रभाव के प्रति जनमानस की जागरूकता के कारण कई देशों के प्रदूषण नियंत्रण प्राधिकरण ने कागज उद्योग के बहिस्राव में ए.ओ.एक्स. की मात्रा निर्धारित कर दिये है। जैसे भारत में केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने ए.ओ. एक्स. की सीमा 1 किग्रा/टन कागज उत्पाद तय किया है। जबकि स्वीडन में राष्ट्रीय पर्यावरण संरक्षण बोर्ड ने ए.ओ.एक्स. मात्रा को 0.1 किग्रा/टन कागज उत्पाद तक सीमित किया है जो सन् 2010 से प्रभावी है। ए.ओ.एक्स. की इस निर्धारित मानक को पूरा करने के लिये कागज कारखानों के ऊपर जबरदस्त दबाव है। वर्तमान समय में उन्नत प्रौद्योगिकी जो बिना क्लोरीन प्रयोग पर आधारित है जो काफी मंहगी होने के कारण व्यापक रूप से प्रयोग में नहीं है। क्योंकि इस नयी तकनीकि के औद्योगिक प्रयोग में कागज कारखानों में उपलबध प्रक्रम प्रणाली को बदलना पड़ेगा, जो मध्यम तथा लघु स्तर के कारखानों के लिए असंभव है। यही कारण है कि आज भी दुनिया की अधिकांश कारखाने पारम्परिक अर्थात क्लोरिन आधारित विरंजीकरण विधि का प्रयोग करने के लिये बाध्य हैं।

लुगदी विरंजन के लिए जैविक विधियाँ :-

क्लोरीन आधारित रासायनिक विरंजीकरण प्रक्रिया से उत्पन्न जहरीले प्रदूषण को कम करने के लिए वैज्ञानिकों ने क्लोरीन की खपत कम करने के लिए जैविक विरंजीकरण विधियों पर काफी ध्यान केंद्रित किया। जैविक विधि में लुगदी विरंजन के लिए एंजाइमों का प्रयोग शामिल है जो न केवल आर्थिक दृष्टिकोण से उपयोगी है बल्कि पर्यावरण के अनुकूल भी है। लुगदी जैव'-विरंजीकरण में उन्हीं एंजाइमों का प्रयोग हुआ है, जिसमें लकड़ी फाइबर के विशिष्ट घटकों को अपघटन करने की क्षमता होती है। अब तक, लुगदी विरंजीकरण के लिए अधिकतर शोध लिग्निनोलिटिक और जायलोनोलिटिक एंजाइम पर किया जा रहा है, जो क्रमशः लिग्निन एवं जायलन (हेमिसेलूलोज) को अपघटित करती है।

लिग्निनोलिटिक एंजाइम :-

लिग्निनोलिटिक एंजाइम अक्सीडेटिव एंजाइमों का समूह हैं, जिसमें लिग्निन परआक्सीडेज, मैंगनीज परआक्सीडेज और लैकेज एंजाइम शामिल हैं। ये एंजाइम विभिन्न को-फैक्टर की उपस्थित में लिग्निन के एरोमैटिक संरचना तथा विभिन्न मूल इकइयों के बीच के बंधन को तोड़ती है। अधिकतर लिग्निनोलिटिक एंजाइम कवको से पृथक किये है। जिसमें कुछ कवक लिग्निन परआक्सीडेज और मैंगनीज परआक्सीडेज का उत्पादन करते है जबकि कुछ मैंगनीज परआक्सीडेज और लैकेज का उत्पादन करते हैं, क्योंकि इन एंजाइमों की अभिव्यक्ति का ढंग एवं गुणों की विभिन्नता कवक की विभिन्न प्रजातियों पर निर्भर करता है। लिग्निनोलिटिक एंजाइम अपनी लिग्निन अपघटित करने की क्षमता के कारण लुगदी जैव-विरंजीकरण के लिए प्रयोग की जाती है, परन्तु इन एंजाइमों का प्रयोग लुगदी विरंजीकरण के लिये ज्यादा प्रभावी नहीं होता है। काल के वर्षों में लैकेज एंजाइम कुछ संश्लेषित मध्यस्थ रासायनों (ABTS, 2,2'-azinobis (3-ethylbenzthiazoline-6-sulphonate) और 1-hydroxybenzotriazole) के साथ विरंजीकरण लिये सक्षम पाए गये हैं। लुगदी विरंजीकरण विधि में

लिग्निनोलिटिक एंजाइम की तुलना में जायलोनोलिटिक एंजाइम अधिक प्रभावी हैं। इसका कारण यह है कि लिग्निन के अणु बगल में हेमिसेलूलोज से जुड़ी होती है और हेमिसेलूलोज का एंजाइमी विघटन लिग्निन के तुलना में आसानी से होता है। जैव के क्षेत्र में अधिकतर अध्ययन जायलोनोलिटिक एंजाइमों पर किया जा रहा है। इसलिए इस लेख में जायलोनेज एंजाइम आधारित जैव-विरंजीकरण विधि का वर्णन किया गया है।

जायलोनोलिटिक एंजाइम :-

जायलोनोलिटिक एंजाइम हाइड्रोलिटिक एंजाइमों का समूह है, जो जायलान का जलीय-अपघटन करती है। जायलान हेमिसेलूलोज का एक बड़ा भाग है जो पौधे की कोशिका भित्ति के कुल शुष्क भार का करीब 30-35% होता है। जायलन एक असमलैंगिक बहुलक (हेटेरोपालीसैकराइड) है। जायलान की मूल संरचना डी-जाइलोज की लम्बी श्रृंखला से बनी होती है। इसके अलावा एल-अरबिनोज सुगर, एसीटिल समूल (ग्लूकरोनिक एसिड) तथा इस्टरीफाइड समूहों (एसीटिल, फेरूलोय्ल रेजीडूएज) की शाखा संरचना के रूप में जायलान से जुड़े रहते हैं

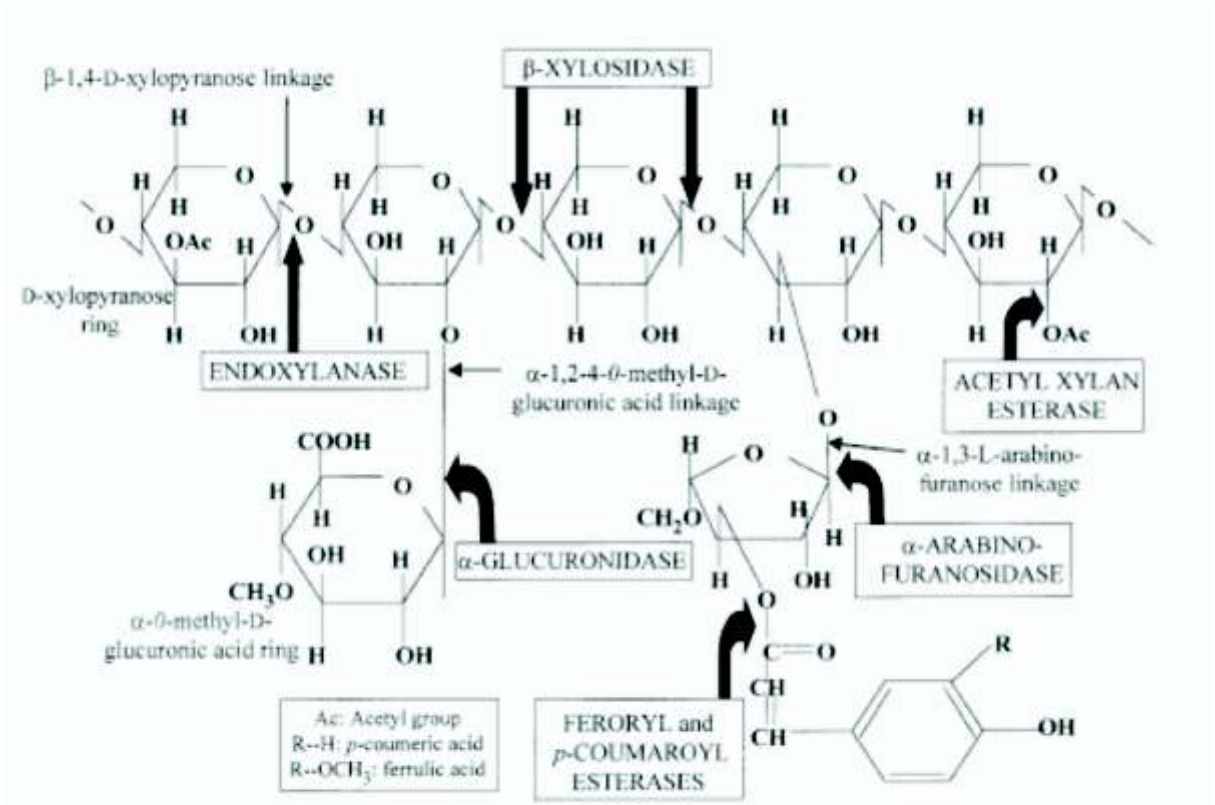

fp= l-&3 iknik e tk;yku dh ,d iLrkfor ljpuk tk ekbØkfc;y tk;ykutt dk jkl;fud c/k d fofHkUu LFkkuk ij mud dk; dk fn[kk jgk gA

जैसा कि चित्र सं. 3 में प्रदर्शित है।

जायलोनोलिटिक एंजाइम प्रणाली के गुण :-

जटिल संरचना के कारण जयलान्स के एंजाइमी अपघटन और रूपांतरण में कई एंजाइमों की आवश्यकता होती हैं। इनमें मुख्य रूप से इंडोजायलानेज, β-जाइलोसाइडेज, α-

ग्लूक्यूरोनिडेज, α-अरबीनोफुरानोसाइडेज, एसीटिलजायलान एस्टरेजेज और पी-कोउमरोय्ल एस्टरेजेज शामिल हैं। ये सभी एंजाइम जयलान को जाइलोज सुगर में परवर्तित करने के लिए समन्वित तरीके से काम करती है जो चित्र-3 में दिखाया गया है। इस तरह के बहुकार्यात्मक जायलोनोलिटिक एंजाइम प्रणाली की उपस्थिति सभी सूक्ष्मजीवों जैसे स्थलीय, कवक और खमीर सहित समुद्री शैवाल में भी पाया जाता है।

जायलानेज :-

विभिन्न जायलोनोलिटिक एंजाइमों में से इंडो-1, 4-बीटा-जायलानेज (इ.सी.3.2.1.8) जिसको आम तौर पर जायलोनेज के नाम से जाना जाता है। इस एंजाइम का उपयोग कागज उद्योग में लुगदी विरंजीकरण के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। यह एंजाइम जायलान के β-1, 4-ग्लैकोसिदिक बंधन जो जाइलोज सुगर की लम्बी श्रृंखला को जोड़ता है का जलीय-अपघटन करके एकल जाइलोज सुगर में परिवर्तित करती है। (चित्र सं. 4)

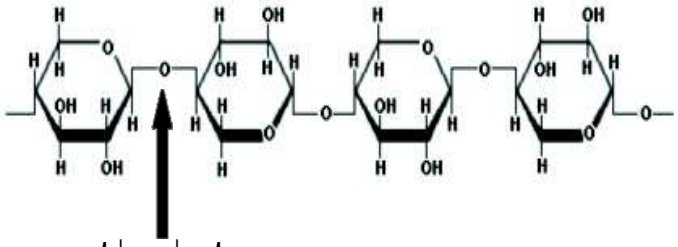

tk;ykut

fp= l-&4 tk;yku dh jklk;fud lajpuk

जयलानेज के गुणों के बारे में उपलब्ध जानकारी कवक और जीवाणुओं के स्रोत पर आधारित है। माइक्रोबियल जयलोनज का आणविक भार 8-145 केडीए के साथ प्रोटीन की एकल सबयूनिट होती हैं। अमीनो एसिड अनुक्रम अनुरूपता और हाईड्रोफिलिक क्लस्टर विश्लेषण, के आधार पर सही जायलानेज जो β-1, 4-जाइलोज के मुख्य संरचना को तोड़ता है इसको ग्लाइकोसाइड हाइड्रोलेज फेमिली 10 (एफ) और 11 (जी) में वर्गीकृत किया गया है। फेमिली 11 वाले जायलानेज का पीएच उच्च तथा आणविक भारत 19-25 केडीए के बीच होता है, जबकि फेमिली 10 का पीएच निम्न तथा आणविक भार 30 केडीए से अधिक होता है। सूक्ष्यजीवों में विशिष्ट जायलानेज की बहुलता पाई जाती है। तीन से पांच बहुलता वाले जायलानेज कवक और जीवाणु से पृथक किया गया है। यह बहुलता, आनुवांशिक फालतूपन अथवा उसी एक जीन उत्पाद का पोस्टट्रांसलेसनल संशोधनों का परिणाम हो सकता है। इन कई जयलानेज का कार्यात्मक और आनुवांशिक आधार पर अभी पूरे तरह से अध्यन नहीं किया गया है।

जायलानेज का उत्पादन :-

सूक्ष्मजीव जायलानेज एंजाइम उत्पादन के लिये मुख्य स्रोत है, जिसमें कवक, जीवाणु और यीस्ट (खमीर) शामिल हैं। इनमें कवक अन्य सभी सूक्ष्मजीवों की तुलना में अधिक मात्रा में जायलानेज एंजाइम का उत्पादन करते हैं। विगत वर्षों में **बैसीलस प्रजाति** के बहुत से जीवाणु भी अधिक मात्रा में जायलानेज उत्पादन के लिये शोध कार्य प्रकाशित किये गये हैं। जायलानेज एंजाइम के सरल उत्पादन के लिए उपयुक्त पदार्थ और इष्टमत पोषक माध्यमों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। पोषक तत्वों में मौजूद कार्बन एवं नाइट्रोजन स्रोत सूक्ष्मजीवों में बाह्य एंजाइमों के प्रेरण को नियंत्रित करता है। जायलानेज आमतौर पर उत्प्रेरित (इंडुसिबल) एंजाइम है जो शुद्ध जायलान या जायलान संपन्न अवशेषों से युक्त पोषक माध्यम में स्रावित होता है। विभिन्न प्रकार शर्कराये भी जायलानेज

उत्पादन के लिये सहायक है। बहुत से कृषि आधारित उत्पादित अवशेष जैसे गेहूँ की भूसी, चावल की भूसी, चावल पुआल, मक्का, डंठल, मकई कोब्स और गन्ने की खोई भी जायलानेज उत्पादन के लिए उपयुक्त पदार्थ पाये गये हैं। पोषक तत्वों में नाइट्रोजन और अमीनो एसिड की न्यूनता को पूर्ण करके जायलानेज उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। इसके अलावा पोषक तत्वों के संवर्धन स्रोत के वातावरण जैसे पीएच, तापमान और ऑक्सीजन की आपूर्ति का अनुकूलन करने से भी जायलानेज का उत्पादन बढ़ता है।

जायलानेज का वाणिज्यिक उत्पादन :-

वर्तमान में जलमग्न किण्वन तथा ठोस अवस्था किण्वन जैसे दो विधियों द्वारा एंजाइम का उत्पादन हो रहा है। लेकिन, जलमग्न किण्वन विधि का कुल जायलानेज उत्पादन में लगभग 90ः का योगदान है। जलमग्न किण्वन से जायलानेज उत्पादन के लिए, चयनित जीव को किण्वन पात्र में पोषक तत्वों और ऑक्सीजन युक्त संवर्धन स्रोत की उपस्थिति में चयनित पीएच, तापमान और आक्सीजन के मात्रा पर कई दिनों तक उगाया जाता है। इस समय के दौरान सूक्ष्मजीव संवर्धन स्रोत के पोषक तत्वों का उपयोग करके एंजाइम का स्राव करते हैं। तदोपरान्त एक निश्चित समय पर जैवीय पदार्थो को हटाकर एंजाइम को अलग करते हैं। इसके बाद एंजाइम की गुणवत्ता का निर्धारण करके पैक किया जाता है। बैक्टीरियोस्टेटिक संरक्षक के साथ जायलानेज एंजाइम महीनों तक स्थिर रहती है। विगत वर्षो में जायलानेज की उपयोगिता को देखते हुए बहुत कम समय में एंजाइम उत्पादकों ने पूरी तरह से नए उद्योग का विकास किया है। आजकल कई बहुराष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिक कम्पनियाँ विभिन्न ट्रेड-मार्क नाम से जायलानेज का विपणन कर रही हैं।

जायलानेज द्वारा क्राफ्ट लुगदी का जैव-विरंजीकरण :-

लुगदी विरंजीकरण में जायलानेज एंजाइम की उपयोगिता को सर्वप्रथम मशहूर फिनलैंड वैज्ञानिक विकारी एवं सहकर्मी वर्ष 1986 में प्रतिवेदित किया। लेकिन एंजाइम विरंजीकरण के वास्तविक कार्य विधि अभी भी एक शोध का विषय बना हुआ है। क्योकि जायलानेज लिग्निन का अपघन नहीं कर सकती है। उपरोक्त वैज्ञानिकों ने जायलानेन एंजाइम की विरंजीकरण क्षमता के साथ-साथ लुगदी के गुण का भी विस्तृत अध्ययन करने के बाद एंजाइम विरंजीकरण की दो कार्य विधियों को प्रस्तावित किये :

(अ) लुगदीकरण के दौरान क्षारीय घोल से प्रभावित होकर ज्यादातर लिग्निन, जायलान, एसिटाइल समूह और ग्लुकुरोनिक एसिड गलकर घोल में घुल जाते हैं। लेकिन बाद में क्षार एकाग्रता एसिटाइल समूह और ग्लुकुरोनिक एसिड मुक्त होने के कारण कम हो जाता है। जिसके फलस्वरूप छोटे श्रृंखला वाले जायलान पल्प फाइबर में मौजूद अवशेष लिग्निन के उपरी सतह पर क्रिस्टलाइन के रूप में फिर से जमा हो जाते हैं (चित्र सं.-5)। यह फिर से जमा क्रिस्टलाइन जायलान विरंजीकरण के दौरान लिग्निन के प्रभावी निष्कर्षण में बाधा डालते हैं, जिसके वजह से क्लोरीन व अन्य विरंजीकरण रासायनों का उपयोग कई गुना बढ़ जाता है। जायलानेज एंजाइम लिग्निन सतह पर फिर से जमा क्रिस्टलाइन जायलान के परत का जलीय-अपघटन करके हटा देती है। जिसके, फलस्वरूप लिग्निन की सतह पूर्ण रूप से खुल जाती है। खुली हुई लिग्निन की सतह के साथ क्लोरीन का ऑक्सीकरण ज्यादा प्रभावी ढंग से होता है। परिणाम स्वरूप क्लोरीन तथा अन्य विरंजीकण रासायनों का प्रयोग कम होता है।

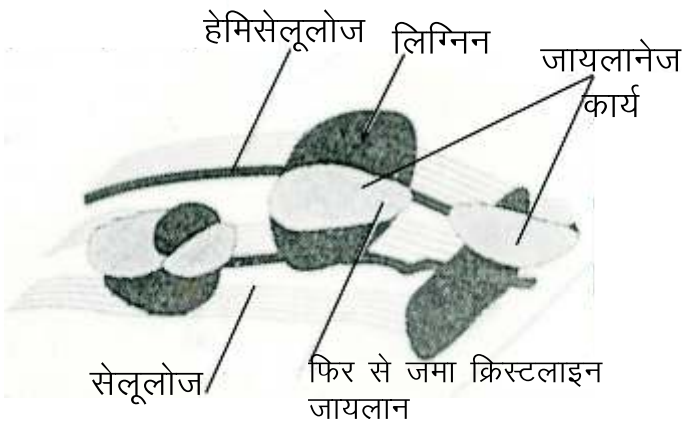

चित्र सं.-5 लकड़ी लुगदी में लिग्नन के ऊपर फिर से जमा क्रिस्टलाइन जायलान का चित्रण।

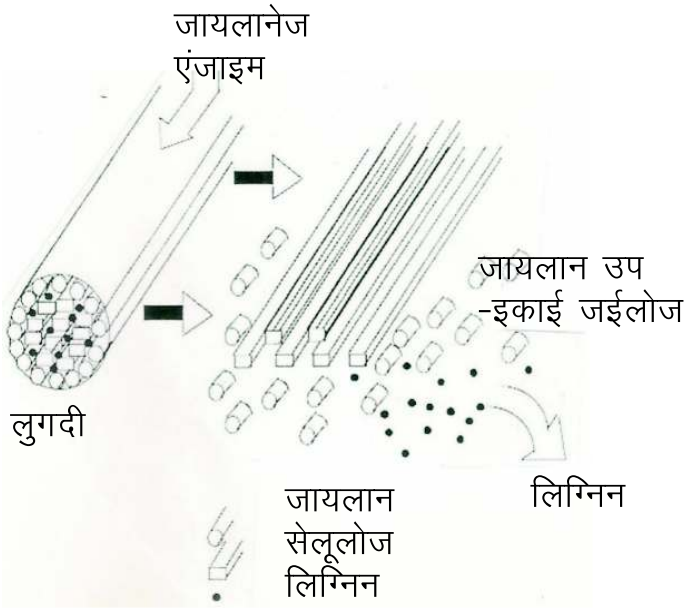

चित्र सं.-6 जायलानेज एंजाइम के कार्रवाई से लुगदी संरचना से मुक्त लिग्निन और इससे संबद्ध हेमिसेलुलोज के अणु।

(ब) उसी समय में जायलानेज एंजाइम लुगदी में उपस्थित जायलन को जलीय-अपघटन करके लुगदी के संरचनात्मक अंखडता को भंग करती है। जायलान, सेल्लूलोज और लिग्निन को आपस में जोड़ता है। जब जायलानेज एंजाइम जायलान को अपघटित करती है तो जइलोज के साथ-साथ लिग्निन भी पल्प फाइबर से अलग हो जाती है। (चित्र सं.-6)

जायलानेज जैव विरंजीकरण के प्रभाव को स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी (SEM) से विश्लेषण कर पुष्टि किया गया जो चित्र संख्या-7 में दर्शाया गया है। जिसमें एंजाइम अनुपचारित युकेलिप्टस क्राफ्ट लुगदी (a) की अपेक्षा एंजाइम उपचारित लुगदी (b) की सतह खुरदरी पाई गई, जो जायलानेज के लुगदी की सतह पर जमे जायलान को जलीय-अपघटन की पुष्टि करती है।

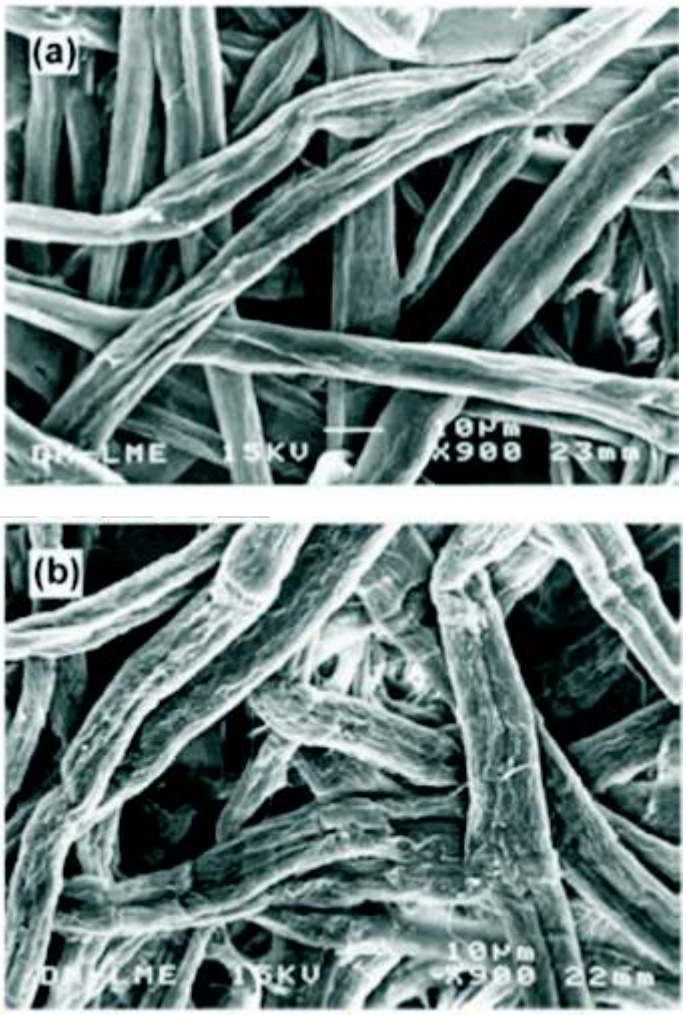

चित्र सं.-7 युकेलिप्टस क्राफ्ट लुगदी के स्कैनिंग इलेस्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी तस्वीरें : (a) प्रारंभिक, (b) जायलानेज विरंजीकरण के उपरांत।

विगत वर्षो में बहुत से शोध पत्र और समीक्षा लेख प्रकाशित हुये हैं, जिसमें जायलानेज एंजाइम से लुगदी विरंजीकरण को पर्यावरणीय हितैषी और सस्ती बतायी गई है। जायलानेज का उपयोग परम्परागत एवं आधुनिक रसायन विरंजन विधियों के साथ किया गया है। जायलानेज एंजाइम अन्य ब्लीच एजेंट जैसे ऑक्सीजन और हाइड्रोजन पेरोक्साइड के साथ विरंजन से पूर्ण क्लोरीन मुक्त लुगदी प्रौद्योगिकी के विकास की संम्भावना है। जायलानेज की विरंजीकरण क्षमता न केवल कठोर लकड़ी लुगदी के साथ बल्कि विभिन्न कृषि-उद्योग आधारित कच्चे माल जैसे गन्ने की खोई और गेहूँ के भूसे की लुगदी बनाने में सहायक पाई गई है। शोधर्थियों ने जायलानेज विरंजीकरण क्षमता को अन्य एंजाइमों जैसे पेक्टिनेज और लैकेज के साथ परीक्षण किया और पाया कि दो एंजाइमों का संयोग लुगदी विरंजीकरण के लिए ज्यादा प्रभावी है।

जैव-विरंजीकरण के लाभ :-

जायलानेज द्वारा लुगदी विरंजीकरण के निम्नलिखित लाभ है :

पर्यावरणीय लाभ : जायलानेज द्वारा लुगदी विरंजीकरण से क्लोरीन यौगिक की खपत कम होती है, जिससे कम मात्रा में क्लोरीनेटेड कार्बनिक यौगिक बनता है। औद्योगिक स्तर पर आकलन से पता चला है कि रासायनिक विरंजीकरण से पूर्व लुगदी को जायलानेज से उपचार करने पर क्लोरीनेटेड कार्बनिक यौगिको कि मात्रा में 12-25% तक कमी आती है। इसके अलावा विरंजीकृत वहिस्राव कम विषैला होने के कारण इसका जैविक विघटन कारखाने स्थित अपशिष्ट शोधन संयंत्र में आसानी से होता है। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध कोरियन वैज्ञानिक किम और पाइक (2000) ने जायलानेज द्वारा लुगदी उपचारित वहिस्राव में 88-90% सी.ओ.डी. कम पाया, जो पर्यावरण सुरक्षा के दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण है।

आर्थिक लाभ : जैव लुगदी विरंजीकरण विधि औद्योगिक स्तर पर उपयोगी एवं प्रभावी है, क्योंकि कागज कारखाने में प्रचलित मौजूदा प्रक्रिया में बिना ज्वादा बदलाव किये इसे प्रयोग में लाया जा सकता है। जायलानेज एंजाइम द्वारा विरंजीकरण से रसायनों की लागत में कमी आती है। इस प्रकार जैव-विरंजीकरण विधि न केवल पर्यावरण हितैषी है बल्कि अन्य तकनीकी की तुलना में काफी सस्ती है। मशहूर कनाडियन वैज्ञानिक टोलन एवं सहकर्मी (1996) में औद्योगिक स्तर पर जायलानेज द्वारा कठोर (हार्डवुड) एवं मुलायम लकड़ी (साफ्टवुड) के लुगदी का विरंजीकरण किया और उन्होंने करीब 20-25% तक क्लोरीन की बचत कठोर लकड़ी लुगदी के साथ तथा 10-15% की बचत मुलायम लकड़ी लुगदी के साथ रिपोर्ट किया। हाल ही में भारतीय वैज्ञानिको ने भी कठोर लकड़ी लुगदी को जायलानेज द्वारा विरंजीकरण से करीब 31% (सिन्धु एवं सहकर्मी, 2006) और 20% (बट्टन एवं सहकर्मी, 2007) तक क्लोरीन बचत को रिपोर्ट किये हैं।

लुगदी रेशा की गुणवत्ता में सुधार : जायलानेज द्वारा जैव विरंजीकरण से लुगदी के चिपचिपापन, पानी अवधारणा, रेशो के बंधन कि मरम्मत इत्यादि को बढ़ाकर लुगदी के गुणवत्ता में सुधार कर देती है। इसके अलावा रेयान और सेल्लुलोज एसीटेट ग्रेड की लुगदी बनाने में भी जायलानेज की उपयोगिता को लोगो ने देखा है।

औद्योगिक स्तर पर जायलानेज का उपयोग :-

कागज कारखाने में जायलानेज का उपयोग की प्रक्रिया चित्र संख्या 8 में दिखाया गया है। जिसमें

लुगदी का पीएच नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए एंजाइम आमतौर पर अम्ल और पानी के साथ कम घनत्व वाले भूरी रंग की लुगदी के साथ मिलाते हैं। इसके बाद लुगदी को रिएक्टर टैंक को पम्प करते हैं जहां एंजाइम प्रतिक्रिया करती है। एंजाइम उपचारित पल्प लुगदी की धुलाई करके विरंजर टैंक को पम्प करते हैं, जहां रासायनिक ऑक्सीकरण के संपर्क से एंजाइम नष्ट हो जाती है। जायलानेज का प्रयोग बहुत आसान एवं बहुमुखी है। जायलानेज का प्रयोग सभी स्तर के कारखाने में कठोर और मुलायम लकड़ी के लुगदी विरंजीकरण के लिए किया जा सकता है। वर्तमान में उत्तरी अमेरिका की 20, कनाडा की 7 और अमेरिका 13 कागज मिले जायलानेज लुगदी विरंजीकरण से कागज का उत्पादन कर रही है। विश्व स्तर पर जायलानेज विरंजीकरण विधि से लगभग 3.9 लाख टन से अधिक क्राफ्ट लुगदी 2001 में और 6 लाख टन 2002 में उत्पादन किया गया था। कनाडा और अमेरिका प्रतिदिन क्रमश : 4200 और 6,900 टन क्राफ्ट लुगदी का उत्पादन जायलानेज विरंजीकरण के द्वारा कर रहे हैं। परन्तु जैव विरंजीकरण में जायलानेज का प्रयोग विकसित देशों तक ही सीमित है।

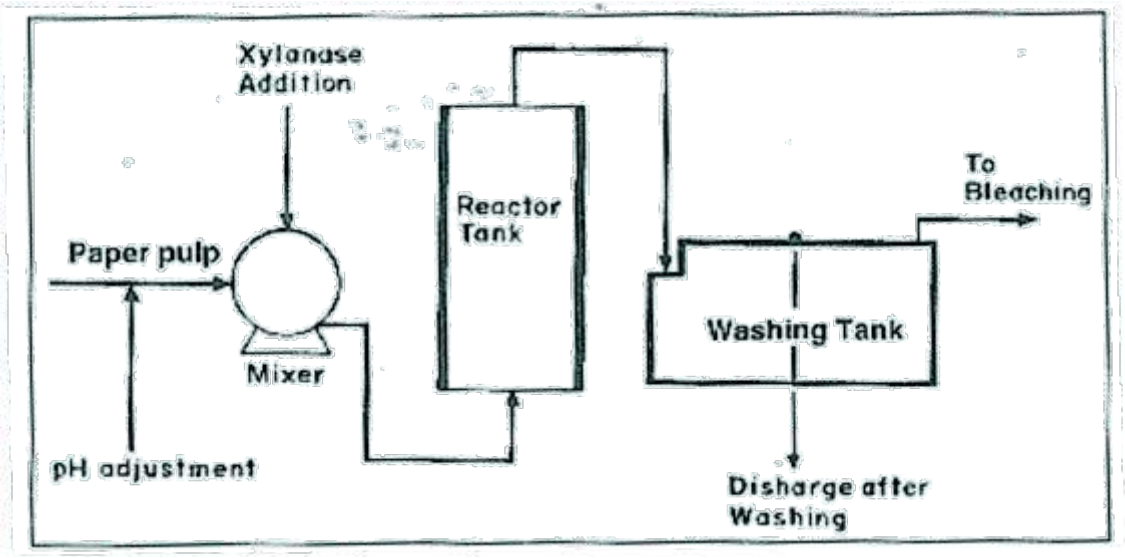

चित्र सं.-8 कागज उद्योग में जायलानेज इस्तेमाल का प्रक्रम

भारतीय पेपर मिल में जायलानेज एंजाइन का प्रयोग:

भारत में अधिकांश कागज कारखाने मध्यम और लघु स्तर के हैं, जो क्लोरीन रासायनिक प्रक्रिया द्वारा लुगदी का विरंजीकरण करते है। जिसके फलस्वरूप भारतीय कागज कारखाने से उत्सर्जित उत्प्रवाह का पर्यावरण में सुरक्षात्मक निस्तारण एक बहुत बड़ी चुनौती बनी हुई है। भारत में सर्वप्रथम जायलानेज द्वारा लुगदी विरंजीकरण प्रक्रिया का औद्योगिक स्तर पर परीक्षण बल्लारपुर पल्प और पेपर मिल इंडस्ट्रीज लिमिटेड ने वर्ष 1992 में किया। यह अम्लीय जायलानेज एंजाइम मैसर्स बायोकॉन इंडिया प्राइवेट द्वारा निर्मित था। कालान्तर में जायलानेज विरंजीकरण क्षमता का परीक्षण औद्योगिक पैमाने पर विभिन्न मिलों में विभिन्न प्रकार की लुगदी के साथ किया गया। उत्प्रवाह में क्लोरीनयुक्त कार्बनिक यौगिकों को कम करने के दबाव में अधिक से अधिक कागज और लुगदी

मिले जायलानेज आधारित लुगदी विरंजीकरण प्रक्रिया में रूचि ले रही है। हाल ही में सेंचुरी पल्प और पेपर मिल, लालकुआ नैनीताल और स्टार पेपर मिल सहारनपुर भी औद्योगिक स्तर पर जायलानेज एंजाइम का परीक्षण किया। सेंचुरी पल्प और पेपर मिल एक बड़े स्तर की मिल है, जो जयलानेज एंजाइम पूर्व विरंजीकरण प्रक्रिया के साथ सफल परीक्षण से 30% क्लोरीन की खपत में कमी के साथ ही ए.ओ.एक्स.स्तर में भी काफी कमी प्राप्त किया।

विरंजीकरण क्षमता को प्रभावित करने वाले कारकों :

जायलानेज विरंजीकरण क्षमता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में पीएच, तापमान, एंजाइम की शुद्धता एवं उसके उपयोग की मात्रा तथा लुगदी की मात्रा और प्रतिक्रिया की समय शामिल हैं। समान्यतः विरंजन के लिए एंजाइम की मात्रा 2-5 IU/ग्राम शुष्क लुगदी और घनापन 5-10% सीमा के भीतर वांछनीय है। जायलानेज विरंजीकरण से अधिकांश लाभकारी प्रभाव 1-2 घंटे के बाद ही प्राप्त किया जा सकता है।

तालिका सं.-2 सेलुलेज मुक्त, क्षारीय और ताप स्थिर जायलानेज उत्पादक सूक्ष्मजीव

सूक्ष्मजीव	अलगाव स्रोत	पीएच स्थिरता	ताप स्थिरता
कवक मेलैनोकार्प्स एलबोमैकेस	मिट्टी	५.५ -९.५	५०-७०
थर्मोएस्कस औरैंटीएकस	सड़ा हुआ जूट	४-५	७०-७५
थर्मोमायिकेस लिनूजिनोसस एस.एस.बी.पी.	खाद मिट्टी	५-१०	५०-८०
जीवाणु बैसिलस स्प. एन.सी.आई.एम.५९	क्षार मिट्टी	७-१०	६०-७०
बैसिलस स्प.एस.ए.एम. ३	सोडा झील के मिट्टी	७-९	६०-७०
कलाट्रीडियम एब्सोनम सी.एफ.आर-७०२	विघटित पौधे	६-९	७८-८५
बैसिलस स्प. जे.बी.-९९	गन्ना गुड़ के मिट्टी	१०	६०
बैसिलस स्प. के.-८	पेपर मिल अपशिष्ट	६-७	६०
बैसिलस हेलोडुरान्स एस.७	सोडा झील मिट्टी	६	६५
अर्थोबैक्टर स्प. एम.टी.सी.सी.५२१४	समुद्री मुहाना तलछट	९	८०
बैसिलस पुमिलस ए.एस.एच.	स्वच्छता लैंडफिल	६.५- ९	५०-६०
जियोबैसिलस थर्मोलीओवोरैंस	लुगदी मिल मिट्टी	८.५	८०
बैसिलस स्टेअरोथर्मोफिलस एस.डी.क्स.	खाद मिट्टी	६-१२.५	३७-८५
थर्मोटोगा स्प. स्टैन एफ.जे.एस.एस.-१- बी१*	अंतर्ज्वारिय गर्म पानी के झरने	६.५	९५
थर्मोटोगा मैरीटिमा (एम.एस.बी.८)*	जियोथर्मल समुद्री तलछट	७-८.५	१००

*= सेलूलेज एंजाइम के बारे में सूचना उपलब्ध नहीं है।

जायलानेज उच्च पीएच और तापक्रम पर स्थिर होना सबसे जरूरी है। क्योंकि, कागज बनाने के लिए लुगदी उत्पादन में प्रयुक्त लकड़ी को उच्च पीएच और तापमान पर गलाया जाता है। इसके अलावा एंजाइम पूर्णरूप से शुद्ध यानी सेलुलेज मुक्त होनी चाहिए क्योंकि थोड़ी से भी सेलुलेज एंजाइम की उपस्थिति लुगदी की गुणवत्ता को क्षति पहुचाती है। अधिकतर जायलानेज बैक्टीरियल तथा फंगल मूल से पृथक किया गया है। शुरू में अधिक एंजाइम उत्पदकता के कारण बाजार में उपलब्ध अधिकांश वाणिज्यिक एंजाइम कवक स्रोत पर आधारित है, जो 4-6 की अम्लीय पीएच सीमा और 30 से 60 डिग्री सेल्सियस के तापमान के बीच प्रभावी हैं। कवक से उत्पादित जायलानेज को प्रयोग में लाने से पूर्व लुगदी के पीएच और तापमान को एंजाइम के इष्टतम काम करने की स्थिति तक संतुलित करना पड़ता है, जो जैव विरंजीकरण पद्धति को महंगी और लंबा बनाती है। इसके अलावा, अधिकतर कवक जायलानेज के साथ सेलूलेज एंजाइम का भी उत्पादन करते हैं। कुछ कवक की प्रजातियाँ जो उच्च पीएच और तापक्रम पर स्थिर जायलानेज उत्पाद के लिए रिपोर्ट की गयी है (तालिका सं.-2)। परन्तु इनके द्वारा प्राप्त जायलानेज लुगदी विरंजीकरण में अम्लीय जायलानेज के तुलना में कम प्रभावी होती है। इसलिए वैज्ञानिको ने जीवाणुओं के द्वारा उत्पादित जायलानेज पर शोध केन्द्रित किया है। पिछले दशकों के दौरान बहुत से जीवाणु विभिन्न वातावरणीय स्रोतों से पृथक किया गया है, जो वांछित जायलानेज यानी सेलूलेज मुक्त, उच्च पीएच और तापमान स्थिरता वाली जायलानेज उत्पादन करने में सक्षम पाये गये हैं (तालिका सं.-2)। अल्कलोफिलिक बैसिलस जीवाणु जो सोडा झील और सेनेटरी लैंडफिल मिट्टी से निकाला गया है उससे उत्पादित जायलानेज एक वृहद् पीएच सीमा जो 8-12.5 के बीच स्थिर पाये गये हैं। उच्च-ताप स्थिरता के आधार पर सूक्ष्मजीवों को मिसोफिलिक (50 डिग्री सेल्सियस तक जीवित) और थर्मोफिलिक (50-80 डिग्री सेल्सियस तक जीविक) श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है। थर्मोफिलिक जीवाणु जो गर्म पानी के क्षरने, आइसलैंड का हॉट स्प्रिंग्स, कचरे का ढेर, कम्पोस्ट और सामान्य मिट्टी से पृथक किये गये हैं, इसके द्वारा उत्पादित जायलानेज मिसोफिलिक की तुलना में अधिक तापक्रम पर स्थिर होता है। अधिकांश थर्मोफिलिक बैक्टीरिया बैसिलस समूह की प्रजाति है तथा इनसे प्राप्त जायलानेज 50-85 डिग्री सेल्सियस तापमान सीमा के बीच स्थिर है (तालिका सं.-2)। अति उच्च-तापक्रम (हाइपरथर्मोफिलिक) पर उगने वाली अनाक्सीकृत जीवाणु जैसे थर्मो टोगा स्प. स्ट्रेंन एफ.जे.एस.एस. -3-बी.1 और थर्मो टोगा मैरीटीमा एम.एस.बी.8 जिनको अतंर्ज्वारिय गर्म पानी के झरने और ज़िओथर्मल समुद्री तलछट से पृथक किया गया है। इन जीवाणुओं से प्राप्त जायलानेज 100 डिग्री सेल्सियस पर थर्मास्टाइबल होना पाया गया। परन्तु ये जीवाणु बहुत कम मात्र में जायलानेज उत्पादन करती है।

जैव विरंजीकरण की चुनौतिया और भावी संभावनाः-

जायलानेज का उत्पादन और औद्योगिक उपयोग की दृष्टि से हर पहलू से विस्तृत अध्ययन के बावजूद भी इस जैविक विधि का कागज उद्योग में व्यापक प्रयोग सीमित है। जिसका मुख्य कारण वांछित जायलानेज की कमी एवं एंजाइम की अधिक उत्पादन लागत है। सस्ता एंजाइम उत्पादन के लिए ऐसे

सूक्ष्मजीव पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए जो सस्ते कृषि आधारित अवशेष पर वांछित जायलानेज का उत्पादन कर सके। जिसके लिए मेसोफिलिक, थर्मोफिलिक और प्रतिकूल वातावरण के सूक्ष्मजीवों की जाँच के लिए नवीन दृष्टिकोण के साथ पूरा पता लगाने तथा विविधता वाले माइक्रोबियल प्रजातियों का जर्मप्लाज्म बैंकों में संरक्षण किया जाना चाहिए। इस बुनियादी अध्ययन के साथ ही वांछित जायलानेज उत्पादन के लिये पुनः संयोजक डीएनए प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना जरूरी है। क्योंकि वांछित जायलानेज एक व्यक्तिगत सूक्ष्मजीव से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। जीन क्लोनिंग की सहायता से ताप स्थिर और क्षारीय जायलानेज एन्कोडिंग करने वाले जीन को उपयुक्त होस्ट जीव में क्लोन किया जा सकता है। परन्तु जायलानेज के आणविक पहले का गहरा ज्ञान और इसके लिए उपयुक्त अभिव्यक्ति वेक्टर का निर्माण जीन क्लोनिंग में बड़ी चुनौती है। इसके लिये सूक्ष्मजीव वैज्ञानिक, जीव-रसायनज्ञानी, जैव प्रौद्योगिकीविंद् तथा प्रक्रिया इंजीनियरों को समन्वित तरीके से कागज उद्योग के साथ मिलकर तकनीकी के विकास के लिये काम करने की जरूरत है। लुगदी विरंजीकरण के लिय शुद्ध जायलानेज का इस्तेमाल एंजाइम प्रक्रिया महंगा को महंगा बनाता है। ऐसी दशा में अपरिष्कृत सेलुलेज मुक्त जायलानेज का प्रयोग अधिक सस्ता होगा। इसके अलावा दो एंजाइम संयोजन के साथ लुगदी जैव-विरंजीकरण अधिक प्रभावी होगा जिसके लिये जायलानेज और लैकेज एंजाइम का संयोजन क्षमता का परीक्षण किया जा सकता है।

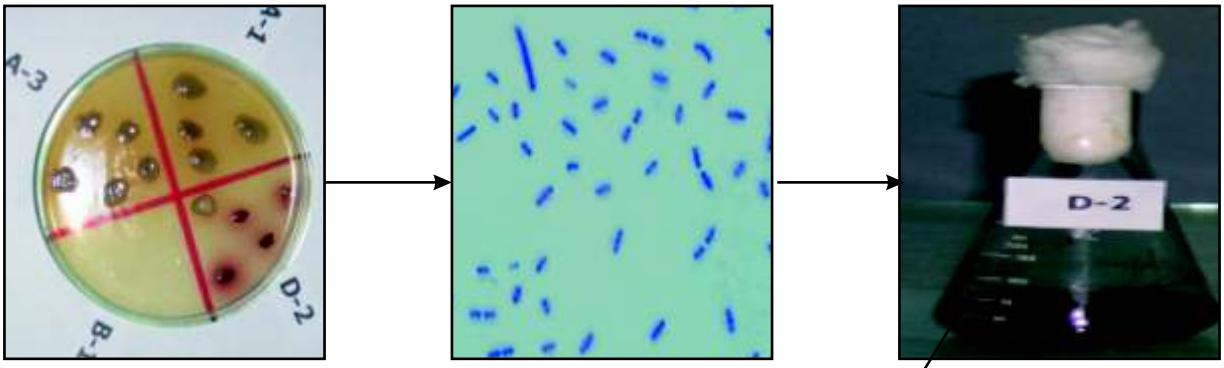

लैकेज सकारात्मक जीवाणु | जीवाणु का आकार | लैकेज एंजाइम का उत्पादन

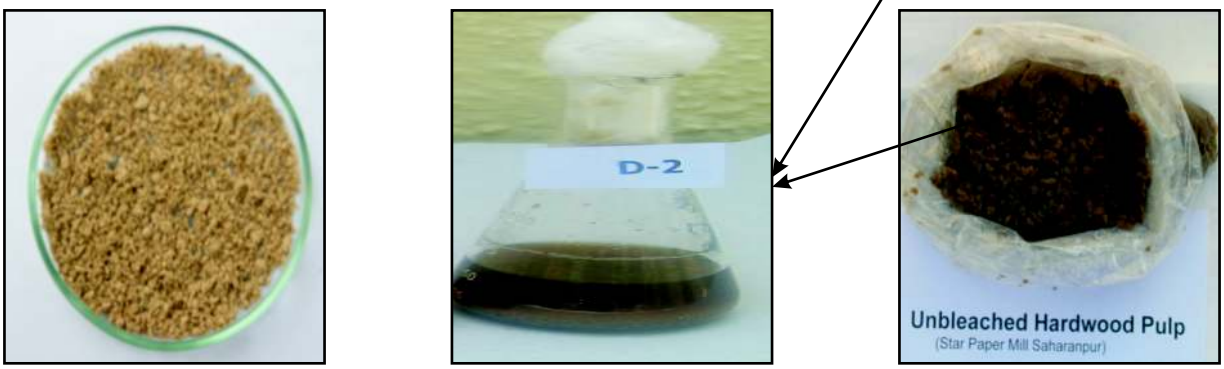

लुगदी जैव-विरंजीकरण के बाद कप्पा संख्या 8.4 | लुगदी का अपरिष्कृत लैकेज एंजाइम के साथ जैव-विरंजीकरण | लुगदी जैव-विरंजीकरण से पूर्व कप्पा संख्या 13.7

चित्र सं.-9 प्रयोगशाला में जीवाणु के लैकेज एंजाइम द्वारा लिग्निनयुक्त लुगदी का जैव-विरंजीकरण

जैव-विरंजीकरण प्रौद्योगिकी के व्यापक प्रयोग के लिये विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान जारी है। बाजार में क्षारीय और ताप स्थिर जायलानेज मैसर्स नोवोजाइम दक्षिण एशिया, प्राइवेट लिमिटेड से उपलब्ध हैं। भारत में भी इस क्षेत्र में काफी अनुसंधान चल रहा है। मेसर्स खंडेलवाल लैबोरेटारीज लिमिटेड ने वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान (डीएसआईआर), उद्योग, भारत सरकार के मंत्रालय के विभागों से आंशिक वित्तीय सहायता के साथ जायलानेज उत्पादन को स्केलिंग कर रहा हैं। हाल ही में राष्ट्रीय रसायन प्रयोगशाला, पुणे, आईआईटी दिल्ली, बिरला वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान संस्थान जयपुर और कुछ अन्य शोध और शैक्षणिक संस्थानों द्वारा क्षारीय ताप स्थिर जायलानेज एंजाइमों के उत्पादन के लिए सूक्ष्मजीवों के विकास पर शोध जारी है। एक राष्ट्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला-केन्द्रीय लुगदी और कागज अनुसंधान संस्थान और देश में एक प्रमुख शैक्षणिक संस्था-कागज प्रौद्योगिकी संस्थान भी जायलानेज एंजाइम लुगदी के पूर्व विरंजन पर अनुसंधान एवं विकास पर काम कर रहे हैं। भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने जैव विरंजीकरण क्षमता वाले कुछ जीवाणुओं की खोज की है। प्रयोगशाला में लैकेज एंजाइम उत्पादन करने वाली जीवाणु (डी-2) को कागज मिल कीचड़ से पृथक किया गया। तदोपरान्त इस जीवाणु द्वारा एंजाइम का उत्पादन 100 मिली पोषक मीडिया में गुवायकाल प्रेरित पदार्थ के उपस्थिति में 34 डिग्री सेल्सियस पर किया गया था। अपरिष्कृत लैकेज एंजाइम को कल्चर मीडिया से 48 घंटे के बाद अपकेन्द्रित्र विधि से पृथक किया गया। जैव-विरंजीकरण की इस विधि से लिए क्राफ्ट लुगदी मैसर्स स्टार पेपर मिल, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश से एकत्र किया गया। लुगदी (20 ग्राम) को अपरिष्कृत लैकेज एंजाइम (5 IU/ग्राम) के साथ 30 डिग्री सेल्सियस पर 48 घंटे तक विरंजीकरण किया गया। लुगदी में मौजूद अवशेष लिग्निन को कप्पा संख्या के रूप में नापा जाता है। एंजाइम द्वारा विरंजीकृत लुगदी में का कप्पा संख्या कंट्रोल के तुलना में 38% कम पाया गया। लुगदी के कप्पा संख्या में यह कमी लैकेज एंजाइम द्वारा लिग्निन के विघटन से पाई गयी। जिसके फलस्वरूप लुगदी गहरे भूरे रंग से हल्के भूरे रंग में बदल गयी (चित्र सं.-9)। लुगदी जैव-विरंजीकरण को और अधिक प्रभावी बनाने के लिये जायलानेज और लैकेज के संयोजन पर आगे अनुसंधान कार्य अग्रसर है।

कागज कारखानों से उत्सर्जित विषैले अपशिष्टों के सुरक्षात्मक निस्तारण हेतु शोध एवं विकास की आवश्यकता एवं चुनौतियाँ

डा. राम चन्द्रा, रचना सिंह एवं संगीता यादव

भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान

महात्मा गांधी मार्ग, पोस्ट बॉक्स संख्या ८०, लखनऊ-२२६००१, उ.प्र.

1. प्रस्तावनाः

कागज कारखानों से उत्सर्जित अपशिष्ट हानिकारक होता है। परन्तु कागज कारखानों से निकलने वाला अपशिष्ट कागज की गुणवत्ता तथा कागज बनाने की प्रक्रिया पर निर्भर करता है। कागज की गुणवत्ता के आधार पर उद्योगों को मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

(अ) हार्ड बोर्ड उद्योग, (ब) पल्प पेपर उद्योग, (स) क्राफ्ट पेपर उद्योग

हार्ड बोर्ड तथा क्राफ्ट पेपर उद्योग में पुराने कागज, कपड़े, खराब किस्म की लुगदी, बगास तथा कृषि आधारित कच्चा पदार्थ का प्रयोग करके दफ्ती एवं गत्ते बनाये जाते हैं। ये मुख्य रूप से लघु उद्योग में आते हैं। लेकिन पल्प पेपर उद्योग अच्छी किस्म का कागज बनाने के लिए विभिन्न पेड़ों की लकड़ियाँ जैसे यूकेलिप्टस, पॉपलर इत्यादि का प्रयोग करते है।

चित्र-1: कागज उद्योग अपशिष्ट कारखाने में शोधन के उपरान्त पर्यावरण में प्रवाहित होता हुआ (अ) लुगदी विरंजीकरण से पूर्व एवं उपरान्त (ब) अपशिष्ट, शोधन के उपरान्त पर्यावरण में कारखानों से निकलता हुआ

इन सभी औद्योगिक कारखानों से निकला अपशिष्ट अलग-अलग प्रकार का होता है। क्राफ्ट तथा हार्डबोर्ड उद्योग से गाढ़े काले रंग का अपशिष्ट निकलता है, जो लिगनिन तथा लिगनोसल्फोनिक रसायनों से युक्त होता है। इन उद्योगों से निकलने वाला उत्प्रवाह प्रयोग में आने वाली लुगदीकरण की विधि जैसे रासायनिक, अभियांत्रिक, तापीय रासायनिक विधि पर निर्भर करता है। इसमें सर्वाधिक प्रयोग में आने वाली विधि के अन्तर्गत सल्फेट तथा सल्फाइट विधियाँ हैं। इसमें मुख्यतः कास्टिक सोडा, सोडियम सल्फेट तथा सोडियम कार्बोनेट का प्रयोग किया जाता है। इस विधि के उपरान्त निकलने वाला उत्प्रवाह लिग्नोसल्फोनिक रसायनों के साथ-साथ पेड़ों से निकलने वाले रेजिन, फैटी एसिड से युक्त होता है।

लिखने वाला अच्छी किस्म का कागज बनाने के लिये लुग्दीकरण प्रक्रिया के बाद विरंजीकरण किया जाता है। इसमें प्रयुक्त तन्तु बहुत ही अच्छी प्रकार के तथा समान लम्बाई के होते हैं। इस प्रकार की इकाइयाँ अधिक जल का प्रयोग करती हैं, तथा एक निश्चित लम्बाई के फाइबर्स का प्रयोग करने के कारण कुछ खराब तन्तु (फाइबर्स) अपशिष्ट के साथ बाहर निकलते हैं। इस प्रकार के उद्योगों से निकलने वाला उत्प्रवाह लिग्नोसल्फोनिक रसायनों के साथ-साथ बहुत प्रकार

के क्लोरोलिगनिंन, क्लोरोफिनाल, क्लोरोगुयीकॉल, क्लोरोसल्फोनिक अम्ल तथा पौधों से निकलने वाले रेजिन ऐसिड, टैनिन, फैटी ऐसिड जो विरंजीकरण की प्रक्रिया में क्लोरीन से अभिक्रिया करके जटिल यौगिक बना लेते हैं। प्रायः प्रतिटन कागज उत्पादन में 273 से 455 घनमीटर (60,000 से 1,00,000 गैलन) पानी की आवश्यकता होती है जिसके फलस्वरूप 47,000 से 80,000 गैलन प्रदूषित अपशिष्ट जलीय उत्प्रवाह के रूप में उत्पन्न होता है।

वर्तमान समय में अपने देश में लगभग 600 कागज कारखाने हैं जिसमं से केवल 20 वृहद स्तर के कागज उद्योग है। जिसमें उच्च गुणवत्ता के कागज का निर्माण होता है, तथा अन्य 580 कारखाने जो कि कृषि आधारित तथा खराब कागज का प्रयोग करते हैं। इन 580 मिलों में से 515 मिले हार्डबोर्ड तथा मोटे किस्म के गत्ते तथा अन्य पैकेजिंग कागज का निर्माण करते हैं। ये छोटे तथा मध्यम श्रेणी के उद्योगों में आते हैं। शेष अन्यप्रकार के मिलें अखबार में प्रयोग होने वाले कागज को बनाती हैं।

कागज उद्योग से निकलने वाला उत्प्रवाह विभिन्न रासायनों के मिश्रण के कारण विषाक्त तथा अधिक जैवीय तथा रासायनिक आक्सीजन मांग (बी. ओ.डी. और सी.ओ.डी.) से युक्त होता है। उत्प्रवाह का जैव, रासायनिक मांग प्रयुक्त होने वाली लुगदीकरण तथा विरंजीकरण की विधि पर निर्भर करता है। विरंजीकरण प्रक्रिया से निकलने वाला उत्प्रवाह के जैव तथा रासायनिक आक्सीजन की मांग सबसे अधिक 10-40 कि.ग्रा./टन तथा 20-200 कि.ग्रा./टन होती है। रासायनिक लुगदीकरण से निकलने वाला उत्प्रवाह, की रासायनिक आक्सीजन मांग अभियांत्रिक द्वारा लुगदीकरण की प्रक्रिया से ज्यादा होता है। इस प्रकार ये उत्प्रवाह प्रवाहित जलराशियों की जैव तथा रासायनिक आक्सीजन मांग को बढ़ा देता है तथा धुलित आक्सीजन की मात्रा को कम कर देता है। इस प्रकार उत्प्रवाह जलराशियों में उपस्थित जीव, जन्तुओं को प्रभावित करने के साथ-साथ उसका उपयोग करने वाले तथा सम्पर्क में आने वाले जीव जन्तुओं के साथ-साथ मनुष्यों पर भी विपरीत प्रभाव डालता हैं इससे उत्प्रवाह में उपस्थित विभिन्न रासायनिक यौगिक मृदा में अवशोषित होकर सूक्ष्मजीवों तथा फसलों को भी प्रभावित करते हैं। विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि पल्प पेपर में उपस्थित रासायनिक यौगिक मछलियों पर विपरीत प्रभाव डालते हैं तथा इन्हें प्रयोग करने वाले मनुष्यों तथा जन्तुओं में कैंसर उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं।

इनके दुष्प्रभावों को देखते हुए इनका शोधन अति आवश्यक है। उत्प्रवाह में उपस्थित जटिल यौगिकों का सम्पूर्ण ज्ञान न होने से इसकी उचित उपचार की विधि का विकास एक कठिन कार्य है। इसीलिए कागज उद्योग से निकलने वाले उत्प्रवाह के सुरक्षात्मक निस्तारण पर शोध की आवश्यकता है।

प्रस्तुत लेख में कागज उद्योग से निकलने वाले उत्प्रवाह का दुष्प्रभाव, शोधन की विधियां, तथा इस दिशा में आने वाली चुनौतियां तथा जलीय व ठोस अपशिष्ट के उपचार के उपरान्त उपयोग की सम्भावनाओं पर विचार किया गया है।

2. कागज उद्योग से उत्सर्जित हानिकारक प्रदूषकः

कागज उद्योग में मुख्य पदार्थ विभिन्न प्रकार के पेड़ पौधों का लिग्नोसेलुलोजिक भाग होता है। कागज बनने की प्रक्रिया को मुख्य रूप से पाँच अवस्थाओं में

विभाजित किया जा सकता है जो निम्नवत् है : (1) पेड़ों के अनुपयोगी भाग को साफ करना जैसे छाल, पतली टहनियों, पत्तियों को साफ करना तथा छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँटना, (2) लुगदीकरण करना, (3) लुगदी की धुलाई करना, (4) लुग्दी कर विरंजीकरण, (5) कागज का निर्माण।

प्रारम्भिक अवस्था में लकड़ियों को छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित करके रासायनिक एवं अभियांत्रिक विधि द्वारा उत्तम श्रेणी की लुगदी में परिवर्तित किया जाता है। तदुपरान्त लुग्दी को विभिन्न रासायनिक विधि द्वारा विरंजित करके सफेद रेशे में परिवर्तित करके कागज बनाते हैं। प्रायः लुगदीकरण प्रक्रिया कास्टिक सोडा द्वारा की जाती है जो कि क्षारीय प्रकृति का होने के कारण पादप कोशिका में निहित ठोस सेलुलोजिक रेशों के बीच विभिन्न जमा पदार्थों को घालने का कार्य करते हैं। जो धुलाई की प्रक्रिया में घुलकर बाहर आ जाता है तथा सेलुलोजिक भाग घुलकर अलग हो जाता है। घुलित पदार्थों में मुख्यतः लिगनिन, फिनाल्स, रेजिन एसिड, असंतृप्त वसा, सेलुलोज होते हैं। लुगदी की विरंजीकरण प्रक्रिया क्लोरीन युक्त विभिन्न रसायनों के द्वारा की जाती है जिसमें उपस्थित विभिन्न पदार्थ क्लोरीन के साथ रासायनिक अभिक्रिया करके हानिकारक सहउत्पाद बनाते हैं जिसमें मुख्यतः क्लोरोलिगनिन, क्लोरोफिनाल्स, डाइआक्सिन, डाई बेन्जोफुरॉन, मिथाइल मरकेप्टेन, क्लोरीनेटेड रेंजिन तथा फैटी एसिड उत्सर्जित होते हैं। लुगदीकरण तथा विरंजीकरण प्रक्रिया में धुलित सभी पदार्थ कागज कारखानों से उत्सर्जित अपशिष्ट उत्प्रवाह के रूप में बाहर आते है। जिनको प्रचलित उपलब्ध विधियों द्वारा शोधित किया जाता है। कागज उद्योग से उत्सर्जित उत्प्रवाह जो शोधन के उपरान्त निकलता है, उसका भौतिक रासायनिक गुण निम्न तालिका में वर्णित है। जो पर्यावरण में उत्सर्जित मापदण्ड से बहुत अधिक होता है।

तालिका-1: कागज उद्योग से उत्सर्जित उत्प्रवाह के भौतिक-रासायनिक गुण एवं सुरक्षात्मक निस्तारण के मापदण्ड

क्रमांक	गुणधर्म	पल्प पेपर मिल उत्प्रवाह	क्राफ्ट पेपर मिल उत्प्रवाह	अपशिष्ट उत्प्रवाह के जलीय तंत्र से *सुरक्षात्मक निस्तारण के मापदण्ड (ई.पी.ए.2003)
1.	रंग	गाढ़ा भूरा	गाढ़ा भूरा काला	-
2.	गंध	सल्फरयुक्त दुर्गन्ध	सल्फरयुक्त दुर्गन्ध	बिना गन्ध वाला
3.	पी.एच.	6.70	8.50	5 - 9
4.	तापमान	20-30ºC	20-30ºC	40ºC
5.	जैविक आक्सीजन मांग	351.00	6033.00	30
6.	रासायनिक आक्सीजन मांग	1057.00	15766.00	250.00
7.	सम्पूर्ण ठोस	1423.00	1570.00	2100.00
8.	धुलित ठोस	1115.00	1274.00	200.00

9.	निलम्बित ठोस	273.00	96.00	100.00
10.	सम्पूर्ण नाइट्रोजन	39.15	152.93	50.00
11.	सम्पूर्ण कार्बन	56.20	257.00	-
12.	सल्फेट	234.00	405.49	1000
13.	सोडियम	285.00	28.98	120.00
14.	फास्फेट	683.69	500.00	5.00
15.	नाइट्रेट	32.38	35.30	
16.	क्लोराइड	362.00	351.00	1000.00
17.	कैडमियम	0.135	ND	0.1
18.	लोहा	0.182	2.004	2.00
19.	जिंक	0.062	0.066	2.00
20.	कॉपर	0.216	0.074	0.50
21.	निकिल	0.122	0.016	0.1
22.	मैगनीज	0.04	0.166	0.2
23.	फीनालिक्स	72.96	44.64	1.00
24.	लिगनिन	149.80	413.00	-

नोटः सभी मापदण्ड रंग, गंध, पी.एच. को छोड़कर एमजी/लीटर में है।

*** सुरक्षात्मक निस्तारण के मापदण्ड (ई.पी.ए.2003) के अनुसार।**

इनके साथ-साथ विभिन्न कार्बनिक रसायन, पर्यावरण तथा स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होते हैं, वो भी उत्सर्जित होते हैं जिनका विवरण निम्न तालिका में देखा जा सकता है।

क्रमांक	कार्बनिक रसायन के विभिन्न समूह	विभिन्न कार्बनिक रसायनों का विवरण	गुण एवं ज्ञात दुष्प्रभाव
1.	लिगनिन तथा टैनिन	लिगनिन बहुलक तथा गुदीकॉल, कैटीकॉल, सिरिनजॉल, वैनीलीन, 5–इथाइल 3–मिथाक्सी कैटीकॉल, सिरिनजलडीहाइड तथा कम तथा अधिक अणुभार वाले टैनिन	अविघटनकारी, एन्जाइम अवरोधक
2.	क्लोरोफिनाल	2 क्लोरोफिनाल, 4 क्लोरोफिनाल, 3 क्लोरोकैटीकॉल, 6 क्लोरोगुयीकॉल, 5 क्लोरोगुयीकॉल, 3,6 डाई क्लोरो गुयीकॉल, 3,6–डाई क्लोरो कैटीकॉल, 4,5–डाई क्लोरो कैटीकॉल, 3,4,5 ट्राई क्लोरो गुयीकॉल	अविघटनकारी, अतिविषाक्त, कैंसर उत्पन्न करने वाला
3.	फिनाल	2 मिथाक्सी फिनाल, 2–हाईड्राक्सी फिनाल, 2,6–डाईमिथाक्सी फिनाल, 4 हाईड्राक्सी 3 मिथाक्सी बेन्जलडीहाइड, 5 मिथाइल 3 मिथाक्सी कैटीकॉल, बेन्जीन 1,3,5 ट्राईऑल	विषाक्त, कैंसर उत्पन्न करने वाला

4.	कार्बोक्सेलिक अम्ल (1) हाईड्राक्सी अम्ल (मोनोकार्बोक्सेलिक एसिड) (2) (डाइकारवॉक्सेलिक) (3) ट्राईकारवॉक्सेलिक अम्ल	2–हाइड्राक्सी इथेनॉइड अम्ल, 2–हाईडड्राक्सी प्रोपेनोइक अम्ल, 3–हाइड्राक्सी प्रोपेनोइक अम्ल, 2–हाइड्राक्सी वुटेनोइक अम्ल, इथेनडाइओइक अम्ल, प्रोपेन डाइओइक अम्ल, बुटेनडाइओइक अम्ल, हाइड्राक्सी वुटेनडाइओइक अम्ल, मीथेन वुटेन डाइओइक अम्ल, 2–फुरॉन कार्बोक्सेलिक अम्ल, 1,2,4 बेन्जीन कार्बोक्सेलिक अम्ल	अविघटनकारी भारी यौगिक
5.	वसीय अम्ल (1) मोनोकारवोक्सेलिक मोनोकार्बोक्सेलिक (2) डाइकारवॉक्सेलिक	डोडिकेनोइक अम्ल, टेट्राडिकेनाइक अम्ल, पेटाडिकेनोइक अम्ल, हेक्साडिकेनाइक अम्ल, आक्टाडिकेनोइक अम्ल, डोकेसनाओइक अम्ल हेक्साडिकेनोइक अम्ल, आक्टाडिकेनाइक अम्ल, नोनाडिकेनाइक अम्ल	अविघटनकारी
6.	फैटी एल्कोहॉल	टेट्राडिकेन–1–ऑल, हेक्साडिकेन 1–ऑल, आक्टाडिकेन–9 इन–1– ऑल, 1–आक्टाडिकेनॉल, डोकासन–1–ऑल	अविघटनकारी
7.	इसटीरॉल	बीटा साइटो इसटीरॉल, बीटा साइटोस्टैनॉल	अविघटनकारी
8.	रेजिन एसिड (अम्ल) तथा इसटीराल	एविटिक अम्ल, डाइहाइड्राएविटिक अम्ल, नियोएविटिक अम्ल, पाइमेरिक अम्ल, आइसोपाइमेरिक अम्ल	मछलियों के लिए विषाक्त ''ईरोड'' क्रिया, लाल रक्त कणिका तथा केन्द्रक सम्बन्धित विसंगतियाँ
9.	भारी धातुयें	लेड, कैडमियम, क्रोमियम, कॉपर, निकेल, मैगनीज, लौह, जिंक	यौगिकों की जटिलता को बढ़ा कर उन्हें अविघटनकारी बना देती है।

3. कागज उद्योग से निकलने वाला हानिकारक उत्प्रवाह : पर्यावरण एवं स्वास्थ्य

कागज उद्योग अपशिष्ट में निहित प्रदूषक मूलतः पादप कोशिका भित्ती से घुले विभिन्न लिगनिन, फिनॉल, टैनिन, रेजिन ऐसिड एवं एल्केलायड होते हैं। इसके अलावा लुग्दीकरण के समय विभिन्न उत्सर्जित

चित्र-2: कागज उद्योग से पर्यावरणीय प्रदूषण, (अ) चिमनियों से निकलने वाला फ्लाई ऐश (राख) वायु प्रदूषण दर्शाता हुआ, (ब) कागज उद्योग बहिस्त्राव से जलीय प्रदूषण

पदार्थ रासायनों से अभिक्रिया करके प्रदूषकों का एक बहुत बड़ा समूह बना लेते हैं जिनको हम सामान्य भाषा में कागज उद्योग प्रदूषकों का "पेन्डोरा बॉक्स" कहते हैं। इनमें विशेषतः हानिकारक प्रदूषकों में पालीक्लोरीनेटेड डाईबेजोडाइआक्सिन, डाईबेजोफुरॉन जिनको हम परसिसटेन्ट आर्गेनिक प्रदूषक कहते हैं। इसे ई.पी.ए. द्वारा प्राथमिक प्रदूषक की श्रेणी में रखा गया है। जैसा कि चित्र संख्या 2 अ एवं ब में कागज उद्योग से जलीय प्रदूषण प्रदर्शित है।

इनके साथ-साथ बहुत से क्लोरीनेटेड यौगिक जैसे क्लोरोफिनाल, क्लोरोलिगनिन, रेजिन तथा फैटी ऐसिड होते हैं, जो पर्यावरण को विभिन्न स्तर पर हानि पहुंचाते हैं, जो जीव जन्तुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के साथ-साथ जीनोटॉक्सिक भी होते हैं। कागज उद्योग अपशिष्ट से पर्यावरण में विभिन्न दुष्प्रभाव निम्नवत् हैं।

(क) कागज उद्योग अपशिष्ट में उपस्थित धुलित लिगनिन, रेजिन ऐसिड, निलम्बित ठोस, फास्फेट तथा नाइट्रोजन की उपस्थिति के कारण जलीय तंत्र में युट्राफिकेशन तथा शैवाल को जन्म देते हैं।

(ख) रंगीन प्रदूषकों के साथ-साथ बहुत से कार्बनिक प्रदूषक होने के कारण कागज उद्योग अपशिष्ट नदियों तथा जलस्रोतों को प्रदूषित करके इसमें बहुत से हानिकारक रोगजनित जीवाणुओं को पैदा करते हैं, जो स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक होते हैं इसमें मुख्यतः कोलीफॉर्म जीवाणु एवं इस्चिरिचिया कोलाई, क्लेबसेला प्रजाति, शाइजेला प्रजाति, विबरियो प्रजाति, यरसिनिया प्रजाति, बैसिलस प्रजाति इत्यादि मुख्य हैं।

(ग) कागज उद्योग अपशिष्ट में उपस्थित हैलोजीनेटेड रसायन जैवीय तंत्र में विभिन्न जन्तुओं में उपस्थित विघटित करने वाले एन्जाइम साइटोक्रोम पी.450 पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। कागज उद्योग उपशिष्ट की विषाक्ता का परीक्षण साइटोक्रोम पी450 को संवेदनशील घटक को नाप कर कर सकते हैं। उदाहरणार्थ कागज उद्योग अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषकों के कारण इथाक्सी रिसोरोफिन ओ-डीथाइलेज (इरोड) की वृद्धि देखी गई है।

(घ) अपशिष्ट में उपस्थित सभी प्रदूषक जलीय तंत्र में उपस्थित जीवजन्तुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। जिसमें पौधों की प्रकाशसंश्लेषण करने की क्षमता क्षीण हो जाती है। इसी प्रकार के पौधे जिनको कम प्रकाश की आवश्यकता होती है, विकसित हो जाते हैं। इसके साथ-साथ ये देखा गया है कि कागज उद्योग अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषक मछलियों के गिल में जमा होकर उनके श्वसन क्रिया में बाधा पहुंचाने के साथ-साथ यकृत को भी हानि पहुंचाते हैं। इससे बहुत सी मछलियां मर जाती हैं। इस प्रकार जल में उपस्थित पादप एवं जन्तु परिस्थितिकी तंत्र असंतुलित हो जाता है।

(ड.) चूँकि कागज उद्योग अपशिष्ट में उपस्थित क्लोरोफिनाल ''इन्ड्रोक्राइन डिस्रपटिंग रसायनों'' की श्रेणी में आते हैं। इसके कारण मछलियों में प्रजनन क्षमता में कमी के साथ-साथ द्वितीय लैंगिक लक्षण विकसित नहीं हो पाते। जहां पर ये अपशिष्ट जलीय तंत्र में मिलते हैं वहां

हारमाफ्रोडाइट मछलियां बहुतायत में मिलती हैं।

(च) इसके अलावा अपशिष्ट में उपस्थित भारी धातुएँ लिगनिन के विभिन्न घटक फिनाल, क्लोरीन के साथ मिलकर कैंसर उत्पन्न करने वाले यौगिकों का निर्माण करते हैं। जिसमें टेट्राक्लोरोक्यूनाल, टेट्राक्लोरोकैटीकॉल, क्लोरोसिरिनजॉल, पेन्टाक्लोरोफिनाल मुख्य हैं।

(छ) कागज उद्योग से निकलने वाला उत्प्रवाह कई सारे विषैले रसायनों का मिश्रण होने से इसे प्रयोग करने वाले मनुष्य तथा मवेशियों पर भी विपरीत प्रभाव डालता है। बिना उपचारित या अपूर्ण उपचारित कागज उद्योग उत्प्रवाह का प्रयोग करने से मनुष्यों में बालों का गिरना, नाखूनों का क्षरण अंशतः या पूर्णतः एवं चर्म सम्बन्धी रोग जैसे खुजली, रैसेज हो जाते हैं।

(ज) मवेशियों द्वारा दूषित जल प्रयोग से इसमें बहुत प्रकार के पेट सम्बन्धी कैंसरयुक्त रोग होने की सम्भावना प्रबल हो जाती है।

(झ) हाल के कुछ शोधों से ज्ञात हुआ है कि कागज उद्योग अपशिष्ट में उपस्थित विरंजीकरण तथा लुगदीकरण प्रक्रिया से उत्पन्न अपशिष्ट धुलित रेजिन एसिड शोधन के उपरान्त भी विघटित नहीं हो पाते हैं तथा ये जलीय जन्तुओं पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। इसी प्रकार से बहुत से हानिकारक प्रदूषक जैसे नोनाइल फिनाल पॉली इथाक्सी कार्बोक्सिलेट है। जो एक आयनरहित सरफेक्टेंट के विघटन के पश्चात् उत्पन्न होता है जो जलीय जन्तुओं पर जानलेवा प्रभाव डालता है।

4. कागज उद्योग से उत्सर्जित अपशिष्ट उत्प्रवाह के शोधन की प्रचलित मुख्य विधियाँः

कागज उद्योग से निकलने वाले जलीय अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषकों को (अ) भौतिक, (ब) रासायनिक तथा (स) जैविक विधियों से शोधन किया जा सकता है। जिसमें से (अ) भौतिक शोधन की विधि में मुख्यतः उपयुक्त अवशोषक के द्वारा या पतली झिल्ली के द्वारा छानकर उसमें उपस्थित विभिन्न प्रदूषकों को पृथक करके किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त भौतिक विधियों में प्रकाश उत्प्रेरक की उपस्थिति में प्रकाश आक्सीकरण किया जा सकता है, जब यह प्रक्रिया बिना प्रकाश उत्प्रेरक की उपस्थिति में होती है तो वाष्पन विधि कहलाती है। भौतिक विधियों में ऐसे अवशोषक प्रयोग में लाये जाते हैं जो सस्ते एवं प्रदूषक रहित हो अन्यथा कागज उद्योग अपशिष्ट में निहित प्रदूषक अवशोषित होकर भारी मात्रा में विषैले कचरे को जन्म देते हैं। अवशोषण अवधि द्वारा एक सीमित मात्रा तक के अपशिष्ट को शोधित किया जा सकता है। क्योंकि बहुत से प्रदूषक अवशोषण के उपरान्त अवशोषकों में संतृप्ता आ जाती है। कागज उद्योग के अपशिष्ट के अवशोषण हेतु भौतिक विधियों में प्रायः सक्रिय चारकोल, बगास, फ्लाई ऐश (गन्ने की खोइ की राख) या धान की भूसी की राख या अन्य प्रकार की राख जो प्रदूषक रहित होती है, प्रयोग की जा सकती है। जैसे तापीय बिजली घरों से उत्सर्जित राख को पर्यावरण स्वास्थ्य के लिये हानिकारक माना जाता है, इसलिये इस प्रकार की राख प्रयोग में नहीं लायी जाती, क्योंकि, कागज उद्योग में निहित अपशिष्ट लिगनिन, क्लोरोफिनाल, भारी धातुएं, रेजिन एसिड ज्यादा होती है। जो भारी धातुएं लिगनिन अणुओं के साथ बन्ध बना लेती है जिसमें आर्सेनिक जैसी भारी धातुएं कचरे के साथ बहुतायत मात्रा में ठोस अपशिष्ट उत्पन्न होने की सम्भावना बढ़ जाती है। इसके अलावा कुछ ठोस

जैवीय अपशिष्ट भी अवशोषक प्रयोग में लाये जा सकते है। जिसका निस्तारण प्रयोग सुरक्षित है उदाहरणार्थः डाइएटमस बायोमास या पल्प पेपर से उत्सर्जित शोधन के उपरान्त निकला ठोस अपशिष्ठ महंगी बहुत मात्रा में कचरा उत्पन्न होने के कारण विधि प्रयोग में कम लायी जाती है। इसके अलावा दूसरी प्रयोग में आने वाली विधि जिसमें पतली मेम्ब्रेन का प्रयोग कर जिसमें विभिन्न आकार के अणुओं को क्रमबद्ध तरीके से छानने की क्षमता होती है परन्तु कागज उद्योग में उपस्थित लिगनिन तथा भारी धातुएं एवं क्लोरोफिनाल तथा निलम्बित ठोस मिलकर एक अवस्था में छिद्रों को बन्द कर देते हैं जिससे इसमें दुर्गन्ध आने लगती है जिससे ये आगे प्रयोग हेतु उपयुक्त नहीं होती है। इसलिये उपरोक्त विधियों को वृहद पैमाने पर प्रयोग में नहीं लाया जाता है।

(ब) रासायनिक विधियों में प्रयोग में आनेवाली विधियां जिनमें विभिन्न रासायनों का प्रयोग करके अवक्षेपण, पृथक्करण, फ्लाकुलेशन कराया जाता है। इसके अलावा विभिन्न रासायनों का प्रयोग करके पल्प पेपर मिल उत्प्रवाह में उपस्थित कचरे का ऑक्सीकरण किया जा है उदाहरणार्थ ओजोन गैस का प्रयोग करके जलीय अपशिष्ट में उपस्थित विभिन्न रासायनों का ऑक्सीकरण कराया जाता है। परन्तु इस विधि का सबसे नकारात्मक पक्ष इससे उत्पन्न ठोस कचरा बहुत मात्रा में उत्पन्न होता है जो पर्यावरण के लिये हानिकारक है। प्रयोग में आने वाले रसायन हानिकारक एवं महंगे हैं, जो कागज उद्योग के अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषको को हटाने के साथ-साथ दूसरी तरह के प्रदूषकों को ठोस कचरे के रूप में वृद्धि करते हैं, इसीलिये इस विधि का भी प्रचलन बहुत ही सीमित है।

(स) **जैविक विधियाँः** जैविक विधियों में प्रचलित मुख्यतः ऑक्सीकृत एवं अनाक्सीकृत प्रक्रिया द्वारा संचालित विभिन्न विधियां हैं। जिसमें जीवाणु, पौधे एवं विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीव एवं पौधे अपनी वृद्धि के दौरान प्रदूषकों को निम्नीकृत करके अपने पोषक के रूप में अवशोषित करते हैं। जैव विधियों में उपयोग में आने वाली विधियाँ इस प्रकार से है।

अनाक्सीकृत विधियाँ जो कुछ औद्योगिक अपशिष्ट के शोधन में प्रयोग में लायी जाती है, इस विधि में ऐसे प्रदूषक बहुतायत में होने चाहिए जिसमें अनाक्सीकृत जीवाणु आसानी से अपने पोषक के रूप में ले सके। इस विधि को प्रयोग करने के लिये कार्बन/नाइट्रोजन का अनुपात अधिक होना चाहिए क्योंकि कागज उद्योग से निकलने वाले विरंजित जलीय अपशिष्ट में कार्बन एवं नाइट्रोजन का अनुपात कम होता है। इसलिये इसके शोधन में ये प्रक्रिया कम उपयोगी है। ब्लैक लिकर के शोधन में इस विधि का उपयोग किया गया है परन्तु ये विधि बहुत अधिक सफल न होने के कारण उपयोग में नहीं लायी जाती।

दूसरी आक्सीकृत विधियां जो प्रचलन में हैं उनमें से (अ) एक्टीवेटेड स्लज प्रक्रिया (ब) आक्सीकृत लैगून। ये विधियाँ कागज उद्योग अपशिष्ट शोधन में उपयुक्त सुरक्षित एवं सस्ती पायी गयी है, इसलिये इनमें से कुछ विधियाँ वर्तमान समय में प्रयोग में हैं।

(अ) **ऐक्टीवेटेड स्लज प्रक्रियाः** हानिकारक औद्योगिक अपशिष्ट उत्प्रवाह को शोधित करने की यह मुख्य विधि है। इस विधि द्वारा कागज उद्योग से उत्सर्जित अपशिष्टों को शोधित किया जाता है। एक्टीवेटेड स्लज प्रक्रिया में सक्षम जीवाणुओं का विभिन्न पर्यावरणीय दशाओं में संवर्धित किया जाता है।

इस प्रक्रिया में अपशिष्ट में आक्सीजन प्रवाहित की जाती है वायु का प्रवाह ही इस विधि की मुख्य विशेषता है वायु प्रवाह के कारण उपस्थित जीवाणुओं में अनुकूलन होता है इसी कारण ही जीवाणु जलीय अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषकों को पोषक के रूप में लेते हैं।

अनुकूलित वातावरण में संवर्द्धित सक्रिय जीवाणुओं के समूह को ऐसी दशा में रखते हैं, जिससे वे जलीय अपशिष्ट में उपस्थित विभिन्न प्रदूषकों को निम्नीकृत कर अपने जैवभार में वृद्धि करते हैं। पोषक तथा जैव भार का एक निश्चित अनुपात ही उनकी सक्रियता तथा अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषकों के निम्नीकरण की प्रक्रिया को संकेतिक करता है जिसको हम मिक्सड लिकर सस्पेंडेड सॉलिड (एम.एल.एस.एस.) कहते हैं। (इस प्रकार से शोधन के समय एम.एल.एल. एस. की अपशिष्टों के साथ एक निश्चित मात्रा प्रदूषकों के मापदण्ड को दर्शाता है।) पोषण तथा जैवीय भार एक निश्चित अनुपात में होते हैं तो वे सक्रिय स्लज बनाते हैं। इसी कारण से इसे एक्टीवेटेड स्लज प्रक्रिया कहते हैं। पोषण तथा जैवीय भार एक निश्चित अवस्था में बनाये रखते हैं इसके लिये एक निश्चित समय अन्तराल पर ताजे औद्योगिक अपशिष्टों को मिलाते हैं तथा पुराने स्लज जैव भार को पृथक्कृत करते हैं। जिससे एक चक्रीय क्रम में जीवाणुओं की वृद्धि होती है और आने वाले औद्योगिक अपशिष्टों का निम्नीकरण होता है। पोषण एक जैव भार के एक निश्चित अनुपात के साथ-साथ इस प्रक्रिया में सम्वर्धित जीवाणु की कोशिकायें जिनकी आपस में एक दूसरे से आकर्षित होने की प्रवृत्ति के होती है। जिनके कारण दो या तीन कोशिकायें आपस में जुड़कर एक कोशिका का समूह बना लेती है। जिसे हम फ्लाक कहते हैं, जो फ्लाक जितना बड़ा होता है उतनी ही आसानी से स्लज के रूप में पृथक्कृत जाता है। इस क्रिया में दो तथ्य बहुत ही महत्वपूर्ण होते है। पहला पूर्ण विकसित जीवाणु कोशिकायें अपने चारो तरफ म्यूसीलेजिनस पॉलीसेक्राइड का स्त्रावण करती है जिस पर ऋणात्मक चार्ज होता है इससे कुछ यौगिक जो अपशिष्ट में उपस्थित होते हैं, वे जुड़ जाते हैं इस प्रक्रिया को कोशकीय अवशोषण कहते हैं।

यह प्रक्रिया बहुत ही प्रचलित तथा सरल है जिसकी विशेषताएँ निम्न हैं :

1. यह प्रक्रिया बहुत ही सरल है जिसमें जीवाणु वृद्धि आसानी से की जा सकती है।
2. इस प्रक्रिया में विस्तृत स्तर पर विभिन्न प्रदूषकों का विघटन होता है, इससे बहुत सी विषैली गैसों का विघटन हो जाता है।
3. इस प्रक्रिया में निर्मित स्लज को भी उपयोग में लाया जा सकता है। जो भौतिक तथा रासायनिक प्रक्रिया में निर्मित स्लज के अपेक्षाकृत पर्यावरण के लिये उपयोगी होता है।

इसका जो ऋणात्मक पक्ष यह है कि इसे चलाने के लिये ज्यादा ऊर्जा एवं प्रशिक्षित व्यक्ति की आवश्यकता होती है। जो जीवाणु की वृद्धि हेतु अनुकूलित पोषक एवं आक्सीजन की उचित मात्रा को समन्वित कर सके।

(ब) **आक्सीकृत लैगून प्रक्रिया**: यह प्रक्रिया किसी-किसी जगह कागज उद्योग अपशिष्ट के शोधन हेतु प्रयोग में लायी जाती है परन्तु इसमें ऐक्टीवेटेड स्लज प्रक्रिया की तरह कोई निर्धारित पोषक तत्वों तथा जैवीय भार का कोई निश्चित अनुपात नहीं रखा जाता इसमें ऐसे एयरेटर एक स्थायी अवस्था में चलाये जाते

हैं। जिसमें कुछ अविघटित या जटिल प्रदूषक हवा के सम्पर्क में आकर आक्सीकृत होते हैं। इस प्रक्रिया में बहुत देखभाल की आवश्यकता नहीं होती, कम प्रदूषकों की सान्द्रता पर कुछ सूक्ष्म जीवाणु स्वतः विकसित हो जाते है जो कुछ स्तर तक विघटन में मदद करते हैं। कागज उद्योग अपशिष्ट के ब्लैक लिकर तथा विरंजित उत्प्रवाह के उपचार में यह विधि उपयोगी देखी गयी है। जिसमें बहुत सी वाष्पशील गैसें निकल जाती है। इसमें फीनॉल युक्त पदार्थ होते हैं जो आक्सीकृत हो जाते हैं। परन्तु कागज उद्योग में निहित बहुत से जटिल पदार्थ आपस में ऐसे मिले होते हैं, जो आक्सीजन के साथ अभिक्रिया करके बहुत परिवर्तित नहीं हो पाते हैं।

5. कागज उद्योग अपशिष्टों के सुरक्षात्मक निस्तारण की दिशा में शोधन की नवीनतम विधियों के विकास हेतु शोध एवं चुनौतियाँः

प्रयोग में आने वाली प्रचलित विधियाँ पूर्ण रूप से कागज उद्योग उत्प्रवाह के विघटन में सफल न हो पाने के कारण कुछ इस प्रकार की विधियों पर शोध आवश्यक है, जो निकलने वाले अपशिष्ट में उपस्थित प्रदूषकों को पूर्ण रूप से विघटित कर सके तथा इनका प्रयोग बड़े पैमाने पर हो जिन्हें औद्योगिक ईकाइयां सुविधापूर्वक उपयोग कर सके जा सकती हैं। इन विधियों के अन्तर्गत हम कुछ नवीनतम विधियों का वर्णन कर रहे हैं जो प्रयोगशाला स्तर पर कागज उद्योग उत्प्रवाह के शोधन में प्रयोग हेतु बतायी गई हैं तथा इनके वृहद स्तर पर प्रयोग में लाये जाने की प्रक्रिया विकास की अवस्था में है।

कागज उद्योग अपशिष्ट में उपस्थित विभिन्न प्रदूषकों को शोधित करने के लिये जीवाणुओं द्वारा नवीन विधियों में विशेष प्रकार के रियेक्टर विकसित किये जा सकते हैं। जिसमें सूक्ष्म जीवाणु प्रदूषकों की अधिकतम मात्रा को विघटित करते हैं इसके अतिरिक्त जिसमें जीवाणुओं की वृद्धि के लिये नियंत्रित आक्सीजन, तापक्रम एवं प्रदूषकों की सान्द्रता आसानी से नियंत्रित की जा सकती है। इसमें मुख्यतः (अ) सिक्वेन्सियल अप-फ्लो एरोबिक फ्लूडाइज़्ड बेड रिएक्टर (ब) सिक्वेन्सियल बैच रिएक्टर (स) मूविंग बेड बायोफिल्म बायोरिएक्टर मुख्य है।

(अ) सिक्वेन्सियल अप फ्लो एरोबिक फ्लूडाइज़्ड बेड रिएक्टर में जैवीय भार को नीचे सतह पर तथा किनारे जैवीय भार को स्थिर कर दिया जाता है। इसमें नीचे से उत्प्रवाह तथा आक्सीजन के साथ नीचे से ऊपर की तरफ दाव से फेका जाता है जिससे जैवीय भार के सम्पर्क में आने से उत्प्रवाह का विघटन होता है।

(ब) सिक्वेन्सियल बैच रिएक्टर विधि का उपयोग करके कागज उद्योग अपशिष्ट का शोधन में वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में ये देखा है कि इससे विभिन्न प्रकार की लिगनिन की इकाइयाँ एवं रेजिन ऐसिड, क्योरोफिनाल का घटना एवं अन्य प्रदूषकों का विघटन एक्टीवेटेड स्लज प्रक्रिया से अच्छा पाया गया है। जो पर्यावरण के लिये सुरक्षित है। इस विधि में अपशिष्ट को दो या तीन चरण में बैच प्रक्रिया में शोधित किया जाता है। जिसमें पहले चरण में कुछ स्तर तक छोटे भार वाले कार्बनिक अणु जैवीय क्रिया से परिवर्तित होकर अन्य उत्पाद बना लेते हैं। ये उत्पाद द्वितीय चरण में विघटित होते हैं। इस प्रकार विभिन्न श्रेणी के प्रदूषक एक क्रम में रासायनिक गुणों के आधार पर निश्चित क्रम में विघटित होते

हैं। इसलिये इस प्रक्रिया को सिक्वेन्सियल बैच रिऐक्टर कहते हैं उदाहरणार्थ, फफूदी को एकचरण में प्रयोग करके कागज उद्योग अपशिष्ट को विघटित करने के उपरान्त शेष प्रदूषकों को सक्षम आक्सीकृत जीवाणुओं का प्रयोग करके बैच विधि द्वारा विघटित करते हैं। इस प्रकार से दो विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं के समूह को क्रमबद्ध तरीके से अपशिष्ट उत्प्रवाह इसके अलावा आक्सीकृत तथा अनाक्सीकृत विधि को भी क्रमबद्ध तरीके से उपयोग में लाया जा सकता है।

(स) मूविंग बेड बायोफिल्म या मूविंग ड्रम बायोफिल्म रिएक्टर में सूक्ष्म जीवों को रिएक्टर की दीवार पर स्थिर कर दिया जाता है, तथा रिएक्टर को एक निश्चित वेग से घुमाते हैं।

इन विधियों में सिक्वेन्सियल बैच रिएक्टर विधि का प्रयोग बड़े स्तर पर अपशिष्टों के शोधन के लिये करना विकास हेतु आने वाली बाधाओं का निराकरण की दिशा में शोध की आवश्यकता है। परन्तु मूविंग वेड बायोफिल्म रिएक्टर एवं अपफ्लो एरोबिक बायोरिएक्टर उपरोक्त शोधन विधियों की अपेक्षाकृत मन्द गति से प्रदूषकों का विघटन करती है, तथा उसका उपयोग लघु स्तर पर ही प्रयोग करना आर्थिक दृष्टिकोण से सम्भव है, क्योंकि बड़े उद्योग में भारी मात्रा में अपशिष्ट उत्सर्जित होते हैं।

विभिन्न प्रक्रमों की समन्वित शोधन की नवीनतम विधियाँः

कागज उद्योग से निकलने वाले अपशिष्ट उत्प्रवाह विभिन्न प्रदूषकों जटिल मिश्रण होता है। समन्वित शोधन या शोधन की दो विधियों को एकीकृत करके एक के बाद एक करके शोधन किया जाता है। इस विधि को प्रयोग करके दो विधि के गुणों का लाभ उठाया जाता है। एक ही शोधन विधि का प्रयोग करने से एक निश्चित मात्रा में ही उपस्थित प्रदूषकों का विघटन हो पाता है, परन्तु कई विधियों को समाहित कर एक हाइब्रिड विधि बनाने से कई प्रकार के प्रदूषकों को निम्नीकृत करके उसमें उपस्थित जैवीय, रासायनिक मांग के साथ-साथ उसकी विषाक्ता को कम किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, प्रयोग में आने वाली कुछ हाइब्रिड जैसे पृथक्करण तथा आक्सीकरण प्रक्रिया को समेकित करके, ओजोनेशन विधि को बायोफिल्म रिएक्टर में जोड़ करके रासायनिक आक्सीकरण के ओजोनेशन के साथ सम्बद्ध करके, इलेक्ट्रोलिसिस को ओजोनेशन के साथ सम्बद्ध करके, तथा कभी-कभी ओजोनेशन को एक्टीवेटेड स्लज विधि से समेकित कर विघटन की प्रक्रिया को बढ़ाया जा सकता है। ये नवीनतम विधियां जिसमें कई सारी जैव, रासायनिक तथा भौतिक प्रक्रमों को एक साथ कर कागज उद्योग से निकलने वाले जटिल विषाक्त रसायनों को उपचारित किया जा सकता है, तथा ये विधियाँ कागज उद्योग से निकलने वाले अपशिष्टों को उपचार के लिये सफल पायी गयी है। तथा इनका अध्ययन करके इन्हें औद्योगिक स्तर पर प्रयोग किया जा सकता है। इन विधियों को सर्वोत्तम उपलब्ध तकनीकी के रूप में विकसित करने की प्रक्रिया शोध का विषय है।

इस विधि के अलावा कई अन्य विधियाँ जो वर्तमान समय में प्रयोगशाला स्तर पर ही विकास के प्रथम से द्वितीय चरण में है। इन विधियों में जीवाणुओं द्वारा स्त्रावित लिग्नोलिटिक एन्जाइम, जाइलेनेज, परआक्सीडेज, लैकेजेज का प्रयोग जैविक विरंजीकरण प्रक्रिया में तथा कागज उद्योग से निकलने वाले

अपशिष्ट को विघटित करने में भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया को विकसित करने के लिये सक्षम जीवाणुओं तथा फफूँदी के जीन की पहचान करके रिकाम्बिनेन्ट जीन तकनीकी के द्वारा ऐसे जीवाणुओं का विकास करना है, जो ज्यादा मात्रा में लिग्नोलिटिक एंजाइम का स्रावण कर सके। इसके अलावा सक्षम जीवाणुओं का प्रयोग सीधे विघटन में किया जा सकता है तथा इस काम में होने वाली विसंगतियाँ जैसे विघटन की क्रिया में विषाक्त उपापचयी पदार्थ को दूर किया जा सकता है।

शोधन की विधियों के विकास में आने वाली बाधाएँ:

(क) विभिन्न प्रकार के विषाक्त रसायनों के कारण जलीय अपशिष्ट शोधन एक जटिल प्रक्रिया है। कुछ रसायन विघटित न हो पाने के कारण अनउपचारित रूप से पर्यावरण में आ जाते हैं।

(ख) इनमें उपस्थित रसायनों का सम्पूर्ण ज्ञान न होने के कारण इनका उपचारण एक चुनौती है।

(ग) विषाक्त क्लोरोफिनाल, डाइआक्सिजन तथा डाइवेन्जोफुरॉन होने के कारण जैवीय रूप से उपचारण में असुविधा होती है। क्योंकि, ये रसायन फफूँदी तथा जीवाणुओं के लिये विषाक्ता करते हैं।

(ग) वर्तमान समय में बहुत सारी विधियों प्रयोगशाला स्तर पर अध्ययन के क्रम में है, परन्तु, इनका बड़े पैमाने पर सफलता पूर्वक प्रयोग एक चुनौती है।

6. कागज उद्योग से उत्सर्जित हानिकारक उत्प्रवाह का शोधन के उपरान्त वैज्ञानिक उपयोग की सम्भावनायें:

कागज उद्योग से निकलने वाला अपशिष्ट हानिकारक होने के साथ-साथ अधिक मात्रा में उत्सर्जित होता है। जिनका बिना उपचार पर्यावरण में निस्तारण पर्यावरणीय असन्तुलन उत्पन्न करता है। चूंकि निकलने वाला जलीय उप्रवाह एवं जैविक ठोस अपशिष्ट अधिक मात्रा में होता है इसलिये इसको बिना किसी मापदण्ड के पर्यावरण में प्रवाहित कर देना उचित नहीं है। इनसे निकलने वाला उत्प्रवाह का उचित उपयोग भी होना आवश्यक है। बहुत सारी शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि कागज उद्योग से निकलने वाला जलीय अपशिष्ट को शोधित करके वैज्ञानिक तरीके से जनकल्याण हेतु निम्न प्रयोग में लाया जा सकता है।

(अ) कृषि में सिंचाई हेतु : कागज उद्योग से निकलने वाला जलीय अपशिष्ट विषाक्त होता है। परन्तु शोधों के पश्चात ये ज्ञात हुआ है कि विघटन के पश्चात इस उत्प्रवाह की विषाक्ता कम हो जाती है और इसका प्रयोग कृषि में सिंचाई हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है। शोधों से ये भी ज्ञात हुआ है कि विघटित उत्प्रवाह के प्रयोग से पैदावार में वृद्धि हो जाती है।

(ब) उर्वरक के रूप में : इसका दूसरा उपयोग कागज उद्योग से उपचार के पश्चात् निकलने वाला ठोस स्लज है जिसमें अधिक विघटित कार्बनिक पदार्थ होते हैं, जिसे पौधों के लिये पोषक तत्व के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। विभिन्न उपयोगी जीवाणु होने के कारण इसका उपयोग खाद के रूप में किया जा सकता है।

(स) मृदा सुधार में: औद्योगिक इकाईयों द्वारा निकलने वाला शोधित उत्प्रवाह में कई प्रदूषक बच जाते

हैं। बाहर आने पर ये इकट्ठा होकर एक स्लज के रूप में इकट्ठा होते हैं जिनको प्राकृतिक तरीके से विघटन के पश्चात् या वर्मी कम्पोस्टिंग से खाद में परिवर्तित किया जा सकता है, तथा स्लज को अम्लीय मृदा सुधार में सीधे प्रयोग किया जा सकता है।

(द) इसके अतिरिक्त मछलियों के संवर्द्धन के साथ-साथ जलीय संवर्द्धन (एक्वाकल्चर) में प्रयोग किया जा सकता है उदाहरणार्थ स्पाईरूलिना (एक कोशकीय नीली हरी शैवाल), सिघाड़े की खेती में। सिंघाड़े की खेती से उपस्थित प्रदूषक भी विघटित होते हैं, इसके साथ-साथ विभिन्न प्रकार की मछलियां के पालन में जो उत्सर्जित अपशिष्ट उत्प्रवाह के शुद्ध होने का संकेत करती है भविष्य में व्यावसायिक रूप से इसके उपयोग की उज्जवल संभावनाये हैं।

(ड.) कागज उद्योग से लुग्दीकरण प्रक्रिया के उपरान्त निकलने वाला ब्लैक लिकर, तथा विरंजीकरण प्रक्रिया से निकलने वाला विरंजित उत्प्रवाह में विभिन्न प्रकार के रसायनों का मिश्रण होता है। वर्तमान समय में ब्लैक लिकर से रसायनों को निकाल लिया जाता है परन्तु इससे लिगनिन को भी निकाल करके इसे विभिनन प्रकार के प्रयोगों में जैसे रंग बनाने में, पेन्ट बनाने में, अगरबत्ती उद्योग में किया जा सकता है।

माइक्रोवेव डाइजेशन : धात्विक प्रदूषकों के विश्लेषण हेतु एक उत्कृष्ट तकनीक

डा. प्रेम नारायण सक्सेना एवं डा. रमेश चन्द्र मूर्ति

धातु विश्लेषण प्रयोगशाला, भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

माइक्रोवेव डाइजेशन में माइक्रोवेव विकिरण (रेडियेशन) के द्वारा जैविक नमूने (Samples) पदार्थ को अम्लीय द्रव में 200-250$_0$C के तापमान तक गर्म किया जाता है जिससे कि पदार्थ पूर्णतः विघटित होकर घुल जाये। इस प्रक्रिया में उच्च ताप एवं दाब उत्पन्न होता है और प्रतिक्रिया दर बढ़ जाती है फलस्वरूप धातु विश्लेषण के लिए डाइजेशन का समय काफी कम हो जाता है।

माइक्रोवेव विकिरण, विधुत चुम्बकीय स्पेक्ट्रम का एक महत्वपूर्ण अंश है, जिसका यहाँ संक्षिप्त उल्लेख करना अति आवश्यक है। इस स्पेक्ट्रम में आधुनिक रेडियो में इस्तेमाल निम्न आवृत्ति के विकिरण से लेकर उच्च आवृत्ति के गामा विकिरण तक शामिल हैं।

चित्र -1 : विधुत चुम्बकीय स्पेक्ट्रम

माइक्रोवेब वह चुम्बकीय तरंगे हैं जिनकी तरंग दैर्घ्य एक मिलीमीटर से लेकर एक मीटर तक लम्बी होती है एवं आवृत्ति 300 मेगाहर्टज और 300 गीगाहर्टज के बीच होती है। जेम्स क्लार्क मैकसवेल ने विधुत चुम्बकीय तरंगों के अस्तित्व की भविष्यवाणी सन् 1864 में अपने सैद्धांतिक समीकरण द्वारा की थी। लेकिन सर्वप्रथम माइक्रोवेव की खोज को हेनरीहर्टज ने सन् 1888 में अपने प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया था। आजकल अनेक प्रकार के उपकरण उपलब्ध है जिसके द्वारा माइक्रोवेव विकिरण उत्पन्न किये जा सकते है। अधिकतर इन विकिरण को कैविटी मैगनेट्रान के द्वारा उत्पन्न किया जाता है हालांकि इसके द्वारा निम्न आवृत्ति के विकिरण ही उत्पन्न होते हैं जिसे उष्मा उत्पन्न करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। मैगनेट्रान उपकरण को चित्र-2 में दर्शाया गया है।

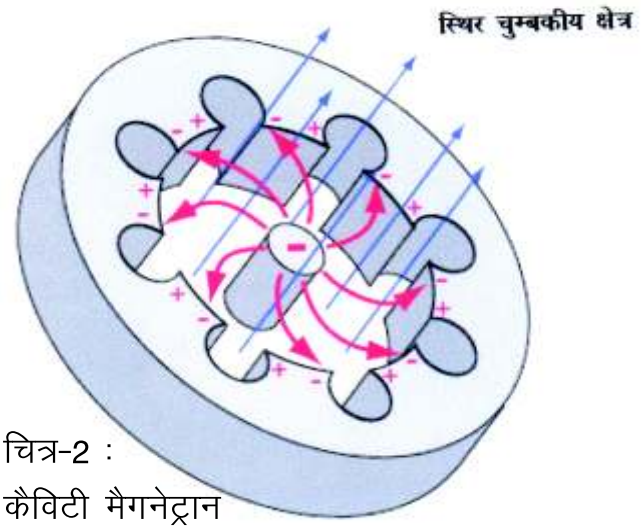

चित्र-2 :
कैविटी मैगनेट्रान

मैगनेट्रान उपकरण में कैथोड से उत्सर्जित इलेक्ट्रान पर विधुत एवं चुम्बकीय क्षेत्र इस प्रकार से प्रभावित करते है जिससे कि माइक्रोवेब विकिरण उत्पन्न हो सके। इसमें बेलनाकार खोखले संक्रेन्द्रीय एनोड एवं कैथोड होते हैं। कैथोड केन्द्र पर तथा एनोड इसके चारो ओर स्थित होता है। एनोड के बाहर एक शक्तिशाली चुम्बक स्थित होता है। इस एनोड में एक

चौथाई तरंग दैर्घ्य के बराबर गइराई वाली कैविटी का समूह संयुक्त होता है। जब एनोड को उच्च वोल्टेज से जोड़ा जाता है तो इलेक्ट्रान कैथोड से एनोड की तरफ जाने लगते है लेकिन इन इलेक्ट्रान पर शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र के प्रभाव के कारण, इसका मार्ग एक सीधी रेखा में न होकर, एक वृत्तीय रूप में हो जाता है और वे कैथोड के चारों ओर एक वृत्तीय मार्ग में घूमने लगते हैं। जब यह इलेक्ट्रान एनोड कैविटी में पहुँचते है तो वह माइक्रोवेव विकिरण उत्पन्न करते हैं। यह विकिरण, गाइड के द्वारा, माइक्रोवेव ओवेन एवं माइक्रोवेव डाइजेशन यंत्र में गर्म करने वाले कक्ष में भेजे जाते हैं। उच्च आवृत्ति के माइक्रोवेव विकिरण केलिस्ट्रान टयूब द्वारा उत्पन्न किये जा सकते हैं। जिसका उपयोग रडार में बहुत दूर की वस्तुओं की दूरी, गति एवं अन्य दूसरों गुणों का पता लगाने में होता है। माइक्रोवेव विकिरण का उपयोग रेडियो प्रसारण एवं दूर-संचार में भी होता है। इनका उपयोग रेडियो खगोल विद्या में चन्द्रमा एवं शुक्र ग्रह के अध्ययन में भी होता है।

माइक्रोवेब डाइजेशन प्रणाली के अन्तर्गत नमूनों का हाइड्रोक्लोरिक/या नाइट्रिक अम्ल में उच्च ताप एवं दाब पर बन्द पात्र में डाइजेशन शीघ्र हो जाता है। इस प्रणाली का सबसे बड़ा लाभ यह भी है कि इसमें बंद पदार्थ का बाहर छलकने, वातावरण द्वारा संदूषित होने या वाष्पशील धातुओं की क्षति का कोई खतरा नही रहता है। यह सभी परेशानियाँ खुले पात्र एसिड डाइजेशन विधि में उत्पन्न हो सकती हैं। परम्परागत, खुले पात्र एसिड डाइजेशन में नमूने का तापमान, एसिड के क्वथनांक तक ही सीमित रहता है जबकि माइक्रोवेव बन्द डाइजेशन में 3-4 मिनटों में ही अधिक तापमान एवं दाब प्राप्त कर सकते हैं। इस रासायनिक प्रतिक्रिया में उच्च दाब माइक्रोवेव द्वारा पदार्थ को गर्म करने से उत्पन्न होता है जो कि न केवल प्रतिक्रिया की दर बल्कि उसमें से एक्सट्रेक्टेड तत्वों की मात्रा को भी बढ़ाता है। सुरक्षा की दृष्टि से उच्च दाब, इस रासायनिक प्रतिक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंश है। माइक्रोवेव द्वारा पदार्थो के डाइजेशन में एक विशेष प्रकार की टयूब होती है जिसमें प्रयुक्त पदार्थ शक्तिशाली माइक्रोवेव क्षेत्र से प्रभावहीन होता है यानि यह डाइजेशन टयूब माइक्रोवेव विकिरण को बिल्कुल भी अवशोषित नही करती है। साधारणतयः यह टयूब क्वार्ट्स या टेफ्लान की बनी होती है। माइक्रोवेव डाइजेशन विधि में उत्पन्न उच्च तापमान एवं उच्च दाब को मापने के लिए सेन्सर का इस्तेमाल होता है। सेन्सर में भी प्रयुक्त पदार्थ माइक्रोवेव क्षेत्र से प्रभावहीन होता

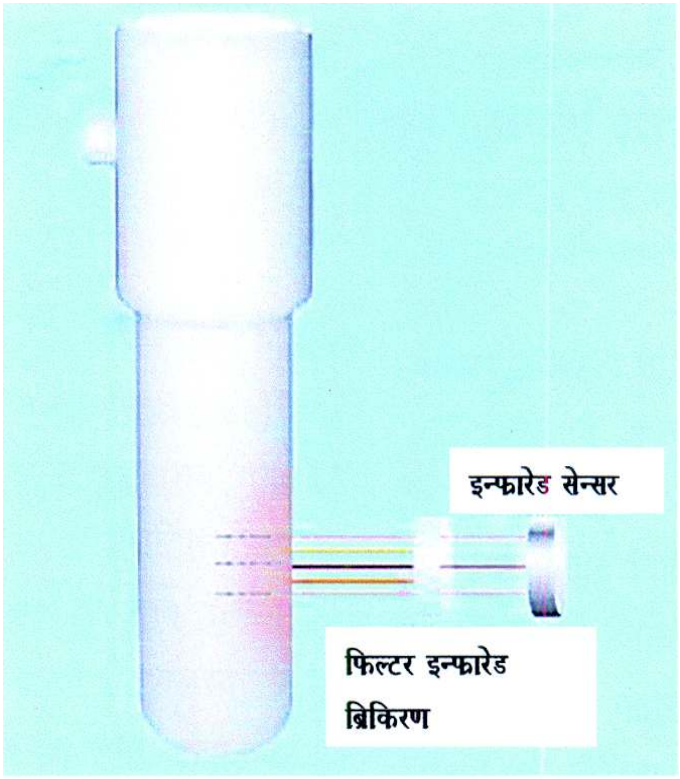

चित्र-3 : तापमान मापन

है। इसमें उत्पन्न तापमान को इन्फ्रारेड तरीके से मापा जाता है। इन्फ्रारेड सेन्सर (चित्र-3) से तापमान मापने का ढंग भौतिकी सिद्धान्त पर आधारित है और इसे स्टीफैन एवं वोल्टजमैन के सूत्र द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। इस सूत्र के अनुसार किसी वस्तु से उत्सर्जित कुल ऊर्जा उस वस्तु के तापमान से चतुर्थ घातांक के समानुपाती होता है। $E \propto T^4$, जहाँ E ऊर्जा तथा T तापमान को प्रदर्शित करता है।

इस उपकरण के डाइजेशन टयूब में प्रयुक्त पदार्थ उष्मीय विकिरण को भी अवशोषित नहीं करता है जिससे कि जैविक नमूने का वास्तविक तापमान माप सकते हैं। माइक्रोवेव डाइजेशन में अचानक तापमान में गिरावट, उसमें प्रयुक्त होने वाले किसी भी टयूब की सुरक्षा डिस्क का फटना प्रदर्शित करता है और सुरक्षा के कारण मशीन स्वतः बन्द हो जाती है।

माइक्रोवेव डाइजेशन प्रक्रिया में उत्पन्न दबाव को मापने के लिए प्रेशर टयूब के ढक्कन में एक काँच का छल्ला स्थायी रूप से लगा होता है जो कि एक सेन्सर की तरह कार्य करता है। जब पोलाराइजड प्रकाश इस काँच के छल्ले पर प्रकाशित होता है तो आन्तरिक दाब के कारण काँच के छल्ले से होकर गुजरने वाला प्रकाश के रंग में परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन पात्र के आन्तरिक दबाव के समानुपाती होता है। प्रेशर सेन्सर को चित्र-4 में दर्शाया गया है।

माइक्रोवेव में विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा निहित होती है। यह विकिरण बिना किसी आणविक संरचना के बदलाव किये द्विध्रुवों के घूर्णन के द्वारा पदार्थ में आणविक गति उत्पन्न करता है। माइक्रोवेव द्वारा पदार्थो में उत्पन्न उष्मा उसमें उपस्थित द्विध्रुवों अणुओं

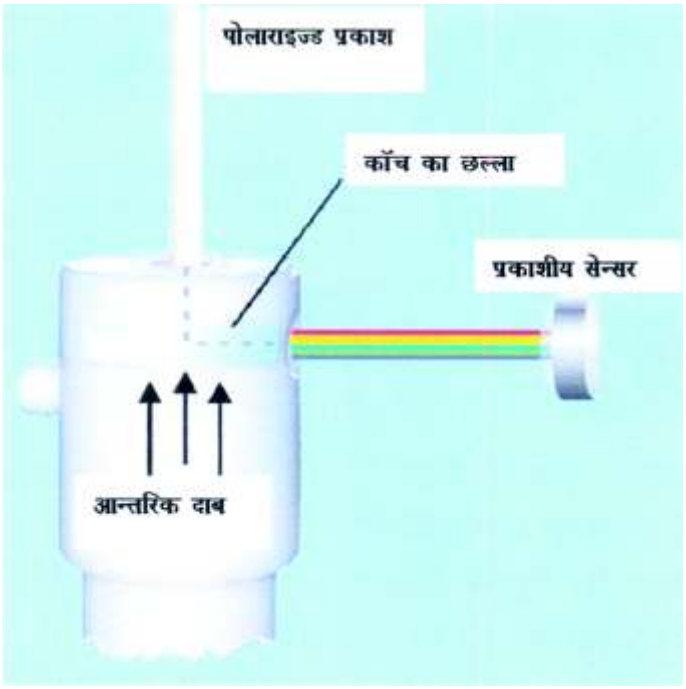

चित्र - 4 : दाब मापन

की संख्या पर निर्भर करती है। जब पदार्थ माइक्रोवेब से ऊर्जा अवशोषित करते हैं तो इसके अणु माइक्रोवेव की तीव्र गति से बदलने वाली विद्युत क्षेत्र के साथ आपस में संरेखित होने के लिए घूमते हैं। जब 5 अरब प्रति सेकेंड की दर से बदलने वाली माइक्रोवेव का विधुत क्षेत्र इन अणुओं पर प्रभावित होता है तो यह अणु अपने अक्ष के चारों ओर दोलन करने लगते हैं। इस तरह की आणविक गति से अणुओं के बीच काफी घर्षण उत्पन्न होता है जिससे कि उष्मा उत्पन्न होती है।

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक क्षेत्र में माइक्रोवेव द्वारा गर्म करने एवं सुखाने के लिए साधारणतयः चार आवृत्तियाँ जैसे : 915±25, 2450±13, 5800±75 एवं 22,125±125 मेगाहर्टज का इस्तेमाल होता है। यह सभी आवृत्तियाँ अर्न्तराष्ट्रीय रेडियो रेगुलेशन जर्मनी द्वारा 1959 में औद्योगिक, वैज्ञानिक एवं चिकित्सा के क्षेत्र में इस्तेमाल के लिए मान्यता दी जा चुकी है। इन सभी आवृत्तियों में, 2450 मेगाहर्टज की आवृत्ति

माइक्रोवेव ओवेन में भी इस्तेमाल होती है। माइक्रोवेव डाइजेशन उपकरण में 600-700 वाट की ऊर्जा उत्पन्न होती है और इस प्रकार पाँच मिनटों में करीब 43000 कैलोरी ऊर्जा, माइक्रोवेव कैविटी में नमूने पदार्थ को गर्म करने के लिए दी जाती है। आजकल आधुनिक माइक्रोवेब डाइजेशन उपकरण में दो मैगनेट्रान के संयोजन से 1400 वाट तक की ऊर्जा के विकिरण उत्पन्न होते है जिससे कि जटिल से जटिल नमूनों जैसे-कोयला, उड़न राख (Flyash), मिट्टी इत्यादि का आसानी से डाइजेशन किया जा सकता है।

माइक्रोवेव उपकरणों में निहित लाभकारी गुणों के कारण ही यह आज लाखों घरों तथा प्रयोगशालाओं में सफलतापूर्वक काम में लाये जा रहे हैं। इससे समय की बचत के साथ-साथ ऊर्जा की भी बचत होती है। माइक्रोवेव विकिरण में पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा न होने के कारण यह किसी पदार्थ में आयनन द्वारा रासायनिक परिवर्तन नहीं कर सकते है। इसलिए यह अनआयनित विकिरण, एक्स किरणों एवं गामा किरणों की तुलना में काफी सुरक्षित है। आजकल के अत्याधुनिक माइक्रोवेव इतने सुरक्षित बनाये जा रहे हैं जो तनिक सी भी गड़बड़ी या लीकेज होने पर स्वतः ही बन्द हो जाते हैं और उपयोग करने वालों पर कोई भी दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है। आवश्यकता इस बात की है कि विज्ञान के इस अविष्कार से हम अधिक से अधिक काम ले सके और अपने नित्य प्रतिदिन के जीवन को खुशहाल बना सकें।

कॉस्मेटिक एवं टेल्काम पाउडर : जितना सुन्दर, उतना ही हानिकारक

डॉ. इकबाल अहमह

फाइबर टॉक्सिकोलॉजी डिवीजन, भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

टेल्क एक प्रकार का खनिज पदार्थ होता है, जिसे रासायनिक सूत्र में मैग्नीशियम ट्राईसीलिकेट कहते हैं। टेल्क कॉस्मेटिक एवं टेल्काम पाउडर का मुख्य अंश होता है। पाउडर विभिन्न प्रकार के होते हैं; जैसे बॉडी पाउडर, बेबी पाउडर, फेस पाउडर, आई शैडो पाउडर।

आजकल टेल्कम पाउडर का उपयोग सभी लोग करते हैं। इसका उपयोग खुशबू, त्वचा पर नमी बनाये रखने एवं आकर्षक दिखने के लिए किया जाता है। यह पाउडर हानिकारक रोग जैसे कैंसर एवं असबेस्टोसिस' भी उत्पन्न कर सकता है। सभी प्रकार के पाउडर में असबेस्टस के संक्रमण की संभावना होती है। आज की आधुनिक जीवनशैली में श्रृंगार त्वचा पाउडर का उपयोग पुरुषों, महिलाओं एवं बच्चों द्वारा किया जाता है। मानव समाज के प्रत्येक घर में इसका निरीक्षण किया गया है और पाया गया कि संसार के प्रत्येक समाज में पसीने इत्यादि के दुर्गंध से बचने के लिए बच्चों पर अक्सर इसका उपयोग किया जाता है।

प्राकृतिक रूप से जहाँ टेल्क की खदान होती है, वहीं पर कभी-कभी असबेस्टस भी पाया जाता है। असबेस्टस मानव में कई प्रकार के कैंसर का कारण होता है जैसे फेफड़ों का कैंसर, मेसोथिल्योमा (वो कैंसर जो प्ल्यूरा एवं परीटोनियम की परत में पाया जाता है)। श्रृंगार त्वचा पाउडर मानव समाज में दिन-प्रतिदिन अधिक से अधिक पसन्द किया जा रहा है। पाउडर के उपयोग से मनपसन्द खुशबू के साथ-साथ त्वचा में चिकनापन महसूस होता है। पसीना भी सोख लेता है, इसीलिए शरीर के बदबू दूर रहती है।

ऐसी आम धारणा है कि कैंसर कारण असबेस्टस का वितरण कार्यस्थल पर ही होता है जैसे असबेस्टस की खान, मिल एवं कारखाना। असबेस्टस का वितरण मानव स्वास्थ्य पर क्या दुष्प्रभाव डालता है और क्या-क्या रोग होते हैं, इस विषय पर देश और विदेश में काफी काम हुआ है। असबेस्टस वितरण दूसरे माध्यमों से भी होता है, जिसके बारे में बहुत कम ज्ञान मुख्यतः भारत एवं विकासशील देशों में हैं। श्रृंगार त्वचा पाउडर का उपयोग असबेस्टस के वितरण का एक मुख्य माध्यम है। आज की आधुनिक जीवन शैली में इस प्रकार के विभिन्न पाउडर से सभी परिचित है। इस प्रकार के पाउडर के उपयोग के उपरान्त पाउडर से सभी परिचित हैं। इस प्रकार के पाउडर के उपयोग के उपरान्त पाउडर कण वायु में मिश्रित हो जाते हैं एवं सांस लेने पर मानव के फेफड़े में प्रवेश कर जाते हैं। फेफड़े में पहुँचने वाले पाउडर कण टेल्क या असबेस्टस हो सकते हैं, क्योंकि इन पाउडर को बनाने में टेल्क का उपयोग होता है जिसमें असबेस्टस एक संक्रामक के रूप में हो सकता है। आई.ए.आर.सी. (2006) में एक अनुसंधान के फलस्वरूप यह पाया गया कि इस प्रकार के श्रृंगार त्वचा पाउडर के अत्यधिक उपयोग से कैंसर होने का भय रहता है। श्रृंगार त्वचा पाउडर का उपयोग महिलाएँ निजी भागों में भी करती हैं, जिससे इसके कण एवं फाइबर अण्डाशय तक पहुँच जाते हैं। असबेस्टस को कैंसर कारण व सह कैंसर कारण तत्व घोषित किया गया है। असबेस्टस के रेशे सांस द्वारा सीधे फेफड़ों में पहुँच जाते हैं जो फेफड़ों की झिल्की को नुक्सान

पहुँचाते हुए दीघकालीन बीमारी पैदा करते हैं जिसे असबेस्टोसिस के नाम से जाना जाता है और धीरे-धीरे यह रोग बढ़कर कैंसर जैसी जानलेवा बीमारी का रूप ले लेता है। असबेस्टस के रेशे काफी लम्बे समय (लगभग 15-20 साल) के बाद अपना प्रभाव दिखाते हैं। आई.ए.आर.सी. के अनुसार श्रृंगार त्वचा पाउडर में असबेस्टस संक्रमण मानव के फेफड़ों के लिए कैंसर कारक है। असबेस्टस वितरण उन महिलाओं में भी पाया गया है जिन्होंने अपने जीवनकाल में कभी पाउडर का उपयोग नहीं किया। गहन अध्ययन से ज्ञात हुआ कि उन्होंने अपने बच्चों पर पाउडर का उपयोग किया था। पाउडर के उपयोग उपरान्त वायु में कण एवं सूत आ जाते हैं। साँस लेने पर यह कण एवं सूत इन महिलाओं में भी पहुँच सकते हैं। असबेस्टस एक ऐसा कैंसर कारण खनिज है जो जीव मण्डल में बहुत लंबे समय तक रहता है। टेल्काम पाउडर स्त्रियों के अण्डाशय को भी हानि पहुँचाते हैं। गुप्तांग और पेड़ू पर जब टेल्कम पाउडर लगाये जाते हैं तो इसके कण ओवरी तक पहुँच सकते हैं। यहाँ तक कि निरोध पर लगाये गये पाउडर के कण भी अण्डाशय तक पहुँच सकते हैं। होता यह है कि गुप्तांग पर लगाए टेल्काम पाउडर के कण वैजीना, यूटरस और फीलोपियन ट्यूब होते हुए अण्डाशय तक पहुँच जाते हैं। इपीडीमियोलॉजिकल अध्ययन से साबित हुआ है कि टेलकम पाउडर उपयोग करने वाली औरतों में 50-90 प्रतिशत ओवरियन कैंसर का खतरा अधिक होता है। इसी कारण से सैनिट्री नैपकींस पर लगाए गए टेल्कम पाउडर भी ओवरीज़ तक पहुँच सकते हैं। टेल्कम पाउडर जब फेफड़ों में पहुँचता है तो उसे नुकसान पहुँचाता है। यहाँ तक कि कैंसर भी हो जाता है। टेल्क खदान में कार्यरत मज़दूरों में कैंसर का दर अधिक पाया गया है। इस बात की पुष्टि अनेकों अध्ययन से हो चुकी है। इसी प्रकार की पुष्टि टेल्क पीसने वाले मजदूरों में भी देखी गई है। ऐसा भी देखा गया है कि जो सर्जन हाथ के दास्तानों पर टेल्कम पाउडर लगाकर ऑपरेशन करते हैं, भीतरी अंगो पर टेल्कम पाउडर कण लग जाते हैं और कुछ दिनों बाद इन अंगों में ग्रेनलोमा जैसा कैंसर हो गया।

असबेस्टस एक स्थाई कैंसर कारक होने के साथ-साथ सरपेंटाइन और एम्फीबोल का उपखण्ड भी है। एम्फीबोल के प्रकार सरपेंटाइन से ज्यादा विषैले होते हैं। एम्फीबोल आकृति के अनुसार नुकीले रेशे होते हैं, जबकि सरपेंटाइन लहरदार रेशे होते हैं। इसलिए एम्फीबोल हमारे फेफड़ों में आसानी से और जल्दी से प्रवेश कर जाता है एवं अत्यंत हानिकरण होता है। असबेस्टस संक्रमण की खोज विकसित देशों में एवं कुछ विकासशील देशों में की गई थी। पीयोलिटी ने 1984 में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजार के श्रृंगार त्वचा पाउडर में रेशों का विश्लेषण व निरीक्षण किया और पाया कि इसमें असबेस्टस की मात्रा 0.03-22% है। इसी प्रकार कैसलर 1994 में श्रृंगार त्वचा पाउडर के 22 नमूनों की जाँच कर पाया कि एसबेस्टस के भिन्न-भिन्न मात्रा में संक्रमण है जो औसतन 19% है।

पहले की जानकारी के प्रकाश में 2007 में ब्रांडेड सौंदर्य एवं फार्मास्वीटिकल के 11 नमूनों में इस संस्थान के फाइबर टॉक्सिकॉलजी विभाग में देखा गया कि सभी पाउडर असबेस्टस के भिन्न-भिन्न स्तरों तक संदूषित हैं, जिसका औसत 12.5% है। आगे अध्ययन के लिए दूसरे 35 नमूनों को लिया गया। आश्चर्यजनक उनमें सभी असबेस्टस फाइबर से संदूषित पाए गए और उनमें से अधिकतर एम्फीबोल थे। हमारे नमूनों में

100% संदूषण था। दूसरे वैज्ञानिकों ने 42.8-100% संदूषण पाया है। (पियोलिटी ईट.ए.एल., 1994 एवं कैसलर 1994)। श्रृंगार त्वचा पाउडर की विषाक्तता पर आधारित संक्रमण पर अध्ययन साहित्य में नहीं दर्शाया गया है। इसलिए हमने इस दिशा में अनुसंधान का एक प्रयास किया है। त्वचा पाउडर को पिसाई मिल में तैयार किया जाता है और यह पाउडर श्रृंगार त्वचा पाउडर को बनाने में उपयोग होता है। पिसाई मिल से 10 नमूने प्राप्त कर विश्लेषण किया गया। टेल्क पाउडर के सभी 10 नमूनों में असबेस्टस का संदूषण पाया गया, जिनमें से अधिकतर में एम्फीबोल के रेशे उपस्थित थे। दिलचस्प बात यह है कि हमने संदूषित श्रृंगार त्वचा पाउडर को कोशिकानाशक पाया है। हमारा गहन अध्ययन यह दर्शाता है कि -

1. श्रृंगार त्वचा पाउडर में एसबेस्टस सूत का संदूषण है।
2. श्रृंगार त्वचा पाउडर में की विषाक्ता में संक्रामण का प्रभाव है।
3. श्रृंगार त्वचा पाउडर में असबेस्टस सूत का माप फेफड़ों के नीचे से ऊपर से भाग में पहुँचने की संभावित स्थिति का संकेत देता है।

हमारे देश में सभी प्रकार के टेल्क पाउडर पाये जाते हैं, जैसे त्वचा पाउडर, बेबी पाउडर, फेशियल पाउडर, आईशैडो पाउडर इत्यादि। किंतु इसमें असबेस्टस संदूषण की क्या स्थिति है, ज्ञात नहीं है। इस अज्ञानता के कारण एवं सामाजिक सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए संस्थान की प्रयोगशाला फाइबर टॉक्सीकोलॉजी ने शोध आरम्भ किया है। पहले चरण में कुछ भिन्न-भिन्न ब्राण्ड के टेल्क पाउडर बाज़ार से खरीदे गए, जिनका विश्लेषण किया गया कि इसमें असबेस्टस का संदूषण है कि नहीं? शोध से पता चलता है कि जिन 11 नमूनों का विश्लेषण हुआ है, सभी के सभी असबेस्टस संदूषण से युक्त हैं। सभी नमूनों में संदूषण का स्तर भिन्न था। औसतन सभी नमूनों का संदूषण 12.5 प्रतिशत था। इस चौंकाने वाले परिणाम से उत्साहित होकर अध्ययन को बढ़ाया गया। भिन्न-भिन्न ब्राण्ड के 35 नमूने बाजार से खरीदे गए। इन कॉस्मेटिक पाउडर पर गहन अध्ययन किया गया कि (1) इन नमूनों में असबेस्टस का क्या संदूषण है? (2) असबेस्टस पाउडर के प्रकार क्या है? (3) संक्रामकयुक्त पाउडर की विषाक्ता क्या संक्रामक स्तर पर निर्भर करेगी? इन सभी नमूनों का विश्लेषण यू.एस. -ई.पी.ए. विधि से किया गया। यह विधि फेज़ कंट्रास्ट पोलाराइज्ड लाइट ऑप्टीकल माइक्रोस्कोपी पर आधारित है। ये आसान और विकासशील देशों के लिए सस्सी एवं उचित है। ध्यान देने वाली बात यह है कि सभी 35 कॉस्मेटिक पाउडर असबेस्टस से संदूषित पाये गए। इनमें पाए जाने वाले असबेस्टस सूत की कुछ छाया चित्र संख्या 1-2 में दिखाई गई है। इन सभी कॉस्मेटिक पाउडर में संदूषण मात्रा भिन्न-भिन्न है, जिन्हें चित्र संख्या 5 में दर्शाया गया है। इन सभी कास्मेटिक पाउडर में संदूषण मात्रा 0.05 से 9.88% के बीच पाई गई है। असबेस्टस सूत दो रूप में बताए गए हैं-सरपेंटीन और एम्फीबोल। एम्फीबोल अधिक हानिकारक होता हैं इसलिए 35 नमूनों में दोनों ग्रुप के सूत का अध्ययन लाभदायक समझते हुए भी किया गया है। इनकी मात्राएं चित्र संख्या-6 में दिखाई गइ हैं। इन पाउडर नमूनों में दोनों ग्रुप के सूत का अध्ययन लाभदायक समझते हुए भी किया गया है। इनकी मात्राएं चित्र संख्या-6 में दिखाई गई हैं। इन पाउडर नूमनों में एम्फीबोल 89-100% एवं सरपेंटीन 0-14%

संदूषण पाए गए। असबेस्टस की लम्बाई भी विषाक्ता को प्रभावित करती है। इसलिए सभी पाउडर में पाए जाने वाले असबेस्टस सूत की लंबाई का भी अध्ययन किया गया। इन सूत को तीन चरणों में बांटा गया है- $>5\mu$m, $5-10\mu$m, एवं >10 5μm जिससे अनुमान किया जा सके कि असबेस्टस सूत सांस लेने पर फेफड़े के किस भाग में पहुँचने की क्षमता रखते हैं। इन 35 पाउडर में औसतन 12-48% सूत $<5\mu$m; 22-63% सूत $5-10\mu$m एवं 9-50% सूत >10 μm पाए गए (टेबल संख्या 1)। एक दिलचस्प अध्ययन किया गया कि संक्रामक पाउडर विषाक्त होता है। इसके लिए विभिन्न संक्रामक स्तर के पाउडर लिए गए और प्राइमरी हिपेटोसाइट कोशिकाओं पर इसका विषाक्त प्रभाव देखा गया (टेबल संख्या 2)। अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कॉस्मेटिक एवं टेल्कम पाउडर जितना संदूषित होता है, उतना ही विषाक्त होता है। जैसे पाउडर में जब संदूषण स्तर 1.06% है तो उस पाउडर की एलसी 50 वल्यू 515.8 μglml है। जिन पाउडर में संदूषण स्तर 3.89% एवं 9.88% है, उनकी एलसी 50 वैल्यूज 367.5 μglml एवं 288.3 μglml हैं (टेबल संख्या 2)। इस बिंदु को बल प्रदान करने के लिए विषाक्त का दूसरा मापदण्ड लैक्टेटडीहाइड्रोजिनेज के मापदण्ड पर भी अध्ययन किया गया। (टेबल संख्या 2)। इस बात की पुनः पुष्टि हो जाती है कि जितना संदूषण होगा, उतनी ही विषाक्ता होगी।

संस्थान के फाइबर टॉक्सीकोलॉजी विभाग में अध्ययन से यह भी स्पष्ट हो गया है कि कॉस्मेटिक पाउडर जिनका मुख्य अंश खनिज टेल्क होता हैं, में असबेस्टस संदूषण पाया गया है। इस बात का पता लगाने के लिए यह संदूषण कहाँ से आता है, टेल्क पाउडर का नमूना टेल्क मिल से प्राप्त किया गया एवं उसका अध्ययन किया गया। दस नमूनों के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि सारे के सारे असबेस्टस से संदूषित है। इसका डाटा यहाँ पर प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है।

(1) यदि संदूषित टेल्क का उपयोग श्रृंगार त्वचा पाउडर बनाने में किया जाए तो उपभोक्ता पर असबेस्टस के वितरण का प्रभाव दिखाई देगा। साधारणतया श्रृंगार त्वचा पाउडर का उपयोग शरीर पर छिड़कने के लिए किया जाता है एवं इसके परिणामस्वरूप श्रृंगार त्वचा कण वायु में मिश्रित होकर हमारे सांस लेने के स्थान के आस-पास पाये जाते हैं जो मानव द्वारा सांस लेने पर शरीर के अन्दर प्रवेश कर जाते हैं। हमारा अध्ययन यह दर्शाता है कि टेल्क श्रृंगार त्वचा पाउडर के संदूषण का मुख्य स्त्रोत है।

(2) जब कण फेफड़ों में पहुँच जाता है तो उसे बाहर करने की क्रिया आरंभ हो जाती है। ब्रांकियल टयूब्स जो फेफड़ों में हवा पहुँचाने एवं निकालने की क्रिया भी करती है एवं अधिक मात्रा में म्यूकस का रसाव करती है। फिर ब्रांकियल टयूब्स पर मौजूद कण को पीछे ढकेलता है जो म्यूकस के सहारे मुँह तले आ जाता है। मगर असबेस्ट के सूत कण आसानी से बाहर नहीं निकल पाते क्योंकि उसमें हुकदार सूत होते हैं तो फेफड़ों में मजबूती से चिपक जाते हैं। मैकूस एवं सीलिया इसे पीछे ढकेलने में असफल सिद्ध होते हैं। टेल्कम पाउडर के कण भी थोड़ा हुकदार होते हैं, इसलिए आसानी से बाहर नहीं निकाले जा सकते। इस प्रकार असबेस्टस और टेल्क दोनों के कण शरीर के अंदरूनी भागों में चिपकने की क्षमता रखते हैं।

(3) टेल्क की खानें पाई जाती हैं, इनमें कहीं-कहीं पर असबेस्टस भी प्राकृतिक रूप से मौजूद हो सकता है, ग्राइंडिंग मिल में ऐसे टेल्क की पिसाई से संदूषण पैदा हो जाता है। टेल्क को असबेस्टस से अलग करने के लिए इनकी ग्रेडिंग अलग-अलग करनी चाहिए। इसके आधार पर टेल्फ भिन्न-भिन्न प्रकार के औद्योगिक वस्तुओं में उपयोग किया जाता है जैसे कागज़, रबड़, कीटनाशक दवाइयाँ आदि। ऐसी वस्तुओं के लिए औद्योगिक ग्रेड वाले टेल्क का उपयोग करना चाहिए। इस ग्रेड के टेल्क असबेस्टस संदूषित हो सकते है लेकिन इनका मानव स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव की संभावना कम होती है। सौंदर्य ग्रेड वाले टेल्क का उपयोग केवल श्रँगार त्वचा पाउडर बनाने में ही करना चाहिए। इस ग्रेड के टेल्क में असबेस्टस संदूषण शून्य होना चाहिए।

इस परिस्थिति में ड्रग्स एण्ड कॉस्मेटिक एक्ट में संशोधन करना चाहिए कि कॉस्मेटिक एवं फार्माक्यूटिकल पाउडर में असबेस्टस का संदूषण बिल्कुल नहीं होना चाहिए। दुर्भाग्यपूर्ण इस बिन्दु पर हमारा एक्ट खामोश है। विकसित देशों में इस प्रकार के पाउडर में असबेस्टस संदूषण शून्य रखा गया। अब विकासशील देशों को भी चेतना चाहिए जैसे साउथ कोरिया। वहाँ 2009 में चेतना जागृत हुई एवं एक्ट बन गया कि कास्मेटिक एवं फार्माक्यूटिकल पाउडर का प्रयोग नहीं होगा। हुआ यह कि चीन देश से टेल्क पाउडर का आयात हुआ एवं पाउडर और औषधि बनाने में उपयोग किया गया। यह पता लग गया कि ये टेल्क पाउडर में असबेस्टस का संदूषण हैं और इससे निर्मित हज़ारों प्रकार के पाउडर एवं औषधियों को जिसकी करोड़ों डॉलर की कीमत थी, मार्केट से उठवा लिया गया और नष्ट कर दिया गया। इस प्रकार की संवेदना हमारे देश एवं सभी विकासशील देशों में होनी चाहिए कि मानव स्वास्थ्य से कोई खिलवाड़ न हो सके। इस समस्या का हल मनुष्य कर सकता है कि पाउडर का निर्माण केवल कॉस्मेटिक ग्रेड पाउडर से किया जाए। सरकार के स्तर पर भी कदम उठने चाहिए जैसे, (1) ड्रग एण्ड कॉस्मेटिक एक्ट में संशोधन किया जाए कि कॉस्मेटिक एवं फार्माक्यूटिकल पाउडर में असबेस्टस बिल्कुल नहीं होना चाहिए। (2) सरकार हर कम्पनी से हर पाउडर बैच की विश्लेषण रिपोर्ट किसी सरकारी संस्थान से कराकर जमा करने को कहे। (3) सरकार ऐसी व्यवस्था भी रखे कि मार्केट में बिक रहे पाउडर के नमूने भी बराबर जांचे जाएं कि पाउडर में किसी प्रकार का असबेस्टस संदूषण तो नहीं है।

कॉस्मेटिक पाउडर जैसे बेबी पाउडर, फेशियल पाउडर, आई शैडो पाउडर आदि का उपयोग स्त्री, पुरूष एवं बच्चे सभी करते हैं। यदि असबेस्टस का संदूषण नहीं रोका गया तो करोड़ों लोग असबेस्टस से वितरित होते रहेंगे। ध्यान देने की बात है कि असबेस्टस से रोग लक्षण 25-35 वर्षों बाद प्रकट होता है। जैसे, असबेस्टोसिस और विभिन्न प्रकार के कैंसर मुख्यतः मिस्थोल्यूमा नामक कैंसर प्रकट हो सकता है।

ऐसे विस्तृत अध्ययन पर विकासशील देशों में कोई रिपोर्ट नहीं है। यहाँ असबेस्टस संदूषण की कुछ रिपोर्ट दक्षिणी कोरिया से है, इन रिपोर्ट में असबेस्टस संदूषण की भौतिकी रासायनिक विशेषता की कमी है। अप्रैल 2009 में कोरिया फूड एण्ड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन (के.एफ.डी.ए.) ने पाया कि टेल्कम पाउडर बच्चों के लिए असबेस्टस से संदूषित है। के.एफ.डी.ए. के अनुसार इन संदूषित उत्पादों पर प्रतिबंध लगाया गया है एवं दूसरे उत्पादों के साथ टेल्क के उपयोग पर भी

रोक लगायी गई है। यह पाया गया है कि कुल 1122 दवाई एवं चिकित्सालय वस्तुएँ उपलब्ध हैं जो असबेस्टस संदूषित टेल्क से बनी है।

निष्कर्शतः विकासशील देशों एवं भारत में श्रृंगार त्वचा पाउडर की गुणवत्ता पर नियंत्रण एवं बाजार में उपलब्ध पाउडर का निरीक्षण होते रहना चाहिए। यदि यह नहीं किया गया तो मानव जनसंख्या में करोड़ों लोगों के साथ बच्चों में भी असबेस्टस वितरण का खतरा बना रहेगा।

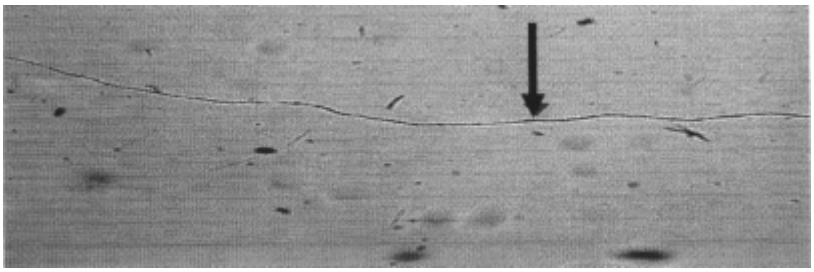

चित्र-1 : श्रृंगार त्वचा पाउडर में असबेस्टस सूत, एक सूत जो सर्पेन्टाइन प्रकार का है, तीर द्वारा दर्शाया गया है।

चित्र-2 : श्रृंगार त्वचा पाउडर में असबेस्टस सूत, एक सूत गुच्छा जो एम्फीबोल प्रकार का है, तीर द्वारा दर्शाया गया है।

नमूना संख्या	% असबेस्टस प्रतिशत	असबेस्टस प्रकार (प्रतिशत)		असबेस्टस सूत की लम्बाई (प्रतिशत)		
		% सर्पेन्टाइन	% एम्फीबोल	< 5 μm	5-10 μm	> 10 μm
1	8.81	0.13	99.87	12	41	47
2	3	10.06	89.94	32	55	13
3	9.79	0.79	99.21	26	28	46
4	5.3	0	100	29	35	36
5	9.88	1.36	98.64	48	42	10
6	5.3	0.61	99.39	38	51	11
7	6.54	0.4	99.6	29	55	16
8	1.55	4.99	95.01	46	38	16
9	7.95	0.75	99.25	38	42	20
10	1.34	3.16	96.84	30	55	15
11	6.37	1.76	98.24	21	62	17
12	5.54	0.99	99.01	25	36	39
13	1.09	14	86	12	41	47
14	0.85	5	95	32	55	13
15	2.18	9	91	26	28	46
16	1.35	17	83	29	35	36
17	1.65	4	96	48	42	10
18	0.05	10	90	38	51	11
19	0.88	7	93	29	55	16
20	0.56	11	89	46	38	16
21	1.32	2	98	38	42	20
22	0.22	8	92	30	55	15
23	8.81	0.13	99.87	24	51	25
24	3	10.06	89.94	34	46	20
25	9.79	0.79	99.21	19	31	50
26	5.3	0	100	18	53	29
27	9.88	1.36	98.64	31	22	47
28	5.3	0.61	99.36	26	54	20
29	6.54	0.4	99.6	30	61	9
30	4.79	1	99	22	63	15
31	3.85	4	96	25	35	40
32	2.4	2	98	25	50	25
33	2.29	3	97	32	45	23
34	2.71	4	96	18	32	50
35	3.89	3	97	20	54	26

टेबल 1 : श्रृंगार त्वचा पाउडर के 35 नमूनों में असबेस्टस का विश्लेषण डाटा दिया गया है। इसमें कुल मात्रा, सर्पेन्टाइन तथा एम्फीबेल मात्रा प्रतिशत में दिया गया है। असबेस्टस सूत की लम्बाई के अनुसार सूतो को < 5 μm, 5-10 μm एवं > 10 μm में ग्रुप किया गया और इनकी प्रतिशत मात्रा का विवरण भी है।

नमूना संख्या	IC50 वैल्यू	साइटोटॉक्सिसिटी (प्रतिशत)					पाउडर की विभिन्न मात्राओं द्वारा LDH का कोशिकाओं से रिसाव				
		0 µg	100 µg	500 µg	1000 µg	5000 µg	0 µg	100 µg	500 µg	1000 µg	5000 µg
1(1.06%)	515.8	99.4	9.6	20.7	39.5	54.4	98.7	108	118.2	135.2	158.6
2(3.89%)	367.5	98.8	13.2	22.5	42.7	61.8	98.4	110.5	121.7	139.4	162.4
3(9.88%)	288.3	99.2	19.6	27.4	46.3	66.4	99.2	112.3	129.6	156.5	170.5

टेबल 2 : असबेस्टस संदूषित पाउडर का यकृत कोशिकाओं पर विनाशकारी प्रभाव दिखाया गया है। इनकी IC 50 वेल्यू, साइटोटॉक्सिसिटी और LDH के रिसाव का विवरण दिया गया है।

क्लोरीनीकृत पेयजल : वरदान या अभिशाप

अमरेन्द्र धर द्विवेदी एवं कृष्ण गोपाल
जलीय विषविज्ञान, भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विकासशील देशों की विशाल आबादी के एक बड़े हिस्से को आज भी पीने का साफ पानी उपलब्ध नहीं है। जनसंख्या का यह हिस्सा विज्ञान और प्रौद्योगिकी की चहुँमुखी प्रगति के बावजूद विभिन्न जलजन्य बीमारियों का सत्रांस झेलने के लिए मजबूर है। लेकिन विकसित देशों की शहरी आबादी जो पीने के लिये साफ पानी प्राप्त कर पाती है क्या वह पूरी तरह सुरक्षित है?अमेरिकी वैज्ञानिकों द्वारा किये गये एक अध्ययन से तो यही संकेत मिलते हैं कि नहीं।

प्राकृतिक जल स्रोतों से प्राप्त किये गये पानी को रोगजनकों (Pathogens) और जीवाणुओं से मुक्त करने के लिये इसमें क्लोरीन मिलायी जाती है। पेयजल को साफ करने के लिये यह सबसे व्यापक पैमाने पर प्रयोग में लाया जाने वाला तरीका है और अब तक का सबसे प्रभावशाली तरीका भी शायद यही है, लेकिन एक नये अध्ययन से इस बात के संकेत मिलते हैं कि क्लोरीनीकृत पानी वाले व्यक्तियों में कैंसर उत्पन्न होने का खतरा सामान्य से अधिक है।

अमेरिकन जनरल ऑफ पब्लिक हेल्थ में प्रकाशित एक अध्ययन के आकलनों के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका में मूत्राशय के कैंसर के कुल मामलों में पन्द्रह मामलों में नौ प्रतिशत और मलाशय के कैंसर के कुल मामलों में पन्द्रह प्रतिशत का कारण लम्बे समय तक क्लोरीनीकृत जल का इस्तेमाल है यानी अमेरिका में हर साल मूत्राशय के कैंसर के 4200 और मलाशय के कैंसर के 6200 मामले क्लोरीनीकृत पानी के उपयोग के कारण होते हैं। अनुसंधानकर्त्ताओं का कहना है कि कैंसर उत्पन्न होने का अतिरिक्त खतरा सम्भवतः सीधे क्लोरीन के कारण नहीं होता बल्कि इसका खतरा वे कैंसरकारी यौगिक हैं जो क्लोरीन और जल में विद्यमान प्राकृतिक कार्बनिक पदार्थो के संयोग से उत्पन्न होते हैं (सारणी-1)। क्लोरीनीकरण (पानी को निष्कीटित करने की प्रक्रिया) के लिये क्लोरीन की औसत मात्रा 0.09 मिलीग्राम प्रति लीटर से 0.80 मिलीग्राम प्रति लीटर के मध्य होती है तथा अवशिष्ट सांद्रता 0.02 से 0.49 मिलीग्राम प्रति लीटर के मध्य होती है क्लोरीन की सम्पूर्ण मात्रा जो पानी को जीवाणु मुक्त बनाने के लिये आवश्यक होती है 'निष्कटित मात्रा' करते हैं। इसमें से क्लोरीन की कुछ मात्रा कार्बनिक पदार्थो, धातुओं आदि के द्वारा निष्क्रिय कर दी जाती है तथा शेष मात्रा 'क्लोरीन डिमांड' कहलाती है।

क्लोरीन डिमांड में से कुछ क्लोरीन पहले से पानी में उपस्थित अमोनिया से प्रतिक्रिया करके कैंसरकारी यौगिक क्लोरामीन बनाती है तथा पानी में मिलायी गयी कुछ क्लोरीन जो कि मानव शरीर में उपस्थित पाईरूविक एसिड के साथ क्रिया करके कार्बन टेट्राक्लोराईड और क्लोरोफार्म बनाती है। इन कैंसरकारी यौगिकों को संयुक्त रूप से ट्राई हैलोमीथेन्स (Trihalomethanes, THMs) कहते है। यह कैंसरकारी यौगिक मनुष्य के फेफड़ों, हृदय पर न सिर्फ बुरा प्रभाव डालते हैं बल्कि उन्हें नष्ट भी कर देते हैं। पेयजल में क्लोरीनीकरण उपोत्पादों के डब्ल्यू. एच. ओ. मानक सारणी-2 में प्रदर्शित है।

विस्कॉसिन मेडिकल कालेज के अनुसंधानकर्ताओं के अनुसार कैंसर और पेयजल में विद्यमान क्लोरीनीकरण के उत्पादों के प्रति उद्‌भासन के बीच सहसम्बन्ध मात्रा के स्तर के साथ ही बढ़ता प्रतीत होता है। उनका कहना है कि धूमपान, शहरी जीवन का रहन-सहन और कार्य करने की परिस्थितियाँ जैसे अन्य सम्भावित कारकों को ध्यान में रखने पर भी यह सह-सम्बन्ध कम नहीं होता। अध्ययन के परिणाम यह भी संकेत करते हैं कि अपेक्षित जोखिम इससे कहीं अधिक हो सकते हैं। धरती की सतह पर स्थित जल प्रणालियों में कार्बनिक सन्दूषकों की उपस्थिति अधिक सामान्य है। झील, नदी या तालाब के पानी में तरह-तरह के कार्बनिक पदार्थ मौजूद हैं। भू-जल (कुंओं का पानी) में ऐसे पदार्थ अल्पमात्रा में ही उपस्थित होते हैं, जैसे कुंओं के पानी में कार्बनिक पदार्थ अधिक मात्रा में उपस्थित नहीं होते, इसलिये भू-जल में क्लोरीन मिलाने पर वैसा खतरा नहीं उत्पन्न होता है जैसा कि सतह जल (नदी, झील और तालाब का पानी) में क्लोरीन मिलाने पर उत्पन्न हो सकता है।

सतह जल के उपयोग पर आश्रित अधिकतर जल आपूर्ति प्रणालियों में क्लोरीन का इस्तेमाल किया जाता है, जिससे संक्रामक रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणु और अन्य रोगजनकों को नष्ट किया जा सके। मूत्राशय और मलाशय उत्सर्जी पदार्थों को काफी समय तक भण्डारित रखते है। सम्भवतः इसीलिए दोनों ही अंग कैंसर के लिये अधिक सुभेद्य होते हैं। अमेरिकी पुरूषों में जिन पाँच प्रकार के कैंसरों का बाहुल्य है, उनमें मूत्राशय और मलाशय के कैंसर भी शामिल है।

अमेरिकन वाटर वर्क्स एसोसिएशन (AWWA) द्वारा किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार, अमेरिका की 276 वृहत् जलापूर्ति प्रणालियों में से 20 प्रतिशत द्वारा इस प्रक्रिया का उपयोग किया भी जा रहा है।

भारत के कई क्षेत्रों में घरेलू तथा सामुदायिक स्तर पर पेयजल के क्लोरीनीकरण के विकल्पस्वरूप चाँदी आयनीकरण अपनाया जा रहा है। क्लोरीनीकरण अपेक्षा चाँदी के आयनों द्वारा जल के निस्संक्रमण की प्रक्रिया अधिक सुविधाजनक व उत्कृष्ट है। चाँदी के आयनों द्वारा जल का निस्संस्करण अन्य विधियों से अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित है जैसा कि निम्नलिखित तुलनात्मक विवरण से स्पष्ट है (सारणी-3)।

चाँदी की आयनीकरण द्वारा जल निस्संक्रमण की विशेषता यह है कि न तो इससे कोई अपशिष्ट बनता है न जल पात्र का क्षरण होता है। इस प्रकार हम देखते है कि क्लोरीनीकरण की अपेक्षा चाँदी का उपयोग विशेषकर पेयजल निस्संक्रमण के क्षेत्र में विश्व स्तर पर एक सफल एवं सुरक्षित विद्यान सिद्ध हो सकता है।

सारणी : 1 क्लोरीन के द्वारा बनाये गये हैलोजन के बाई प्रोडक्ट्स -

क. ट्राईक्लोरोमीथेन (टी.एच.एम.)

क्लोरोफार्म
ब्रोमोडाईक्लोरोमीथेन
क्लोरोडाईब्रोमोमीथेन
ब्रोमोफार्म

ख. हैलोएसीटिक अम्ल (एच.ए.ए.एस.)

डाईक्लोरोएसिटिक एसिड
ट्राईक्लोरोएसिटिक एसिड
ब्रोमोक्लोरोएसिटिक एसिड
मोनोक्लोरोएसिटिक एसिड
डाईब्रोमोएसिटिक एसिड

मोनोब्रोमोएसिटिक एसिड
ट्राईब्रोमोएसिटिक एसिड
क्लोरोडाईब्रोमोएसिटिक एसिड

ग. हैलोएसिटोनायट्रिल्स (एच.ए.एन.एस.)

डाईक्लोरोएसिटोनायट्रिल्स
ब्रोमोएसिटोनायट्रिल्स
ब्रोमोक्लोरोएसिटोनायट्रिल्स
डाईब्रोमोएसिटोनायट्रिल्स
ट्राईब्रोमोएसिटोनायट्रिल्स

घ. अन्य आक्सीनीकृत बाईप्रोडक्ट्स

क्लोरेट
फ्लोरल हाईड्रेट
क्लोरोपिक्रिन
साइनोजन क्लोराईड
साइनोजन ब्रोमाईड

सारणी : 2 पेयजल में क्लोरीनीकरण उपोत्पादों के मानक

क्लोरीनीकरण उपोत्पाद		डब्ल्यू.एच.ओ. मानक (माइक्रोग्राम प्रति लीटर)
क. ट्राई हैलोनीथेन्स		
क्लोरोफार्म	($CHCl_3$)	200
ब्रोमोडाईक्लोरोमीथेन	($CHBrCl_2$)	60
ब्रोमोफार्म	($CHBr_3$)	100
डाईब्रोमोक्लोरोमीथेन	($CHBr_2Cl$)	100
ख. हैलोएसिटिक एसिड		
डाईक्लोरोएसिटिक एसिड	($Cl_2CHCOOH$)	50
ट्राईक्लोरोएसिटिक एसिड	(Cl_3CCOOH)	100
ग. हैलोएसिटोनाईट्राइल्स		
ड्राईक्लोरोएसिटोनाईट्राइल्स	(Cl_2CHCN)	90
घ. हैलोकार्बोनिल यौगिक		
क्लोरल	($CCl_3CHO.H_2O$)	10

सारणी : 3 विभिन्न तुलनात्मक जल निस्संक्रमण विधियाँ

प्रभाव	क्लोरीनीकरण	पराबैगनी विकिरण	पोटैशियम परमैंग्नेट अनुप्रयोग	चाँदी के आयन
दुर्गन्ध	√	×	×	×
पाइप क्षरण	√	√	√	×
सुरक्षित भण्डारण	√	√	√	×
विस्फोटी	√	√	√	×
वाष्पन	√	√	×	×
आवश्यक रख रखाव	√	√	×	×
नेत्र दुष्प्रभाव	√	√	√	×
केश विरंजन	√	√	×	×
त्वचा पर जलन	√	√	√	×
कैन्सरकारी	√	√	×	×
फेफड़े की विषाक्तता	√	√	√	×
ट्राईहैलोमेथेन निर्माण	√	√	×	×
क्लोरामीन निर्माण	√	√	×	×
शैवालध्न	√	√	√	√
जीवाणुध्न	√	√	√	√
विषाणुध्न	×	√	×	√
बायोफिल्म निर्माण	-	-	-	×
अवशिष्ट प्रभाव	-	-	-	√

सी.एस.आई.आर. भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधार परिषद्)

उपलब्ध सेवाएं :

- स्वास्थ्य तथा पर्यावरण अनुवीक्षण
- उपभोक्ता सुरक्षा
- विषाक्तता परीक्षण
- विश्लेषणात्मक सुविधाएं
- सूचना आंकड़े संकलन
  पर्यावरण प्रभाव का आंकलन
- परामर्शदाता
- हानिकारक व्यर्थ औद्योगिक कचरे का निस्तारण
- पर्यावरण प्रबंध योजना
- व्यावसायिक कर्मियों का स्वास्थ्य स्तर
- आपदा प्रबंधन हेतु तैयारी

विस्तृत जानकारी हेतु संपर्क करें :

निदेशक

सी.एस.आई.आर. भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

पोस्ट बाक्स नं. 80, महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ - 226 001

दूरभाष : 2627586, 2621856, 2611547, 2613786

फैक्स नं० : +91-522-2628227

ई० मेल : iitrindia@iitrindia.org